भगवत् सुधर्मा–प्रणीत : अष्टम अंग

सचित्र अन्तकृद्दशा-सूत्र

[शुद्ध मूलपाठ : हिन्दी-अंग्रेजी भावानुवाद तथा विवेचन]

सम्पादक

उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. के सुशिष्य

उप प्रवर्त्तक श्री अमर मुनि

सह सम्पादक

श्रीचन्द सुराना 'सरस'

प्रकाशक

पद्म प्रकाशन

नरेला मंडी, दिल्ली-40

सचित्र आगम प्रकाशन माला : द्वितीय पुष्प
आगम रत्नाकर आचार्य सम्राट पूज्य श्री आत्माराम जी म. के दीक्षा शताब्दी वर्ष के उपलक्ष्य पर प्रकाशित

सचित्र अन्तकृद्दशा सूत्र

सम्पादक
उप प्रवर्तक श्री अमर मुनि

सह सम्पादक
श्रीचन्द सुराना 'सरस'

अंग्रेजी अनुवाद
डॉ. ब्रजमोहन जैन

प्रथमावृत्ति
वि. सं. २०५० विजयदशमी (आश्विन शुक्ला १०) अक्टूबर-१९९३

मूल्य
चार सौ पच्चीस रुपया मात्र (रु. ४२५/-)

चित्रकार
सरदार पुरुषोत्तम सिंह

मुद्रक
मोहन मुद्रणालय, आगरा

मुद्रण सज्जा
दिवाकर प्रकाशन, आगरा-282 002

प्रकाशक एव प्राप्ति स्थान
- **श्री महेन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष)**
  पद्म प्रकाशन
  पद्मधाम, नरेला मण्डी, दिल्ली 40
- **रमेशचन्द जैन**
  पद्म निवास, जेड पी 1, प्रीतमपुरा, दिल्ली-३४
  फोन-7118351
- **दिवाकर प्रकाशन,**
  ए-७, अवागढ़ हाउस, एम जी रोड, आगरा 282 02
  फोन (0562) 54328, 52208

Bhagawat Sudharmā Swāmi–Compiled

ILLUSTRATED ANTAKṚD-DAŚĀ SŪTRA

[Accurate Original Text, Hindi-English version, Variant Readings; Elucidations and Sentimental Illustrations]

EDITOR

Uttar Bhāratīya Up-Pravarttaka Bhaṇḍārī Śri Padmachandrajī Mahāraja's disciple

Up-pravarttaka Śrī Amar Munijī

ASSISTANT EDITOR

Śrīchand Surānā 'Saras'

PUBLISHERS

PADMA PRAKASHAN

Narela Mandi, Delhi–40
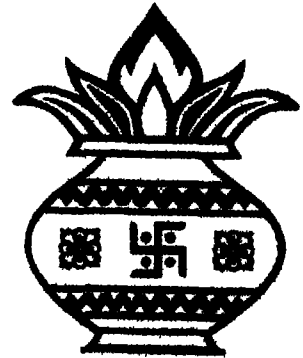
Illustrated Āgama Publication Series Publication No. 2
Published at the auspicious occasion of Consecration Centenary of Agam Ratnakar
Acharya Samrat Reverend Atmaramaji Maharaj

- **Illustrated Antakriddasha Sūtra**

- *Editor*
  Up-Pravarttaka Shri Amar Muniji
- *Assistant Editor*
  Srichand Surana 'Saras'
- *English version*
  Dr Brij Mohan Jain
- *Illustrations*
  Sardar Purusottam Singh
- *First Edition*
  V. Samvat 2050 Vijaya dashami (24 October 1993.)
- *Price*
  Rupees four hundred twentyfive 425/-Only.
- *Printer*
  Mohan Mudranalaya, AGRA
- *Design and Decoration*
  Diwakar Prakashan, Agra-282 002
- *Publishers and available at*
  - **Sri Mahendra Kumara Jain (*Chief.*)**
    Padma Prakashan
    Padma Dhama Narela Mandi, Delhi-40
  - **Ramesh Chand Jain**
    Padma Nivas 7 P 1 (first) Pritam pura, Delhi-40 (Phone 118351)
  - **Diwakar Prakashan,**
    A-7, Awagarh House M G Road, AGRA-282 002
    Phone (0562) 54328, 52208

आगम रत्नाकर परम श्रद्धेय
गुरुदेव स्व. आचार्य सम्राट
श्री आत्माराम जी महाराज

समर्पण

श्री अन्तकृद् दशा सूत्र

विनीत
आपका चरण-सेवक
भण्डारी पद्म चन्द्र मुनि
(उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक)

वैरागी श्री तरुणकुमार जैन

पूज्य गुरुदेव उत्तर भारतीय प्रवर्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी म. के भक्त श्री विजयकुमारजी जैन, फतेहाबाद वालों के सुपुत्र वैरागी तरुणकुमार एक होनहार तेजस्वी प्रतिभाशाली किशोर हैं। आपकी माता श्रीमति कान्ता जैन भी बड़ी धार्मिक विचारों की गुरुदेव की परमभक्त हैं।

आप उप-प्रवर्तक श्री अमरमुनिजी म. के निर्देशन में तथा श्री सुयश मुनिजी 'विद्यार्थी' के सान्निध्य में जैन धर्म, दर्शन और आगमों का अध्ययन कर रहे हैं। साथ ही संस्कृत-प्राकृत, अंग्रेजी आदि का भी अध्ययन कर रहे हैं।

श्रुत-सेवा में उदार सहयोगी भाग्यशाली सद्गृहस्थ

स्व. लाला बनारसीदासजी जैन, कलकत्ता (उरलाना वाले)

आप बड़े ही धार्मिक और उदार विचारों के गुरुभक्त श्रावक थे। पूज्य प्रवर्तक श्रीजी एवं श्री अमर मुनिजी म. के प्रति आपकी व समस्त परिवार की अटूट आस्था रही है। आपके सुपुत्र सात हैं :–

1. श्री महेन्द्रप्रसाद जैन, 2. डा. श्री पदमचन्द्र जैन 3. श्री रामनिवास जैन, 4. श्री निर्मलकुमार जैन, 5. श्री नवरतन जैन, 6. श्री राकेश कुमार जैन, 7. श्री अशोक कुमार जैन।

वर्तमान पता : पवन सुगर कम्पनी
4, रामकुमार रक्षित लेन, कलकत्ता–700 007

प्रकाशकीय
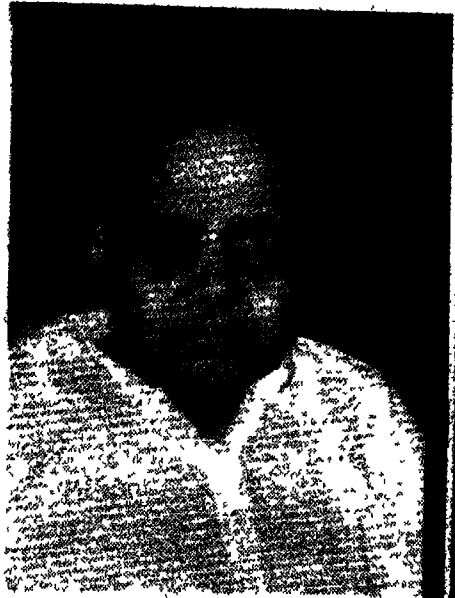
आगम रत्नाकर आचार्य सम्राट श्री आत्माराम जी म. ने जैन आगमों के प्रचार/प्रसार एवं अध्ययन अध्यापन की दृष्टि से जो अविस्मरणीय कार्य सम्पादन किया, वह जैन आगम साहित्य के इतिहास में सदा अमर रहेगा। उनकी प्रेरणा से तथा उन्हीं के कृत कार्य को आगे बढ़ाने में उनकी सुविज्ञ शिष्य परम्परा सदा अग्रणी रही है। उनके आगम रहस्यवेत्ता विद्वान शिष्यों ने जिनवाणी के अध्यात्म ज्ञान को जनव्यापी बनाने में अपने जीवन का बहुत बड़ा योगदान किया है। इसी पावन परम्परा में आचार्य सम्राट के विद्वान शिष्य पडित रत्न श्री हेमचन्द्रजी महाराज के सुशिष्य उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक गुरुदेव भण्डारी श्री पद्मचन्द्र जी महाराज का नाम भी सदा स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेगा।

प्रवर्त्तक गुरुदेव श्री भण्डारी जी म की प्रेरणा एवं आपश्री के विद्वान शिष्य उपप्रवर्त्तक श्री अमर मुनिजी म. के सम्पादन में "सूत्रकृतांग, प्रश्नव्याकरण, भगवती सूत्र (चार भाग) आदि विशाल आगमों का हिन्दी व्याख्या के साथ जो सुन्दर जनोपयोगी प्रकाशन करवाया है वह सर्वत्र समादृत हुआ है। आगम पाठको को उससे बहुत लाभ मिला है। आगम प्रकाशन की इसी महान शृंखला मे प्रवर्त्तक गुरुदेव श्री भण्डारी जी म. की भावना के अनुरूप उपप्रवर्त्तक श्री अमर मुनिजी म ने जैन आगमों का चित्रमय प्रकाशन करने की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण तथा सर्वथा अभिनव योजना का प्रारंभ किया है।

चित्र-दर्शन से विषय-वस्तु का बोध शीघ्र हो जाता है। इसलिए ज्ञान वृद्धि में चित्रों का एक अलग महत्व है। आगमों का सचित्र प्रकाशन जहाँ एक बहुत विशाल और व्ययसाध्य कार्य है, वहाँ इसका ऐतिहासिक महत्व भी है। आने वाले युगो में तथा जहाँ पर जैन श्रमण-श्रमणियाँ नहीं पहुँचते हैं, वहाँ पर इन चित्रमय आगमों से जनता जैन धर्म, सस्कृति, परम्परा और तत्त्वस्वरूप को बहुत ही आसानी से समझ सकेगी–यह निस्सदेह कहा जा सकता है। इसी दूरदृष्टि को और भविष्य के सुन्दर परिणाम को ध्यान में रखकर गुरुदेवश्री की कृपा से हमने जैन आगम शास्त्रों का चित्रमय प्रकाशन प्रारंभ किया है।

गतवर्ष हमने भगवान महावीर की अन्तिम देशना श्री उत्तराध्ययन सूत्र का चित्रमय भव्य प्रकाशन किया है। इस प्रकाशन को सभी ने बहुत पसन्द किया, मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा भी की है। अब अपेक्षा है कि इस प्रकार का श्रेष्ठ और मूल्यवान साहित्य प्रत्येक पुस्तकालय, स्थानक, उपाश्रय और मन्दिर में पहुँचे, लोग इसे अपनी अलमारी में सजाकर भी रखें और समय-समय पर स्वाध्याय करके लाभान्वित भी हों। आज नहीं तो कल ऐसा समय आयेगा, जब शास्त्रप्रेमी श्रावक साधु-साध्वी इस प्रकार के भव्य मनोरम साहित्य को पढ़ने के लिए मंगाने की प्रेरणा देगे और इसके व्यापक प्रचार में सहयोगी बनेंगे।

हम इस वर्ष अष्टम अंग श्री अन्तकृद्दशा सूत्र का चित्रमय प्रकाशन कर रहे हैं। सामान्य प्रकाशन से चित्रमय प्रकाशन लगभग दस गुना अधिक मंहगा पड़ता है। इस कारण प्रकाशन में लागत बहुत अधिक आती है और उसका मूल्य भी अधिक रखना पड़ता है। किन्तु फिर भी हम लागत मूल्य पर ही इसे घर-घर पहुँचाने का प्रयास करते हैं।

इस आगम सम्पादन मे श्रद्धेय उपप्रवर्त्तक श्री अमर मुनिजी म. ने बहुत ही श्रम किया है । उन्हीं के निर्देशन मे प्रसिद्ध विद्वान तथा जैन चित्रमय साहित्य के मर्मज्ञ श्रीचन्दजी सुराना "सरस" ने एक वर्ष के सुदीर्घ परिश्रम पूर्वक इस भव्य कृति को परिपूर्ण किया है तथा डॉ ब्रजमोहन जैन ने मूलानुसारी, सरल शब्दों और प्रवाहपूर्ण शैली में अंग्रेजी भाषा में अनुवाद किया है । उनके श्रम के प्रति हमारी संस्था सदा कृतज्ञ रहेगी ।

उप-प्रवर्त्तिनी श्री आज्ञावती जी म. तथा उप-प्रवर्त्तिनी श्री स्वर्णकान्ता जी म की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन तो मिला ही है । उनकी सत्प्रेरणा से उदार सद्‌गृहस्थों ने प्रसार में सहयोग भी प्रदान किया है । गुरुदेव श्री के अनेक भक्त सद्‌गृहस्थो ने भी अपनी भावना के अनुसार बड़ी प्रसन्नता और सहज श्रद्धा के रूप में सहयोग प्रदान कर हमारे कार्य को सुलभ बनाया है, हम उन सबके प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं ।

चित्रकार 'सरदार पुरुषोत्तम सिंह' तथा मुद्रक 'मोहन मुद्रणालय', आगरा का भी धन्यवाद करते हैं । जिनका सहयोग हमें प्राप्त होता रहा है ।

आशा है सचित्र आगम प्रकाशन की योजना का समाज में, देश व विदेश में, स्वागत होगा और यह आगम अपने आप ही अपनी उपयोगिता से जनग्राह्य बनेगा ।

महेन्द्र कुमार जैन (अध्यक्ष)

पद्‌म प्रकाशन,
नरेला मण्डी दिल्ली-४०

श्रुत-सेवा में उदार सहयोगी भाग्यशाली सद्गृहस्थ

श्री विजय कुमार जी जैन

(मोतियाँ वाले) वीर नगर, दिल्ली

आप वीर नगर स्था. जैन सघ के प्रधान हैं तथा अनेक समाज सेवी संस्थाओं से सम्बद्ध एवं सहयोग दाता हैं। आप हृदय से उदार, मधुरभाषी और दानवीर श्रावक हैं। आपश्री ने सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र का विमोचन कर प्रथम प्रति गुरुदेव श्री को समर्पित की थी।

श्री वजिन्द्र कुमार जी जैन

नीरू होजरी, जनता गली, गाँधी नगर, दिल्ली-31

आप समाज के कर्मठ नेता हैं, दानवीर और गुरूभक्त श्रावक हैं। घोर तपस्विनी श्री मोहनमाला जी महाराज की सत्प्रेरणा से आपने शास्त्र प्रकाशन मे उदार सहयोग प्रदान किया है।

श्री मुकेश कुमार जी जैन

बी-5, सत्यवती कालोनी, 3 अशोक विहार, दिल्ली-53

आप स्व. श्री विजयकुमारजी जैन के सुपुत्र, पूज्य गुरूदेव प्रवर्त्तक श्री भण्डारीजी म. एव उपप्रवर्त्तक श्री अमरमुनिजी म के परमभक्त हैं। धार्मिक एव सामाजिक कार्य मे उदार मन से सहयोग देते रहते हैं।

श्री विनयकुमार जी जैन

(जींधन वाले) पानीपत

आपके पूज्य पिताश्री हरिचन्दजी जैन, गुरुदेव के भक्त श्रावक हैं। आप भी उत्साही युवक हैं। उदार हृदय से धर्म एवं समाज-सेवा में सहयोगी बनते हैं। पूज्य गुरुदेव के प्रति आपकी समस्त परिवार की अटूट आस्था है।
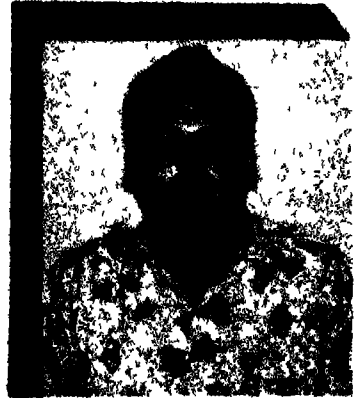
PUBLISHER'S NOTE

Āgama Ratnākara, Acārya Samrāt Śrī Ātmārāmaji Mahārāja, for promulgation and expansion, studying and teaching the holy scriptures (*Āgamas*) has done the unoblivious work of editing, that will be everlasting in the history of Jain Āgama literature. His disciple tradition remain always foremost, by his inspiration to forward the work done by him His disciples, who are erudite and well versed in the secret points of *Āgamas* contributed their important life time to make the spiritual knowledge understandable to general public by the medium of words of Jinas or Jain scriptures. In this tradition, learned disciple of *Ācārya Samrāt, Panditaratna Śrī Hemacandrji Mahārāja's* disciple, *Uttar-Bhāratīya Pravarttaka Gurudev Bhandārī Śrī Padmachandraji Mahārāja's* name will also be written in golden letters for a long period

By the inspiration of *Pravarttaka Gurudeva Śrī Bhandārīji Mahārāja* and under the editing of his learned disciple *up-pravarttaka Śrī Amar Muniji Mahārāja,* we have published the great *Āgamas* like *Sūtrakrtānga, Praśnavyākarana Bhagawati sūtra* (four parts) etc , with Hindi commentary, which are very beautiful and beneficial to average persons and these are warmly appreciated by all *Āgama*-readers became more advantageous by these publications In the same gracious series of *Āgama*-publication, according to the desire of *Pravarttaka Gurudeva Śrī Bhandārījī Mahārāja,* his worthy disciple *up-pravarttaka Śrī Amar Munijī* has started an important and ultimate new planning of publishing *Illustrated Jain Āgamas*

One can easily grasp the subject matter by viewing the illustration (picture) Therefore illustrations are of gret importance in knowledge-increasing Publication of *Illustrated Āgamas* is too much costly but it has its historical importance also In the forthcoming ages, and at the places where Jain sages and nuns cannot approach, in those regions the laymen could be easily aware of Jain religion, culture, tradition and conception of elements and doctrines by these *Illustrated Āgamas*, it can be said with due force With this far sight and good consequences of future, we have started the publication of *Illustrated Agamas* by the grace of *Gurudeva*

Last year (V 2049) we have published *Illustrated Uttarādhyayana sūtra,* the last religious sermon of *Bhagawāna Mahāvīra* It is cordially appreciated and liked by all. Now it is anticipated that such best and costly literature should be available in each and any library, temple and religious places like–*sthānaka, upāśraya* etc People should keep it in their almirahas with display, and should take advantage by studying oft and often If not today, yesterday the time will definitely come, when sages, nuns and the

householders–fond of reading canons, will inspire to purchase, and read such splendid and heart-attracting literature and will co-operate in its promulgation and expansion

This year we are publishing *Illustrated Antakriddaśā Sūtra*–the eighth *aṅga of Dwādaśāṅgī*. This illustrated (pictorial) publication costs ten times more than general or ordinary publication As such, being more costly, we are compelled to keep more price, still we are trying our best to despatch it on cost price in every house

In editing this *Āgama*, venerable *up-pravarttaka Śrī Amar Munijī Mahārāja* made much efforts Under his guidance and direction, *Śrīchand Surānā 'Saras'*, the famous learned man and specialist of illustrated publications has completed this splendid creation, by his riorgous effort of one year *Dr Brij Mohan Jain* of Agra has given fluent, to the point and accurate English version to this splendid publication For their cordial and co-operative efforts, we will always remain obliged

We got the inspiration and guidance of *up-pravarttinī Srī Ajaññāvatījī Mahārāja* and *up-pravarttinī Śrī Swarnakāntājī Mahārāja* and they also co-operated us in promulgation and expansion of this publication by inspiring liberal auspicious householders Many fervent devotees and meritorous householders of *Gurudevaśrī*, gladly gave us-co-operation according to their means, desire and devotion, and thus made our efforts to take practical shape We pay them cordial thanks and obligations

Artist S Purusottam Singh and printer Mohan Mudranalaya of Agra, gave us co-operation in drawing illustrations and printing, they also deserve our thanks

It is anticipated that our planning of publishing *Illustrated Āgamas* will fetch welcome and respect from society, our nation and from foreign countries, and this *Āgama* will itself prove its utility and so will get warm welcome from general public

Mahendra Kumar Jain *(chief)*

Padma Prakshan
Narela Mandi,
Delhi-40

प्राक्कथन

संसार में आज धर्म, आत्मा और परमात्मा विषयक जो भी चिन्तन, मनन एवं प्रवचन उपलब्ध है, उसका सर्वप्रथम प्रादुर्भाव भारत की तपोभूमि पर ही हुआ था । प्रागैतिहासिक काल से ही इस भारत भूमि पर दो प्रकार की विचारधाराएँ, दो संस्कृतियाँ गंगा-यमुना की भांति प्रवाहशील रही हैं । एक है-श्रमण संस्कृति और दूसरी ब्राह्मण संस्कृति । दोनों ही संस्कृतियों का लक्ष्य है-जीवन का चरम विकास, आत्मा का कल्याण । यद्यपि जीवन के अन्तिम ध्येय-निर्वाण या परम आत्म-सुख के विषय में दोनों सस्कृतियों के चिन्तन में पर्याप्त अन्तर है । इसी अन्तर के कारण तो दोनों संस्कृनियाँ दो धाराओं में प्रवाहित है । श्रमण सस्कृति निर्वाणवादी सस्कृति रही है, जबकि ब्राह्मण संस्कृति के समग्न क्रिया कांड स्वर्ग के आस-पास ही परिक्रमा करते है । इसी कारण आचार एवं विचार सम्बन्धी प्रक्रिया में भी अन्तर रहा है । श्रमण संस्कृति त्याग एवं तप प्रधान रही है । ब्राह्मण संस्कृति कर्म एवं योग प्रधान रही है । श्रमण संस्कृति के चिन्तन का आधार है-आगम, जिन्हे "श्रुत" कहा जाता है । ब्राह्मण संस्कृति का आधार है-वेद, जिन्हें "श्रुति" कहा गया है ।

ब्राह्मण सस्कृति ईश्वरवादी संस्कृति रही है, वहाँ निर्वाण का अर्थ है-जीव का ईश्वर में विलय, और अद्वैतवाद की दृष्टि में ब्रह्म मे विलय हो जाना ही निर्वाण है ।

श्रमण सस्कृति की एक धारा-बौद्ध संस्कृति भी निर्वाण में विश्वास अवश्य करती है, परन्तु उसके निर्वाण की परिभाषा है-बुझ जाना । जो संतति चल रही है उसका समाप्त हो जाना-"दीपो यथा निर्वृति मभ्युपेत – जैसे दीपक जलता-जलता बुझ जाता है, वैसे ही जीव, आत्मा, पुद्गल, वासना, आदि का संतान प्रवाह का समाप्त हो जाना निर्वाण है । इस प्रकार एक में मोक्ष का अर्थ है-विलय, तो दूसरी में मोक्ष का अर्थ है-समाप्त हो जाना ।

श्रमण सस्कृति अर्थात् जैन संस्कृति प्रारभ से ही निर्वाणवादी या मोक्षवादी रही है । यहाँ माना गया है-'निव्वाण सेट्ठा जह सव्व धम्मा'- समस्त धर्मों में निर्वाण ही परम श्रेष्ठ धर्म है । भगवान महावीर निर्वाणवादियों में सर्वश्रेष्ठ माने गये हैं-

"णिव्वाणवादीणिह णायपुत्ते" ।

जैन धर्म में निर्वाण का अर्थ वड़ा तर्कसंगत और वैज्ञानिक हैं । भगवान महावीर की दृष्टि से-

निव्वाण ति अबाहं ति सिद्धी लोगग्गमेव य,
खेमं सिवं अणाबाह तं चरंति महेसिणो ॥ (उत्तराध्ययन-३२/८३)

निर्वाण का अर्थ है-सर्व बाधाओं से रहित, अव्याबाध सुख, सर्वकर्म आवरणों से रहित-चिन्मय चिदानन्द स्वरूप का प्रकट हो जाना ।

अनन्त ज्ञानमय, अनन्त आनन्दमय आत्म-स्वरूप की उपलब्धि निर्वाण है । ऐसा निर्वाण ही प्रत्येक आत्मा का चरम लक्ष्य है । इसी निर्वाण के लिए आत्मा त्याग, तप, ध्यान, आदि का आचरण करता है, साधना करता है । साधना का सफल या कृतार्थ हो जाना ही सिद्धि है । सिद्धि प्राप्त करना ही प्रत्येक आत्मा का उद्देश्य है ।

निर्वाण या सिद्धि प्राप्त करने के लिए त्याग, तप एवं ध्यान का मार्ग बताया गया है । विहंगम दृष्टि से देखने पर पता चलता है, ब्राह्मण संस्कृति में ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए "योग" मार्ग का विधान किया गया है, बौद्ध दर्शन मे ध्यान मार्ग पर बल दिया गया है और श्रमण या जैन संस्कृति मे "तप मार्ग" का निरूपण है । "तप" मे योग एवं ध्यान दोनों ही समाहित हैं । तप के बारह भेदों में काय-क्लेश तप योग-मार्ग की साधना का रूप है तो ध्यानतप ध्यान-मार्ग का स्वरूप बताता है । "तप" में योग भी है और ध्यान भी है । इसलिए श्रमण संस्कृति तपस्वियों की संस्कृति रही है । तप·साधना ही श्रमण संस्कृति का सार है । "तप" श्रमण सस्कृति की पहचान है । जैन धर्म की आत्मा है–तप ।

अन्तकृद्दशा सूत्र

परिचय–तप.साधना के विशिष्ट रूप और स्वरूप पर प्रकाश डालने वाले जैन आगमों में अन्तकृद्दशा सूत्र का अपना विशेष महत्व है । इसका नाम ही "तप" की फलश्रुति का सूचक है । "तप" शरीर को सुखाने के लिए नहीं किया जाता । तप का उद्देश्य है–आत्मा के साथ लगे हुए कर्म आवरणो को तपाकर/जलाकर भस्म कर देना । जैसे–सोने के साथ लिपटी हुई मिट्टी आदि अन्य रसायन, अग्नि मे तपाने से भस्म हो जाते हैं और सोना "कुन्दन" या शुद्ध स्वर्ण बन जाता है, इसी प्रकार तप से संपूर्ण कर्मों की निर्जरा हो जाने पर आत्म स्वरूप की उपलब्धि हो जाती है । इस प्रकार तप.साधना से समस्त कर्मों का अन्त–नाश किया जाता है । कर्मों का नाश हो जाने से जन्म–मरण की भव-परम्परा का भी नाश हो जाता है–**कम्मं च जाई मरणस्स मूलं**–जन्म और मरण का मूल कर्म है । कर्म-नाश होने पर जन्म और मृत्यु के बंधन स्वयं टूट जाते हैं । भव–परम्परा का अन्त हो जाता है ।

"अन्तकृद्दशा–सूत्र" का शब्दार्थ भी यही है कि भव परम्परा का अन्त करने वाली आत्माओं की दशा, स्थिति, अवस्था तथा उनकी साधना का वर्णन करने वाला आगम है–अन्तकृद्दशा·सूत्र । अन्तकृद्दशा सूत्र में भव-परम्परा का उच्छेद करके निर्वाण प्राप्त करने वाले ९० साधकों की कठोर साधना, तपश्चर्या और ध्यान–योग की साधना का रोमाचक वर्णन है ।

अन्तकृद्दशा सूत्र–आगमों में आठवाँ अंग है । इस सूत्र के आठ वर्ग हैं और इसमें वर्णित सभी पात्र–आठ कर्मों का क्षय करके निर्वाणगामी हुए हैं इसलिए जैन शासन में पर्युषण के आठ दिनों में इस शास्त्र के वाचन की प्राचीन परम्परा प्रचलित है ।

भाषा–इस आगम की भाषा–अर्धमागधी है । शास्त्रों में बताया है–तीर्थंकर देव, गणधरों तथा देवताओं की प्रिय भाषा अर्धमागधी है । इसलिए यह सर्वप्रिय भाषा है । सभी जैन सूत्रों की भाषा अर्धमागधी है ।

शैली—जैन सूत्रों में जिन सूत्रों में आत्मा कर्म आदि तात्त्विक विषयों की प्रधानता है, वे द्रव्यानुयोग विषयक कहे जाते हैं। जिनमें आचार, समाचारी आदि का वर्णन है—वे आगम चरणानुयोग प्रधान हैं। जिनमें गणित, लोक, भूगोल, खगोल, नदी–पर्वत आदि का वर्णन है—गणितानुयोग में उनका समावेश हो जाता है। तथा जिन आगमों में चरित या कथा शैली की प्रधानता है वे "कथानुयोग" प्रधान आगम माने गये हैं।

ज्ञाताधर्मकथा, उपासकदशा, अनुत्तरौपपातिकदशा, विपाक, निरयावालिका तथा अन्तकृद्दशा सूत्र आदि कथा या चरित्र प्रधान आगम होने से इनकी गणना कथानुयोग में की जाती है।

वर्ण्य विषय—प्रस्तुत आगम में नब्बे (९०) साधक आत्माओं की साधना का रोचक वर्णन है। सामान्य रूप में यह तप:प्रधान आगम माना जाता है, परन्तु सम्पूर्ण आगम के विषय पर चिन्तन करने से तप, ध्यान, ज्ञानार्जन, क्षमा आदि सभी को मोक्ष मार्ग मानते हुए सबका समन्वय है इसमें—

● गौतमकुमार आदि १८ मुनियों ने १२ भिक्षु प्रतिमा तथा गुणरत्नसंवत्सर तप करके मुक्ति प्राप्त की।

● अनीकसेन आदि १४ मुनि १४ पूर्व का ज्ञान प्राप्त कर बेले-बेले के सामान्य तप द्वारा ही कर्मक्षय कर मुक्ति के अधिकारी बने हैं।

● अर्जुनमाली जैसे साधक सिर्फ छह महीने तक बेले-बेले तप करके, उत्कृष्ट उपशम भाव-क्षमा-सहिष्णुता-तितिक्षा की आराधना द्वारा सिद्धगति प्राप्त करते हैं।

● अतिमुक्त कुमार जैसे बाल ऋषि ज्ञानार्जन करके गुणरत्नसंवत्सर तप की आराधना करते हुए दीर्घकालीन संयम पर्याय का पालन कर मोक्ष पधारते हैं।

● गजसुकुमाल मुनि बिना शास्त्र पढ़े, सिर्फ एक अहोरात्र की अल्पकालीन संयम पर्याय में ही परम तितिक्षा भाव पूर्वक समता भाव में रमण करते हुए शुक्ल ध्यान के साथ मोक्ष प्राप्त करते हैं।

● नन्दा, काली आदि रानियों ने कठोर तप:साधना एवं दीर्घकालीन संयम पर्याय का पालन कर कर्मों का नाश किया है।

इस प्रकार तप, संयम, शम, क्षमा, ध्यान आदि मोक्ष के सभी अंगों की सर्वांग साधना का सुन्दर समन्वय इस आगम में प्राप्त होती है।

प्रस्तुत सूत्र का आदर्श

इस शास्त्र के परिशीलन से पद-पद पर तप, क्षमा एवं शुद्ध ध्यान की विशेष प्रेरणा स्फुरित होती है। इसके साथ ही कुछ विशिष्ट आदर्श चरित्रों की विशेष प्रेरणाएँ भी हमें जीवन्त आदर्शों की ओर संकेत करती हैं; जैसे—

१. वासुदेव श्रीकृष्ण के समान धर्म में दृढ़ विश्वास और गुणों के आदर की भावना तथा धर्म सहायक बनने की उदात्त वृत्ति।

२. भोगों से विरक्त होकर त्याग वृत्ति की प्रेरणा देता है--वासुदेव श्रीकृष्ण की आठ पटरानियों का संयम ग्रहण ।

३ गजसुकुमाल मुनि का उज्ज्वल चरित्र धैर्य, दृढ़ता, कष्ट-सहिष्णुता और परम तितिक्षा भाव का पाठ पढ़ाता है ।

४. सुदर्शन श्रावक का चरित्र, अपने आराध्य देव के प्रति परम समर्पण भाव, आत्मविश्वास और धर्मतेज का सूचन करता है ।

५. अर्जुनमाली का मुनिजीवन--अद्भुत सहनशक्ति और उपशम भाव की आराधना की ओर इंगित करता है ।

६ महाराज श्रेणिक की काली आदि रानियों की तपश्चर्या का वर्णन शरीर-ममत्व से मुक्त होकर **"तवसा धुणाइ पाव कम्मं"**--का आदर्श उपस्थित करता है ।

७ बाल मुनि अतिमुक्तकुमार का रोचक वर्णन--जीवन में सरलता, भद्रता और विनयपूर्वक प्रश्नोत्तर शैली का सुन्दर संकेत करता है ।

इस प्रकार प्रस्तुत आगम अनेक प्रकार के जीवन्त आदर्शों को उपस्थित करके निर्वाण की समुज्ज्वल साधना करने का मार्ग प्रशस्त करता है । इसका पठन-श्रवण जीवन में सभी के लिए कल्याणकारी है ।

प्रस्तुत सम्पादन

आज जैन समाज में अन्तकृद्दशा सूत्र का वाचन/पठन भी सबसे अधिक होता है और इस आगम का प्रकाशन भी अनेक संस्थाओं द्वारा अनेक रूपों में हुआ है । इस पर विस्तृत टीकाएँ और व्याख्याएँ भी प्रकाशित हुई है तो कहीं-कहीं से मूल पाठ, भावानुवाद और कहीं से सिर्फ मूल पाठ ही ।

इस प्रकार छोटे-बडे अनेकों संस्करण प्रकाशित हुए है । सभी की अपनी उपयोगिता है । हिन्दी भाषा के अतिरिक्त गुजराती भाषा में अनेक सुन्दर संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं । अंग्रेजी में भी श्री मोदी का प्रकाशित सस्करण मेरे देखने में आया है । पाठक पूछेंगे फिर इस संस्करण की क्या विशेषता है ?

सचित्र आगम प्रकाशन

हमने गत वर्ष श्रद्धेय पूज्य गुरुदेव उत्तर भारतीय प्रवर्त्तक भण्डारी श्री पद्मचन्द्रजी म. के हीरक जयन्ती वर्ष के उपलक्ष्य में सचित्र आगम प्रकाशन का संकल्प किया था । आगमों का सचित्र प्रकाशन अपने आप में एक ऐतिहासिक कार्य है और इसकी अपनी महत्ता भी है । आज प्राचीन हस्तलिखित आगमों में कल्पसूत्र तथा उत्तराध्ययन सूत्र की चित्रमय प्रतियाँ किसी-किसी ज्ञान भण्डार में उपलब्ध हैं, ऐसा सुना जाता है; तथा यह भी सुनने में आता है कि उन चित्रमय आगमों की एक-एक प्रति का मूल्य २०-२५ हजार से भी अधिक आँका गया है । ऐसे दुर्लभ चित्रित आगम प्राप्त होना तो बड़ी बात है, उनके दर्शन भी अत्यन्त दुर्लभ हैं । फिर भी हर एक आगम जिज्ञासु की भावना होती है कि चित्रमय आगमों के दर्शन हमें भी प्राप्त हों । उनकी उपलब्धि भी हो ।

यह तो सुनिश्चित है कि चित्र से गंभीर से गंभीर विषय भी बड़ी सहजता के साथ समझ में आ सकता है। चित्र अरूप को स्वरूप प्रदान करता है। दुर्बोध को सुबोध बनाता है। एक चित्र हजारों श्लोकों से भी अधिक प्रभावशाली बन जाता है। कुल मिलाकर आज की शिक्षा पद्धति में चित्रों की उपयोगिता और आवश्यकता बढ़ती ही जा रही है।

आगमों का चित्रमय प्रकाशन यद्यपि बहुत मंहगा पडता है। चित्रों के निर्माण में परम्परा एवं आगम की मर्यादा का भी ध्यान रखा जाता है। तथा चित्र निर्माण से लेकर रंगीन मुद्रण तक की समूची विधि बहुत ही खर्चीली होती है। इस कारण आगमों का सचित्र संस्करण साधारण संस्करण से बहुत अधिक मंहगा पड जाता है। सामान्य पाठक उसे खरीदने मे असमर्थता भी अनुभव करता है। इन सभी कठिनाइयों का समाधान भी हो सकता है और इस पर समाज चिन्तन भी कर रहा है। फिर भी सचित्र प्रकाशन और वह भी हिन्दी एवं अंग्रेजी अनुवाद के साथ अन्य प्रकाशनों से अधिक दर्शनीय, पठनीय, एवं भव्य होता है, यह निस्सन्देह माना जायेगा।

सचित्र आगम प्रकाशन की मेरी भावना को मूर्तरूप दिया है साहित्यकार प्रबुद्ध चिन्तक–श्रीचन्दजी सुराना ने। उनकी पूज्य गुरुदेव के प्रति भक्ति तथा आगमों के प्रति श्रद्धा और चित्रमय साहित्य प्रकाशन के प्रति अनुराग/लगाव तथा अनुभव सब मिलाकर इस कार्य को सुगम और गतिशील बना सका है।

गतवर्ष हमने सचित्र उत्तराध्ययन सूत्र का प्रकाशन किया था, अब श्री अन्तकृद्दशा सूत्र चित्रमय प्रस्तुत है।

विदुषी श्रमणी उपप्रवर्तिनी श्री सरिता जी म. का भी इस प्रकाशन के प्रति विशेष उत्साह और प्रेरणा रही है। साथ ही पूज्य गुरुदेव श्री के अनन्य श्रद्धालु भक्तजनों ने भी उदारता पूर्वक सहयोग का हाथ बढ़ाया है। इस प्रकार सभी के सहयोग से सचित्र आगम प्रकाशन माला का यह द्वितीय ग्रंथरत्न "सचित्र श्री अन्तकृद्दशा सूत्र" पाठकों के कर-कमलों में समर्पित है। मुझे विश्वास है इस प्रयत्न से देश व विदेश स्थित जैन बन्धुओं में आगम स्वाध्याय के प्रति रुचि बढ़ेगी और वे आत्म-कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होंगे, इसी शुभ आशा के साथ–

अमर मुनि

पद्म जयन्ती (दशहरा)
जैन स्थानक
गाँधी मडी, पानीपत

PREFACE

Today in the world, whatever thinking, thought, preachings, we are getting about religion, soul and God, all that have been originated on the penance-land of India (Bhārata). Since the pre-historic ages two currents of thoughts, cultures are prevailing on Indian ground like the rivers Gangā and Yamunā. First is–Śramaṇa culture and second is–Brāhmana culture Both of these cultures have their aims–ultimate development of life and welfare of soul But there is too much difference in thinking of both the cultures about ultimate aim–salvation, emancipation and soul-bliss That is why, both the cultures are running in two different currents

Śramana culture is salvationist, while all the formalities and religious rituals and rites of Brāhmaṇa culture are moving round about heaven On account of this, there is vast difference in the process of thinking and conduct of both the cultures Śramana culture has the chief characterstics of renunciation and penance; while Brāhamaṇa culture intends on work, deed and activity (yoga) or act and activity .

The base of thinking and thought of Śramaṇa culture are Āgamas, which are also called Śruta and that of Brāhmaṇa culture are Vedas which are called by other name Śruti

Brahmaṇa culture depends on Godism and godism, it takes the meaning of the word of liberation from existence (*nirvāna*) merging of soul into God and according to the view point of monotheism merging of soul into Brahma is liberation from existence.

Bauddha culture, which is one branch of Śramaṇa culture, it also believes in liberation from existence, but it gives the word extinguishment for liberation from existence It manifests *dīpo yothānirvrtti mabhyupetah*–as burning lamp exinguishes, so soul, when relieved from the desire of matter extinguishes and it is liberation from existence In other words, the flow of material thoughts which is continuously running, when completely stops, i.e , liberation from existence (*nirvāna*) Thus first (*Brāhmana*) cultrue presents the meaning of salvation as merging and the other (*Bauddha*) culture asserts extinguishment, stop and to come to an end

Śramaṇa culture or Jain culture from the very beginning remained liberationist or salvationist Here asserted–*nivvāna seṭṭhā jaha savva dhammā*–among all the religions salvation is the best religion. *Bhagawāna Mahāvīra* has been regarded supermost among all the salvationists–

nivvānavādīniha nāyaputte

In Jainology the meaning of salvation is most logical and scientific According to the view point of *Bhagawāna Mahāvīra*–

nivvāṇam ti abāham ti,
siddhī logassameva ya !
khemaṁ sivaṁ aṇābāhaṁ,
tam caranti mahesino !! –(*Uttarādhyayana, 283*)

The meaning of salvation or emancipation is–without all the hinderances, happiness without resistences, devoid of all the kārmic coverings, and menifestation of natural soul-bliss and spiritual happiness.

Salvation (*Nirvāna*) is obtaining infinite knowledge and bliss of soul. Such salvation is the goal of every soul, to obtain For getting this salvation, the soul practises and propiliates penances, meditation, renunciation etc. Obtaining success in these practices and propiliations is emancipation To obtain emancipation is the goal of every soul.

For getting emancipation or salvation the path of renunciation, penance and meditation has been told, Visualising roughly, it becomes apparent that in Brāhmana culture, the path of *Yoga* is told for obtaining the knowledge of Brahma. Bauddha philosophy gives force on meditation In Śramaṇa or Jain culture *Yoga* and meditation–both are amalgamated. Among the twelve types of penances body-administration (*Kāya-kleśa*) penance is a form of practising the way of Yoga and meditation penance express way of meditation. Penance, as described by Jainology, includes both the ways of meditation and Yoga. Hence Śramaṇa culture remained the culture of penancers Propiliation of penance is the quint-essence of Śramaṇa culture Penance is the identification and very spirit of Śramaṇa culture.

Antakrddaśā Sūtra

Introduction–Among the *Āgamas* throwing light on forms of penance-practice, Antakrddaśā sūtra deserves special importance Its very name is informative about the most auspicious fruition of penance-practice Penance is never observed to dry up the body, but its aim is to burn the Karmas, which are stuck to soul, and make them ashes As the dust, dirt, other chemicals, mixed with gold are burned by fire and gold becomes pure. In the same way by penance, Karmas are totally exhausted and soul attains its true and natural form Thus Karmas are exhausted or ended by penance By destruction of Karmas the cycle of births and deaths also comes to an end because Karmas is the root cause of births and deaths–*Kammam ca jāi maranassa mūlaṁ* So the tradition of births and deaths is exhaustively uprooted

Literal meaning of Antakṛddaśā also denotes the position of souls who have ended the cycle of birth and death, and it describes the propiliation method of those souls In this *sūtra*, there is the titillatory description of rigorous propiliation, austerities, meditation and *yoga* practising of 90 propiliators, who have uprooting the cycle of births and deaths attained their goal–salvation.

Antakrddaśā Sūtra is the eighth holy scripture (aṅga) among Āgamas. It contains eight sections and all propiliators descrbed in it attained salvation, ending all the eight types of Karmas. Therefore, in Jain regime, in the eight days of *Paryusana Parva*, old tradition of reading this *sūtra* is prevailing

Language–The language of this sūtra is *Ardhamāgadhī* It is precepted in canons that *Ardhamāgadhī* language is favourite to *Tīrthamkaras, Gaṇadharas* and gods Therefore it is favourite to all All the canons of Jain religion are scribted in this language

Style–There are four divisions of Jain canons *Dravyānuyoga*–the *sūtras* describing subjects, like–soul, karma, elements, etc. *Carnānuyoga*–canons describing rules of conduct etc, *Ganitānuyoga*–having description of mathematics, universe (*loka*), geography, rivers, mountains etc, *Kathānuyoga*–written in recital style–such as life-sketches, stories, etc, such canons

Thus *Jñātādharmakathā, Anuttaropapātikadaśā, Vipāka, Nirvayāvalika* and *Antakrddaśā* are counted in *Kathānuyoga*, because stories have chief place in them

Subject matter–There is titillatory description of propiliation of 90 souls in this *Āgama* Generally, it is considered as penance-*Āgama*, because penance-practissing is chiefly described in it But deeply pondering over all the subject matter of this *Āgama* it becomes clear that considering the path of liberation, we get co-ordination of penance, meditation, studying scriptures and obtaining knowledge etc

Gautamakumāra etc., 18 monks obtained salvation by practising 12 firm sage-resolutions and *Gunaratnasamvatsara* penance

Anīkasenkumāra etc, 14 sages attained liberation grasping the knowledge of 14 *pūrvas* and practising general penance of two days' fast (third day taking food) for whole life

Arjuna garland maker sage practising two days' penance for only six months and due to utmost peace, forgiveness, tolerance obtained emancipation

The boy sage *Atīmuktakumāra*, studying knowledge, practising *Gunaratna samvatsara* penance and after a long period of consecration becomes liberated

Monk *Gajasukumāla* attained liberation without studying any scripture and only one day consecration period due to his utmost forgiveness, equanimity and engrossed in ultimate pure meditation (śukla dhyāna)

Nandā, Kālī etc, nuns practised rigorous penances and after a long period of consecration could be liberated.

In this way the auspicious co-ordination of all the limbs of salvation *viz*, austerity, restrain, peace, subduation, pardon, forgiveness, meditation, etc., we get in this *Āgama*.

Ideals of this Sūtra

By studying this canon specialised inspiration arouses at every step of austerity, forgiveness and pure meditation. Beside this, the specific inspiration of some ideal characters points out to the enlightening ideals, as–

(1) Like *Vāsudeva Śrī Krsna*, the firm belief in religion, the feeling of respecting qualities and gracious activity to become helpful to promulgate and expansion of religion

(2) Restrain and practising of nunhood by eight queens of *Vāsudeva Śrīkṛṣṇa* inspires to renounce worldly rejoicings and accept renunciation

(3) Brilliant character of monk *Gajasukumāla* teaches the lesson of steadiness, firmness, tolerance and utmost forgiveness

(4) Character of *Sudarśana* sage-worshipper indicates devolution to worshipable supreme God. (Mahāvīra) self confidence, and religious brilliance

(5) Monk-life of *Arjuna* garland maker points towards uncomparable tolerance power, subdued sentiments and propiliation

(6) Description of penances practised by *Kālī* etc., consorts of king Śrenika, displays the ideal of destroying the inauspicious Karmas by austerities–*tavasā dhunāī pāva kammam*

(7) The interesting description of boy-sage *Atimuktakumāra* beautifully points towards the simplicity, modesty and gentleness in life

Thus this Āgama, giving several types of ideals, paves the way of propiliation to obtain salvation So its reading and hearing is beneficial to all

The Present Edition

Today the teaching and reading of *Antakrddaśā Sūtra is* done frequently, Its publication has been done by many publishers in different styles Vivid commentaries also published on it Some publishers published its original text with Hindi translation and some published only original text

Thus small and big, many editions are published and every edition bears its utility Beside Hindi language many publications have come forth in Gujarati language also. English edition of *ŚrīModī* also came under my sight Readers may ask, then what is the speciality of this edition ?

Illustrated Āgama Publication

Last year, at the aūspicious occasion of Diamond tubilee ceremony of Reverend venerable *Uttara Bhāratīya Pravarttaka Gurudeva Bhandāri Śrī Padma Chandraji Mahārāja*, we have resolved to publish *Illustrated Āgamas* Illustrated publication of Āgamas, is itself a historical work and it also bears its own importance. Some hand written manuscripts with pictures of *Kalpasūtra* and *Uttarādhyayana Sūtra* are available in ancient knowledge-stores, it is heard; and it is also heard that the cost of each copy of

pictorial Āgamas valued more than twenty or twentyfive thousand rupees. What to say of getting such valuable and not available volumes, even to see them is too much difficult. Still every person having the curosity about *Āgamas* have keen desire that Illustrated *Āgamas* could he seen and obtained.

It is quite definite that by illustration the most serions subject could be grasped easily Illustration gives the shape to shapeless, makes easily knowable to difficult to know One illustration is more influensive than thousands of stanzas and couplets In all the utility and necessity of pictures is regularly increasing in the modern method of education.

Although the publication of Illustrated Āgamas bears too much cost While preparing illustration, tradition and the limit of Āgama–both are kept in mind, and from preparation to printing, whole the process of illustrations is much more expensive. So the illustrated edition of Āgamas becomes too much costly than that ordinary edition. Ordinary reader feels himself unable to purchase it All these difficulties may be rectified and society is thinking over this problem Still then the illustrated publication, and with Hindi-English version, proves more eye-capturing, readable and grand than other ordinary publications This fact is accepted by all

Englightened thinker and man of literature *Śrīchand Surānā 'Saras'* gave the shape to my keen desire of publishing *Illustrated Agama* His fervent devotion to *Venerable Gurudeva*, faith in *Āgamas*, inclination and experience of publishing pictorial publication made this hard and too much labourious task easy.

Last year we have published *Illustrated Uttarādhyayana Sūtra* and this year *Āntakrddaśā Sūtra* These are before you.

Special courage and inspiration remained to this publication of learned nun *up-pravarttinī Srī Saritāji Mahārāja* Beside this, the fervent devotees of venerable *Gurudeva Śrī* lavishly and liberally co-operated us

In this way, with the co-operation of all, the second publication of Illustrated Āgama publication series–*Illustrated Śrī Antakrddaśā sūtra* came into light and reached to the hands of readers

I believe that by this effort (Publication) the interest will go on increasing about reading *Āgamas* of the persons inhabiting in India and foreign countries English version will prove more helpful to the English speaking gentry to clear understanding the inherent purport of *Āgama* residing in India and abroad and thus they will go ahead for the welfare of their souls

With this auspicious hope ....

Amar Muni

Padma Jayanti (Vijaya dashami–Dash-hara)
Jain Sthanaka
Gandhi Mandi PANIPAT

अन्तकृद्दशा सूत्र

अनुक्रमणिका (Index)

अट्ठमं अंगं

सिरि अन्तगड दसाओ

अष्टम अंग

श्री अन्तकृद्दशा

Eighth Aṅga

SrīAntakṛd-daśā

अष्टम अंग श्री अन्तकृद्दशा सूत्र

उत्थानिका

अष्टम अंग अन्तकृद्दशा सूत्र का प्रारंभ प्रश्नोत्तर के रूप मे होता है ।

चम्पानगरी के पूर्णभद्र चैत्य में आर्य सुधर्मा स्वामी विराजमान हैं । जम्बूस्वामी विनयपूर्वक उनसे प्रश्न करते है कि श्रमण भगवान महावीर ने अष्टम अंग अन्तकृद्दशा सूत्र में किस भाव का कथन किया है ? उत्तर में गणधर सुधर्मा स्वामी अष्टम अंग का वर्णन करते हैं ।

इस अष्टम अग में आठ वर्ग हैं और उनके नब्बे (९०) अध्ययन हैं । पहले से पांचवें वर्ग तक के इकावन (५१) अध्ययन हैं । जिनमे वासुदेव श्रीकृष्ण के राज परिवार के ४१ राजकुमारों तथा १० रानियों की दीक्षा एव तपस्या, तप, सयम आराधना आदि का रोमांचक वर्णन है ।

ये सभी साधक भगवान अरिष्टनेमि के शासनकाल मे हुए ।

छठे, सातवे, आठवें वर्ग मे भगवान महावीर के शासनवर्ती १६ पुरुष साधक तथा २३ नारी साधको की निर्मल चारित्र-तप-आराधना का लोमहर्षक वर्णन है ।

इस प्रकार आठ वर्ग के नब्बे (९०) अध्ययनो मे सत्तावन पुरुष साधक तथा तेतीस नारी साधको अर्थात् कुल नब्बे (९०) आत्म-साधकों का वर्णन है जिन्होंने ज्ञान-दर्शन-चारित्र-तप की निर्मल साधना करके उसी भव मे भव का अन्त करके निर्वाण प्राप्त किया । इसलिए उनको अन्तकृद् (अन्त करने वाले) कहा गया है ।

प्रथम अध्ययन द्वारका नगरी के वर्णन से प्रारभ होता है ।

Śrī Antakṛd-daśā Sūtra–Eighth Aṅga

Preamble

The Eighth *Anga* of *Dwādaśāngī* (twelve parts of Jain holy scriptures and canons) named *Antakrddaśānga sūtra* begins in question-answer style

Ārya Sudharmā Swāmī is staying in *Pūrnabhadra* temple of *Campā* city *Jambū Śwāmī* courteously asks him that *Śramana Bhagawāna Mahāvīra* has described what facts and matter in Eighth *Anga–Antakrddaśā Sūtra* In reply *Ganadhara Sudharmā Swāmī* describes the contents of Eighth *aṅga*

In this Eighth *Anga*, there are eight sections or divisions and ninety chapters From first to fifth sections, there are fiftyone (51) chapters These chapters contain the description of fortyone (41) princes and ten (10) queens, relating to the royal family of *Vāsudeva Śrīkrṣṇa* All this description of consecration, austerities, practising of self-control and restrain is very heart-throbing and titillatory

All these practisers took place during the period of *Bhagawāna Aristanemi*

Sixth, seventh and eighth divisions or sections include titillatory description regarding the propiliation of pure conduct and austerities of sixteen (16) male (men) and twentythree (23) female (women) propiliators during the period of *Bhagawāna Mahāvīra*

As thus, in the ninety chapters of eight sections or divisions, there is the description of 57 men and 33 women i e, all ninety self-practisers who attained salvation, by practising pure propiliation of right knowledge, faith, conduct and austerity, so ending the circle of births and deaths, in that very existence–therefore those are called *antakṛd* (end-doers).

The first chapter of first section or division begins with the description of *Dwārakā* city.

प्रथम वर्ग

सूत्र १ :

तेणं कालेणं तेणं समएणं चम्पा णामं णयरी होत्था, वण्णओ ।

तत्थ णं चम्पाए णयरीए उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए एत्थणं पुण्णभद्दे णामं चेइए होत्था । वणसण्डे वण्णओ ।

तीसे णं चम्पाए णयरीए कोणिए णामं राया होत्था । महया हिमवंत वण्णओ ।

सूत्र १ :

उस काल और उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी । यह नगरी बहुत ही सुन्दर वर्णन करने योग्य थी ।

चम्पा नगरी के उत्तर और पूर्व दिशा के मध्य (ईशान कोण) में पूर्णभद्र नाम का एक मनोहर रमणीय उद्यान (वन खंड) था । उस उद्यान के ईशान कोण में पूर्णभद्र नाम के यक्ष का प्राचीन मन्दिर (आयतन) था ।

चम्पानगरी में उस समय कोणिक नाम का राजा राज्य करता था; जो महान हिमवंत पर्वत के समान अजेय और राष्ट्र का रक्षक था ।

FIRST SECTION

Maxim 1 :

(*Sūtra*) **1**–At that time and at that period there was a city, named *Campā*. That city was very beautiful and so describable.

In the middle of north-eastern direction (*Iśāna koṇa)* of the *Campā* city, there was a garden named *Pūrṇabhadra*, which was very beautiful, heart-attracting and pleasure-

giving; so it was describable. Amidst that garden in the middle of north-eastern direction, there was a sanctuary (temple) of a *Yakṣa* (deity) named *Pūrṇabhadra*.

In the city *Campā* at that period, a great king named *Konika* ruled, who was very brave and great warrior. He was unconquerable like great mountain *Himavanta* and saviour of his nation (the territory of which, he was ruler)

विवेचन

● यहा पर **'तेणं कालेणं तेणं समएणं'** इस वाक्य मे काल और समय का भिन्न अर्थ में प्रयोग हुआ है । 'काल' से अभिप्राय है–काल चक्र का अवसर्पिणी कालखंड और उसका चतुर्थ आरा, तथा 'समय' से अभिप्राय है–जिस समय का यह वर्णन किया जा रहा है अर्थात् जब भगवान महावीर एव गणधर सुधर्मा आदि विद्यमान/उपस्थित थे । इस प्रकार यहाँ "काल" एव "समय" के अर्थ में भेद किया गया है ।

● चम्पानगरी भारत की सुन्दरतम नगरियो मे एक थी। इसकी सुन्दरता और शोभा का वर्णन औपपातिक सूत्र में विस्तारपूर्वक मिलता है । यह अंग देश की राजधानी थी । परन्तु राजा श्रेणिक की मृत्यु (ईस्वीपूर्व लगभग ५४४) के पश्चात् महाराज कोणिक ने, राजगृह को छोडकर चम्पानगरी को अपनी राजधानी बना लिया । निरयावलिका सूत्र में इस घटना का वर्णन इस प्रकार है–

मगधपति राजा श्रेणिक बहुत वृद्ध हो चुके थे । उनके पुत्रों में अशोकचन्द्र कोणिक सबसे बडा, प्रखर, तेजस्वी और महत्वाकाक्षी था । इसका जन्म नाम अशोकचन्द्र था, परन्तु एक अगुली खडित (कूणी) होने से कोणिक नाम प्रसिद्ध हो गया । बौद्ध साहित्य मे इसी का "अजातशत्रु" नाम प्रसिद्ध है ।

राजा श्रेणिक ने अपने दो लघु पुत्रों हल्ल-विहल्ल कुमारों को राज्य की दो अमूल्य श्रेष्ठ वस्तुएं दे दी–देवनामी हार और सिंचानक हाथी । इससे कोणिक का मन जल-भुन गया । फिर राज्य सिंहासन की प्राप्ति की तीव्र अभिलाषा से प्रेरित होकर उसने अपने अन्य दस भाइयों को साथ मिलाकर षड्यंत्र रचा और राजा श्रेणिक को बन्दी बना लिया । स्वयं मगधाधिपति बन गया और दस अन्य भाइयों को राज्य के छोटे-छोटे भाग बाँट दिये ।

राज्याभिषेक कराकर तथा राज-चिन्हों से अलंकृत होकर कोणिक अपनी पूज्य माता चेलना के

चरण-वन्दन करने आया। पुत्र को आता देखकर माता चेलना ने मुँह फेर लिया। कोणिक ने कहा–"हे माता ! क्या तुम अपने पुत्र को राजा के रूप में देखकर प्रसन्न नहीं हो ?"

रानी चेलना ने रोषपूर्वक उत्तर दिया–"जिस परम वत्सल पिता ने अपने प्राणों की परवाह न करके पुत्र-प्रेमवश पुत्र को जीवन दान दिया, वही पुत्र राज्य का लोभी बनकर पिता को बन्दी बनाए, पिजरे मे डाल दे और स्वयं राजा बन बैठे तो कौन माँ ऐसे पितृघाती पुत्र का मुँह देखना चाहेगी ?"

माता के संतप्त हृदय से निकले वचनों से कोणिक का हृदय बहुत दु:खी हो गया। उसने पूछा–"पिताजी ने मुझे किस प्रकार जीवनदान दिया, उनके मन में क्या सचमुच मेरे प्रति प्रेम था ?"

चेलना ने कहा–इतना गहरा पुत्र-प्रेम तो किसी विरले पिता के ही हृदय में होता है ? तू सुनना ही चाहता है, तो सुन। जब तू गर्भ में था, तब मुझे पति के हृदय का मॉस खाने का एक अत्यन्त घृणित दोहद उत्पन्न हुआ। इस दोहद की पूर्ति तो दूर, इसके विचार से ही मैं अत्यन्त लज्जित और दु:खी रहने लगी। किसी तरह तुम्हारे पिताजी ने मेरी चिन्ता का कारण पता लगा लिया, और बहुत ही वीरता, साहस एव चतुराई के साथ मेरा दोहद पूर्ण करवाया।

तुम्हारा जन्म होते ही मेरे मन मे तेरे प्रति अत्यन्त घृणा और दुर्विचार आये, कि ऐसी पितृघातक सन्तान को जन्म देने से ही क्या लाभ है ? मैने जन्मते ही तुझे नगर के बाहर कूडे के ढेर (उकरड़ी) मे फिकवा दिया, जहाँ एक मुर्गे ने मॉस पिड समझकर तुम्हारी यह अगुली नोंच डाली। किन्तु तुम्हारे पिताजी को पता चलते ही उन्होंने मुझे उपालम्भ दिया, स्वयं दौडकर गये, तुम्हें उठाकर लाये, ममतापूर्वक तुम्हारा लालन-पालन किया। तुम्हारी अंगुली में रस्सी और मवाद पड जाने से रात को तुम रोते थे। तब तुम्हारे पिताजी अपने मुँह में तुम्हारी अँगुली का मवाद, पीव चूसकर बाहर फेंकते और तुम्हारी पीडा दूर करते।

यह सुनाते-सुनाते चेलना का हृदय भर आया। उसकी आँखे भीग गईं।

माता के मुँह से यह वृत्तात सुनने ही कोणिक पश्चात्ताप में फूट-फूट कर रो पडा। वह पिता के बंधन काटने के लिए कुल्हाडी लेकर कारागार की तरफ दौडा।

कारागार मे पडे श्रेणिक ने कोणिक को हाथ में कुल्हाडी लिये आते देखकर सोचा–यह राज्य-लोभी दुष्ट पुत्र, अब मुझे जान से मारने के लिए आ रहा है। इस बुरी मौत मरने से तो अच्छा है, मैं स्वय ही मर जाऊँ। यह विचार कर अंगूठी मे जडित हीरे की कणी को चूस कर उसने पहले ही अपना प्राणान्त कर लिया।

पिता की मृत्यु से कोणिक शोकमग्न, विह्वल सा हो उठा। पिता की याद कर वह फूट-फूट कर रो पड़ा। अनेक दिनों तक वह शोक में डूबा रहा। उद्यान आदि में बाहर कहीं घूमने पर कुछ शोक

शांत होता, परन्तु ज्योंही राज सिंहासन पर आकर बैठता, पिता की याद में वह शोकमग्न हो उठता। –(निरयावलिका सूत्र)

इस शोक की निवृत्ति के लिए अन्त में मंत्रिमण्डल की सलाह पर उसने राजगृह को भी छोड़ दिया और चम्पानगरी को अपनी राजधानी बनाया।

यद्यपि राजा कोणिक ने राज्यलिप्सु बनकर पिता को कारागार में डालकर बहुत ही निन्दनीय कार्य किया, परन्तु बाद में माता के समझाने पर अपने दुष्कृत्य पर अनुताप/पश्चात्ताप करके वह माता-पिता के प्रति अत्यन्त आदर भाव रखने लगा। इसीलिए जैन आगमों में उसे माता-पिता का विनीत कहा है। भगवान महावीर का वह परम भक्त था।

औपपातिक सूत्र मे बताया है–राजा कोणिक ने एक प्रवृत्तिवादुक पुरुष रखा था, जो महान् आजीविका पाता था। उसके अधीन अनेक कर्मकर रहते थे, जिनसे भगवान महावीर के प्रतिदिन के समाचार उसे मिलते थे। और वह प्रवृत्तिवादुक पुरुष भगवान महावीर के प्रतिदिन के समाचार प्रातःकाल राजा कोणिक को अवगत कराता रहता था।

औपपातिक सूत्र के टीकाकार ने राजा के महान व्यक्तित्व का वर्णन करते हुए बताया है–राजा में महाहिमवान पर्वत के समान पाँच विशेषताएँ होनी चाहिए।

१. हिमवान पर्वत जिस प्रकार भरतक्षेत्र की मर्यादा करने वाला है, उसी प्रकार राजा राज्य की मर्यादा का रक्षक होता है।

२. पर्वत जैसे वाहरी उपद्रवो से क्षेत्र की रक्षा करता है, वैसे ही राजा बाहरी आक्रमणो से राज्य की रक्षा करता है।

३ पर्वत जिस प्रकार अनेक जडी-बूटियो एव औषधियो का भण्डार होता है, उसी प्रकार राजा क्षमा, शौर्य, गांभीर्य, उदारता, दान आदि गुणों का भडार होता है।

४. पर्वत जिस प्रकार तूफानों और झंझावातो मे अचल रहता है, उसी प्रकार राजा अपनी नीति एवं नियमो मे अचल रहता है।

५ पर्वत जैसे सभी प्राणियो का आधार होता है, वैसे राजा भी प्रजा का आधार होता है।

कोणिक अपनी प्रजा का पिता, रक्षक, शान्तिकारक और सर्वदा सबका हित करने वाला था।

● आर्य जम्बू ने भगवान महावीर के निर्वाण के पश्चात् १६ वर्ष की आयु मे आर्य सुधर्मा के पास दीक्षा ली थी, वीर निर्वाण के १२ वर्ष पश्चात् आर्य सुधर्मा को केवलज्ञान हुआ। आगमों की वाचना का यह प्रसग सुधर्मा स्वामी की छद्मस्थ अवस्था का ही है। अतः संभव है यह प्रसंग जम्बू स्वामी की २४-२८ वर्ष की अवस्था के बीच का ही हो।

● अन्तेवासी का अर्थ है–प्रिय शिष्य, अथवा सदा निकट रहने वाला।

Elucidation

■ Here in the clause *'teṇaṁ kāleṇaṁ teṇam samayeṇaṁ'* the words *kāla* and *samaya* are used in different meanings The word *kāla* here denotes–the fourth division (*ārā*) of present *avasarpinī age*; and word *samaya* is used for the period when the description is taking place It means when *Bhagawāna Mahāvīra* and *Ganadhara Sudharmā* were present or were in existence Thus the meanings of *kāla* and *samaya* are different.

■ *Campā* city was one of the beautiful cities of India at that time. Beauty and enrichment of this city is vividly described in *Aupapātika sūtra*. It was the capital of *Anga deśa* But after the death of king *Śrenika*, his son king *Konika* made this city his capital, leaving the city *Rājagrha* *Nirayāvalikā Sūtra* describes the episode like this–

The ruler of *Magadha* country, king *Śrenika* became very much old. Among all his sons, *Aśokacandra Konika*, was eldest, brave and ambitious His name was *Aśokacandra*, but his small finger was damaged (*Kūni*) So his *Konika* name became familiar In Bauddha literature his name *Ajātaśatru* is popular.

King *Śrenika* gave two invaluable things of kingdom to his two younger sons Halla-Vihalla, one was god-given necklace (*Devanāmī hāra*) and the other was elephant *Sincānaka* It angried prince *Konika* Inspired by eager ambition to fetch the throne, he conspired along with his ten other brothers and imprisoned king *Śrenika*. Himself became the ruler of entire *Magadha* country, and gave small territories to his ten brothers

Being coronated and adorned with the signs of kingship *Konika* came to his adorable mother *Celanā* to bow down at her feet, but seeing the son coming, the mother turned her face to other side *Konika* said–"O mother ! are you not happy seeing your son as a king ?"

Queen *Celanā* angrily rebuked–"The most affectionate father, without caring his own life, gave the life to his son due to hearty affection, the same son, becoming greedy of kingdom, imprisons his own father, encages him and himself becomes king, who mother will like to see the face of such father-torturing son ?"

Listening the agony-hearted words of mother, the heart of *Koṇika* grieved. He asked with curiosity–"How father gave me life ? Did he really love me ?"

Celanā said–Such a deep affection to a son, can be found in the hearts of some fathers only If you want to know, then listen When you were in my womb then a hateful but keen desire engrossed me that I must eat the flesh of the heart of your father I could not express such a hateful desire, but grief overtook me Anyhow your father could know the cause of my grief Then with courage and cleverness he fulfilled my that hateful desire

At the moment of your birth, I was filled with hateful thoughts about you that what's the use to give birth to a father-torturing son like you ? I had thrown you in a dustbin by my maid slave There a cock cut your little finger assuming you as a lump of flesh. But as soon as your father became aware of this episode, he rebuked me, went and brought you from dustbin, and nurtured you with enrormous love Your damaged finger became septic Due to pus you bitterly weep in the night. Then your father suck the pus of your finger by his own mouth and vomit (throw) it In this way, he used to subside your pain

Expressing all this the eyes of *Celanā* became wet

Hearing such an episode from mother, *Konika* wept bitterly due to repentance He ran to prison, taking an axe in his hand, to cut the chains and fetters of his father

Seeing *Konika* coming, with an axe in his hand, king *Śrenika* thought–this kingdom-greedy, stupid son is coming to kill me. So it would be better that I myself die than to die such a cruel death Thinking thus, he gave up his life by sucking and crushing the diamond studded in his ring

Due to the death of father, *Konika* engrossed with great grief He wept bitterly remembering his father For many a days he drowned in sorrow While walking in park etc , sorrow becomes lessen but as he sits on the throne becomes sorrowful in the memory of his late father (*Nirayāvalikā sūtra*)

For relief of this great sorrow, in the end according to the council of his ministers he left *Rājagrha* and made *Campā* city as his capital

Although king *Konika*, due to his lustfulness for kingdom, had done a most shameful deed–imprisoning his father; but afterwards by the advice and admonishment of his mother, he repented much and filled with the feelings of respect towards his parents

Thereby he is called courteous to his parents in *Jain Āgamas* He was also a great devotee of *Bhagawāna Mahāvīra*

Aupapātika sūtra describes that king *Koṇika* had appointed a person, entitled *Pravṛtti Vāduka*, on an enormous salary There were many servants under him, their duty was to collect information about *Bhagawāna Mahāvīra;* and that *Pravrtti Vāduka* used to give full report about *Bhagawāna Mahāvīra* to king *Koṇika* every morning

The commentator of *Aupapātika sūtra,* discussing the great personality of king, has described that a king must have five special characterstics like the great mountain *Himavāna*

1 As mountain *Himavāna* confines the boundry limit of *Bharataksetra*, so a ruler saves the boundry of his territory

2 As the mountain saves the territory from external enemies, so the king saves country from external invasions

3 As the mountain is the treasure of herbs, roots etc , so the ruler should be full of virtues like–forgiveness, valour, gererosity, charity etc.

4 As the mountain remains stable in storms and hurricanes, so the ruler remains steadfast in his policy–rules and regulations.

5 As the mountain is the base or support for all living beings, so is the ruler for his public

Konika was like the father of his subject, saviour, peace-giver and always beneficial for all.

■ *Ārya Jambū* accepted consecration from *Sudharmā Swāmī*, when he (*Jambū*) was of 16 years of age and after the salvation of *Bhagawāna Mahāvīra* Twelve years after the salvation of *Bhagawāna Mahāvīra*, *Ārya Sudharmā* became omniscient. This episode of teaching the *Āgamas*, should be of the time when the age of *Jambū Swāmī* was between 24-28 years.

■ *Antevāsī*–a disciple who lives always near to his preacher, or a favourite disciple of a teacher

चम्पानगरी में सुधर्मा स्वामी :

सूत्र २ :

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्ज सुहम्मे थेरे जाव पंचहिं अणगारसएहिं सद्धिं संपरिवुडे पुव्वाणुपुव्विं चरमाणे गामाणुगामं दूइज्जमाणे सुहंसुहेणं विहरमाणे जेणेव चम्पा णयरी जेणेव पुण्णभद्दे चेइए तेणेव समोसरिए ।

परिसा णिग्गया...जाव परिसा पडिगया ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अज्ज सुहम्मस्स अंतेवासी अज्ज जंबू जाव पज्जुवासमाणे एवं वयासी–

जइ णं भंते ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेण सत्तमस्स अंगस्स उवासगदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते । अट्ठमस्स णं भंते ! अंगस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

सूत्र २ :

उस काल और उस समय में, स्थविर आर्य सुधर्मा स्वामी पॉच सौ अणगार शिष्यों के परिवार सहित श्रमण नियमों के अनुसार विचरते हुए, एक ग्राम से दूसरे ग्राम सुखपूर्वक विहार करते हुए चम्पानगरी के पूर्णभद्र उद्यान में पधारे ।

गणधर सुधर्मा स्वामी का आगमन सुनकर श्रद्धालु नागरिक दर्शन और प्रवचन सुनने के लिए आये । गणधर सुधर्मा ने उपस्थित परिषद्–जनता को धर्म का उपदेश दिया । धर्मोपदेश सुनकर अनेक लोगों ने त्याग- प्रत्याख्यान, नियम आदि ग्रहण किये और वापस अपने स्थान को लौट गये ।

उस काल उस समय में, आर्य सुधर्मा स्वामी के अन्तेवासी आर्य जम्बू ने (परिषदा जाने के पश्चात्) विनयपूर्वक वन्दन-नमन करके उनकी पर्युपासना करते हुए इस प्रकार पूछा–हे भगवन् (भन्ते) ! (यदि) धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने सातवें अंग शास्त्र उपासकदशा का यह अर्थ फरमाया है तो, हे भगवन् ! अष्टम अंग अन्तकृद्दशा सूत्र में किस विषय का (भाव या वर्णन) प्रतिपादन किया है ?

Sudharmā Swāmiin Campā City :

Maxim 2 :

At that time and at that period elder sage (*sthavira*) *Ārya Sudharmā Swāmī* with his five hundred mendicant
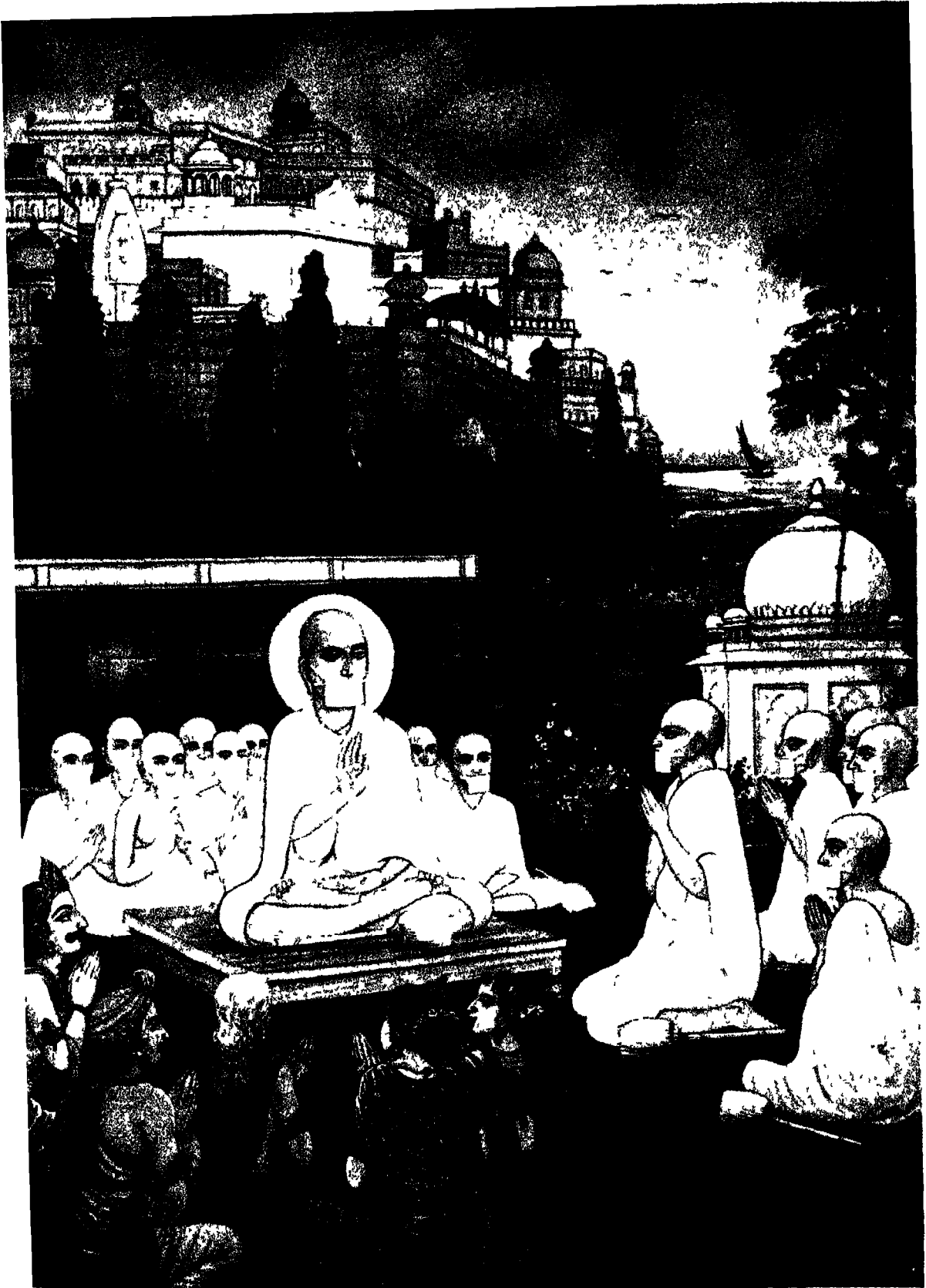
चित्रक्रम १ :
चम्पानगरी में सुधर्मा स्वामी

गंगानदी के तट पर बसी चम्पानगरी का दृश्य। नगर के बाहर ईशान कोण में पूर्णभद्र चैत्य तथा विविध जाति के वृक्षों से हरा-भरा वनखंड है। एक ओर पूर्णभद्र यक्ष का यक्षायतन है। गणधर सुधर्मा स्वामी इस पूर्णभद्र चैत्य में विराजमान हैं। आर्य जम्बू वन्दना नमस्कार करके पूछते हैं-धर्मतीर्थ की आदि करने वाले श्रमण भगवान महावीर ने अष्टम अंग अन्तकृद्दशा का क्या भाव कहा है? (वर्ग १/अध्य. १)

Illustration No. 1 :
Sudharmā Swāmī in Campā city.

Scene of *Campa* city which is situated at the bank of *Ganga* river. In the middle of North-East direction there is a sanctuary of *Purnabhadra Yaksa* (deity) and a garden (wood-park) filled with many kinds of trees and greenery. At one side seen sanctuary of *Pūrnabhadra Yaksa* (deity). *Ganadhara Sudharma Swami* sitting in this sanctuary. *Ārya Jambū* asks bowing down to him—Beginner of religious order *Śramana Bhagawana Mahavira* has expressed what subject matter of Eighth *Anga Antakrddasa Sutra* ? (Sec. 1/Ch. 1)

disciples, according to the sage rules, wandering from village to village happily came to *Pūrnabhadra* garden of *Campā* city.

Knowing about the arrival of *Gaṇadhara Sudharmā Swāmī*, the citizens full of faith came to bow down to him and to listen his religious sermon. *Gaṇadhara Sudharmā* gave religious sermon to present congregation. Listening that sermon many persons accepted the vows of renunciation and expiation and afterwards went back to their houses

At that time and at that period, the favourite or always living near disciple of *Sudharmā Swāmī*, after going the congregation, *Ārya Jambū* courteously bowing down asked–O *Bhagawan (Bhante)* ! The beginner (propagator) of religion *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra Swāmī* described this subject matter of seventh *Aṅgasūtra*, then O *Bhagawan* ! What subject matter he described in the Eighth *Angaśāstra– Anta-kṛddaśā Sūtra* ?

विवेचन

इन सूत्रो मे 'जाव' और 'वण्णओ' इन दो शब्दो का बार-बार प्रयोग हुआ है । आगे भी होगा और अनेक सूत्रों मे इनका प्रयोग होता है । दोनों शब्दों का प्रयोजन इस प्रकार है–

जाव–अर्थात्–'यावत्'' यानी जब तक, वहाँ तक । इस शब्द से यह सकेत किया जाता है कि इस विषय का विस्तृत पाठ और विस्तृत वर्णन अन्य स्थान पर किया गया है, उसे यहाँ पर भी प्रसगानुसार समझ लेना चाहिए ।

वण्णओ–शब्द का प्रयोग उस सम्बन्धित प्रसंग व विषय वस्तु की अनेक विशेषताओं पर प्रकाश डालने के लिए किया जाता है । वर्णनीय वस्तुएँ अनेक हैं, उनके गुण/विशेषताएं भी अनेक हैं । जिस प्रकार नगर, पर्वत, उद्यान, राजा आदि का वर्णन जिस-जिस स्थान पर विस्तारपूर्वक किया गया है ।

उन पाठों की बार-बार पुनरावृत्ति नहीं हो, इसलिए वहाँ "वण्णओ" (वर्णक या वर्णनीय) शब्द का संकेत प्रसंगानुसार उस सम्पूर्ण भाव को समझने के लिये किया जाता है । चम्पानगरी, पूर्णभद्र चैत्य आदि का विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र में है ।

परिसा णिग्गया जाव....... यहाँ पर "जाव" शब्द से परिषद् के अनेक भेद, उनके आने के विविध प्रयोजन, धर्म देशना सुनकर जीवादि तत्त्वों का ज्ञान, दीक्षा, श्रमण अथवा श्रावक व्रत ग्रहण आदि विविध विषयों का वर्णन औपपातिक सूत्र से समझना चाहिए ।

सुहम्मे थेरे जाव....... इस 'जाव' शब्द में सुधर्मा स्वामी का सम्पूर्ण वर्णन समझ लेने की सूचना की गई है । ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र अध्ययन १ में आर्य सुधर्मा स्वामी के समग्र व्यक्तित्व का सुन्दर यथार्थ परिचय कराया गया है । वह मूल पाठ भावार्थ सहित अन्तकृद्दशा महिमा में दिया गया है । पाठक उससे सुधर्मा स्वामी का सम्पूर्ण वर्णन जानें ।

यहाँ सुधर्मा स्वामी को 'स्थविर' कहा गया है । सुधर्मा स्वामी ने ५० वर्ष की अवस्था में दीक्षा ली थी और ३० वर्ष तक भगवान महावीर की सेवा में रहे । यह घटना-प्रसंग भ. महावीर के निर्वाण के बाद का है । अतः इस समय इनकी अवस्था ८० वर्ष से अधिक की होनी चाहिए ।

'स्थविर' शब्द का अर्थ है–जो स्वयं धर्म एवं आचार-मर्यादा आदि में स्थिर (स्थित) रहकर दूसरों को भी स्थिर करने में समर्थ हो ।

आगमों में स्थविर तीन प्रकार के बताये हैं ।

१. वयःस्थविर–कम से कम ६० वर्ष की आयु का हो ।

२. दीक्षा स्थविर–कम से कम २० वर्ष की दीक्षा पर्याय वाला ।

३. श्रुत स्थविर–जो स्थानांग एवं समवायांग सूत्र के अर्थ का ज्ञाता हो ।

आर्य सुधर्मा तो तीनों ही दृष्टियों से स्थविर थे ।

आर्य–प्राचीन समय में आर्य शब्द एक सम्मानजनक सम्बोधन था । शील एवं ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति के लिए 'आर्य' शब्द का अधिक प्रयोग होता था । आगमों में गणधर सुधर्मा एवं जम्बूस्वामी तथा इनके उत्तरवर्ती आचार्यों के लिए भी 'आर्य' (अज्ज) शब्द का प्रयोग आगमों व पश्चातवर्ती स्थविरावली में मिलता है ।

भन्ते–जैन एवं बौद्ध परम्परा में अपने धर्मगुरु, धर्माचार्य तथा परम श्रद्धेय आप्त पुरुषों के लिए भन्ते शब्द का प्रयोग मिलता है । भन्ते के अनेक अर्थ हैं, जैसे–भदन्त । ज्ञान-दर्शन-चारित्र आदि ऐश्वर्यों से युक्त अथवा भवान्त–भव का, संसार परिभ्रमण का अन्त करने वाले । भगवान शब्द से भी यही अर्थ समझना चाहिए ।

Elucidation

In these maxims the words *'jāva'* and *'vaṇṇao'* are used many times and will be used further. These words are used in many *sūtras*. Meanings of both the words are as follows–

(1) *Jāva* means 'yāvat'–until, upto that definite point. By this word it is pointed out that the detailed reading and vivid description of this very subject has been done elsewhere–the other *sūtra* or *sūtras*, that should also be conceived here, at this very point, according to reference.

(2) The word *'Vannao'* used for throwing light on various specialities of the related reference and subject matter. There are many describable things, their features and qualities are also many. As the descriptions of city, mountain, garden, park, king etc., are vividly made at some particular places in *sūtra* or *sūtras* that should not be repeated over and again. For this purpose the word *vaṇṇao* (descriptive or descibable) is used. It also points out that the reader should conceive all the subject related and referred at the very point. The detailed description of *Campā* city and *Pūrnabhadra caitya* (temple) we get in *Aupapātika sūtra.*

(3) *Parisā niggayā jāva.. ....*Here *jāva* word indicates many kinds of congregations, many purposes of their coming, the knowledge of soul etc., elements, consecration, accepting house holder's vows etc., and various subjects like this should be known from *Aupapātika sūtra.*

(4) *Suhamme there jāva... ....*Here the word *'jāva'* indicates to conceive all and all about *Sudharmā Swāmī* In *Jñātādharmakathāṅga Sūtra*, chapter 1, the full and vivid description of the personality and personal traits of *Sudharmā Swāmī* has been given in a very lucid style. That original reading with its version we have given in *Antakṛddaśā Mahimā*. Readers are advised to understand all about *Sudharmā Swāmī* from there.

(5) Here the word *sthavira* (elder sage) is used for *Sudharmā Swāmī. Sudharmā Swāmī* accepted consecration when he was 50 years of age, and remained upto 30 years in the service of *Bhagawāna Mahāvīra*. This episode narrated after the salvation of *Bhagawāna Mahāvīra*. Therefore at this time the age of *Sudharmā Swāmī* should be more than eighty years.

The word *sthavira* (elder sage) means the sage who himself remains stable in religion and religious rites and rules and should be capable to make others also stable in religion and sage activities.

Three types of elder sages are described in *Āgamas*

(i) *Vayah sthavira* (Elder by age)–He must be at least sixty years of age.

(ii) *Dīksā sthavira* (Elder by consecration)–He must has been consecrated at least twenty years before.

(iii) *Śruta sthavira* (Elder by knowledge)–He must know the meaning of *Sthānāṅga* and *Samavāyānga.*

Ārya Sudharmā was elder sage by all the aforesaid three points of view

Ārya–In ancient times the word *Ārya* was an address denoting honourable, superior etc This address was frequently used for the learned persons and persons opulent with rectitude

We get the word *Ārya (Prākrta form Ajja)* used for *Ganadhara Sudharmā, Jambū* and later preachers in *Āgamas* and later literature

In Jain & Bauddha tradition the word *Bhante* is frequently used for religious teachers, preachers and authentic persons. The word *Bhante* has many renderings, like–opulated with the high virtues of right knowledge, faith, conduct etc , or *Bhavānta*–destructors of the cycle of births and deaths This meaning should also be conceived by the word *Bhagawāna*

सूत्र ३ :

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता ।

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अट्ठ वग्गा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कइ अज्झयणा पण्णत्ता ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा–

गोयम[१] समुद्द[२] सागर[३] गंभीरे[४] चेव होइ थिमिए[५] य ।
अयले[६] कंपिल्ले[७] खलु, अक्खोभ[८] पसेणई[९] विण्हू[१०] ॥

सूत्र ३ :

सुधर्मा स्वामी ने उत्तर दिया-(एवं खलु-निश्चित रूप में) हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर यावत् जो मोक्ष पधार चुके हैं, उन्होंने अन्तकृद्दशा सूत्र के आठ वर्गों का प्रतिपादन किया है ।

जम्बू-हे भगवन् ! यदि श्रमण भगवान ने अन्तकृद्दशा सूत्र के आठ वर्ग कहे हैं तो भगवन् ! अन्तकृद्दशा सूत्र के प्रथम वर्ग में कितने अध्ययन कहे हैं ?

सुधर्मा-हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने अन्तकृद्दशा सूत्र के प्रथम वर्ग के दश अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं ।

१. गौतम कुमार, २. समुद्र कुमार, ३. सागर कुमार, ४. गंभीर कुमार, ५. स्तिमित कुमार, ६. अचल कुमार, ७. काम्पिल्य कुमार, ८. अक्षोभ कुमार, ९. प्रसेनजित और १०. विष्णुकुमार ।

Maxim 3 :

Answered *Sudharmā Swāmī*.

Definitely *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*, (until) who has attained salvation, described eight sections or divisions of *Antakṛddaśā sūtra*.

Jambū–O *Bhagawan* ! If *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has described eight sections or divisions of *Antakṛddaśā sūtra*, then how many chapters he has described in first section.

Sudharmā–O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra Swāmī* has told ten chapters of first section of *Antakṛddaśā sūtra*, which are as following–

(1) *Gautama Kumāra*, (2) *Samudra Kumāra* (3) *Sāgara Kumāra* (4) *Gambhīra Kumāra*, (5) *Stimita Kumāra* (6) *Acala Kumāra* (7) *Kāmpilya Kumāra*, (8) *Akṣobha Kumāra*, (9) *Prasenajita and* (10) *Viṣṇu Kumāra*.

卐

प्रथम अध्ययन

द्वारका वर्णन

सूत्र ४ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—गोयम जाव विण्हु ।

पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था । दुवालस जोयणायामा णव-जोयण वित्थिण्णा धण-वइ-मइ-णिम्मिया चामीगर-पागारा णाणामणि-पंचवण्ण कविसीसग- परिमण्डिया सुरम्मा ! अलकापुरी संकासा पमुइय-पक्कीलिया पच्चक्खं देवलोगभूया पासाइया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

सूत्र ४ :

आर्य जम्बू—हे भगवन् ! यदि श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा सूत्र के प्रथम वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं, जैसे गौतम आदि, तो हे भगवन् ! भगवान महावीर स्वामी ने प्रथम अध्ययन में क्या भाव कहा है ? किस प्रकार का वर्णन किया है ?

आर्य सुधर्मा—हे जम्बू ! वह इस प्रकार है ।

उस काल उस समय में द्वारका नाम की एक नगरी थी । वह नगरी बारह योजन लम्बी, नौ योजन चौड़ी थी । धनपति-कुबेर ने अपनी बुद्धि कल्पना से उसका निर्माण किया था । वह सोने के कोट से युक्त, पांच प्रकार की (इन्द्र, नील, वैडूर्य, पदम एवं राग आदि) मणियों से जटित कंगूरों से सुशोभित थी । कुबेर की नगरी अलकापुरी के समान बड़ी सुरम्य लगती
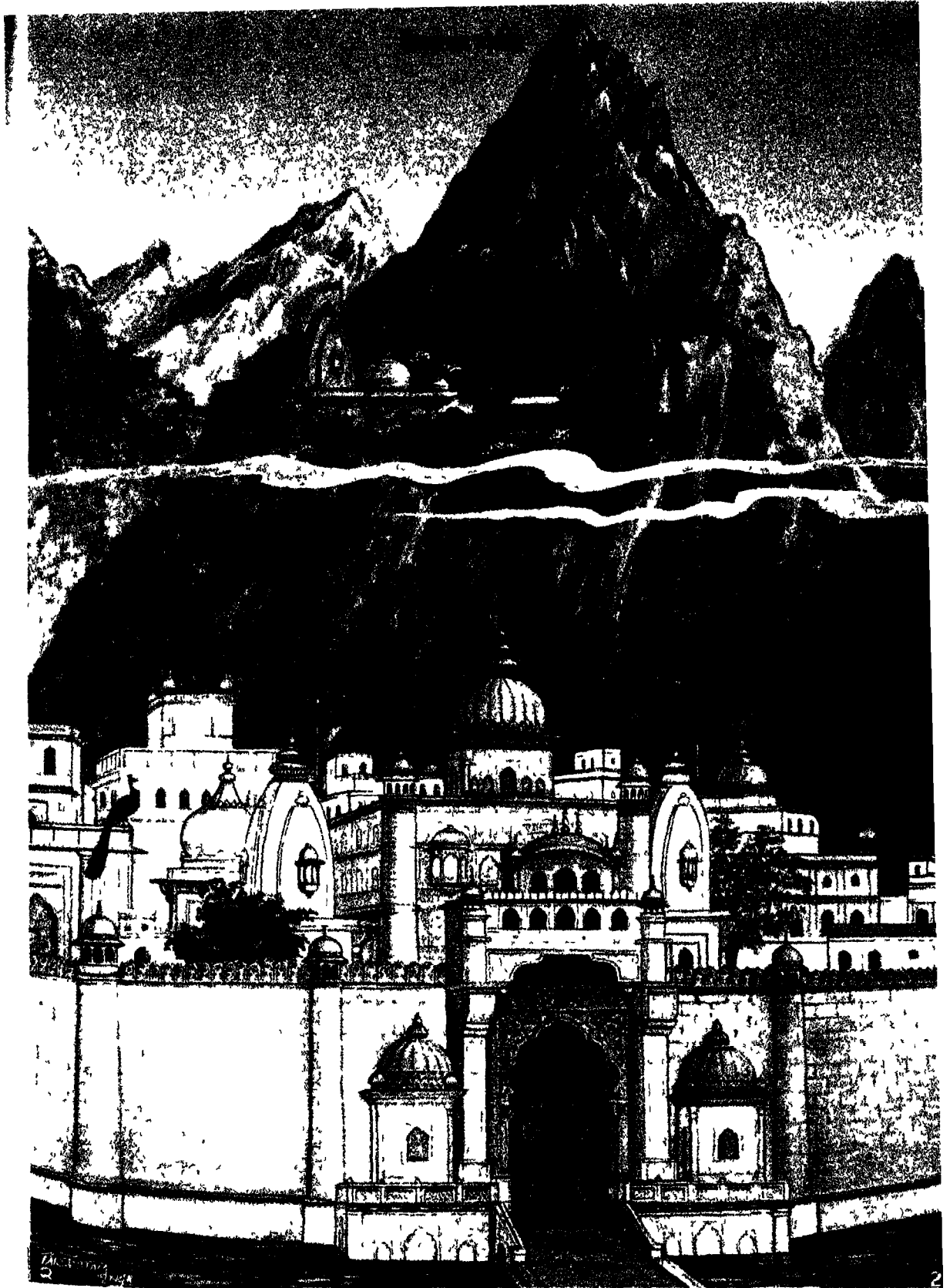
चित्रक्रम २ :

द्वारका नगरी

सुधर्मा स्वामी ने द्वारका नगरी के विषय मे बताया–"कुवेर की नगरी के समान समृद्धि-सम्पन्न द्वारका नगरी के उत्तर-पूर्व दिशा मे रैवतक नामक विशाल पर्वत था, रैवतक पर्वत पर नन्दनवन नामक उद्यान तथा सुरप्रिय यक्ष का यक्षायतन था। वनखड के मध्य मे एक विशाल अशोक वृक्ष तथा उसके नीचे पृथ्वी शिलापट्ट था।" (वर्ग १/अध्य १)

Illustration No. 2 :

Dwārakā city.

Sudharmā Swāmī told about *Dwaraka* city–"*Dwarakā* was a flourishing city, like the city of *Kubera* (god of wealth) In the north-east direction of this city there was a great, high and vast mountain named *Raivataka* At that mountain, there was a garden–park named *Nandanavana* and sanctuary of *Surapriya Yaksa* (deity) In the middle of park–garden, there was a huge *Aśoka* tree and under it a large smooth rock

(See 1/Ch 1)

थी । प्रमोद (आमोद-प्रमोद) और क्रीड़ा के अनेक स्थान बने हुए थे, जिनसे साक्षात् देवलोक के समान मन को प्रसन्न करने वाली और दर्शनीय थी । वह अभिरूप—एक बार देखने पर बार-बार देखने की इच्छा उत्पन्न करने वाली और प्रतिरूप—जब भी देखो, तब नई सजी हुई सी प्रतीत होती थी ।

Chapter 1

Description of Dwārakā City

Maxim 4 :

Ārya Jambū–O *Bhagawan* ! If *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has expressed ten chapters of first section of eighth *Aṅga Antakṛddaśā sūtra*, like *Gautama* etc., then O *Bhagawan* ! What subject matter told *Bhagawāna Mahāvīra* in first chapter ? Which type of expression he made ?

Ārya Sudharmā–O *Jambū* ! Definitely that description is like this.

At that time and at that period there was a city named *Dwārakā (Bāravaī)*. It was twelve *Yojana* long and nine *Yojana* broad. It was built by the imaginative intellect of *Vaiśramaṇa* (*Kubera*–the god of wealth). It had ramparts of gold and adorned by turrets studded by five kinds of gems–*Indra, Nīla, Vaiḍūrya, Padma, Rāga* etc. It was beautiful, as *Alakāpurī*–the city of god of wealth. There were numerous places of sports and pastime, rejoicings, amusements etc. On account of these, it was heart-pleasing like heaven and worth-seeing. It was *abhirūpa*–seeing once inspires the desire of seeing over and again; and *pratirūpa*–whenever visualised seemed newly adorned, that is, it was adorned in such a peculiar style that whenever seen by any corner and any way a new reflection of adornment came into view.

विवेचन

जैसा कि पहले बता चुके हैं प्रारंभ के पाँच वर्गों के ५१ अध्ययनों में जिन साधक आत्माओं का वर्णन है उनका सम्बन्ध द्वारका नगरी एवं वासुदेव श्रीकृष्ण के राज परिवार के साथ रहा है। इसलिए सर्वप्रथम द्वारका नगरी आदि का वर्णन किया गया है।

द्वारका—भारतीय साहित्य और इतिहास में अत्यन्त प्रसिद्ध यह नगरी भारत की अतीव समृद्धिशाली और सुन्दरतम नगरियों में थी। इसके निर्माण के विषय में यह घटना प्रसिद्ध है—

मथुरा के अत्याचारी शासक कंस का श्रीकृष्ण के हाथों अन्त हो जाने पर उसकी पत्नी जीवयशा रोती बिलखती अपने पिता प्रतिवासुदेव जरासंध के पास गई। उसका हृदय विदारक विलाप और उत्तेजक वचन सुनकर जरासंध क्रोध में आग बबूला हो उठा। उसने शौरीपुर के राजा समुद्रविजय जी के पास दूत भेजा कि यदि अपना भला चाहते हो तो तुरंत कृष्ण-बलराम को मेरे पास भेज दो, अन्यथा मैं शौरीपुर का सर्वनाश कर डालूँगा।

समुद्रविजय जी ने अपने मंत्रियों एवं निमित्तज्ञों से पूछा—हमें क्या करना चाहिए ? प्रधान निमित्तज्ञ ने बताया—यद्यपि आपके वंश में तीन-तीन महापुरुष पैदा हुए हैं। भावी तीर्थंकर कुमार अरिष्टनेमि, वासुदेव श्रीकृष्ण एवं बलदेव बलभद्र। इनके रहते कोई आपका बाल बांका नही कर सकता, परन्तु यह भूमि यादवों के लिए अनुकूल नहीं है। आये दिन के सघर्ष एवं अशान्ति से बचने के लिए आप सपरिवार दक्षिण-पश्चिम दिशा में प्रस्थान कर दीजिए। जाते-जाते जहाँ पर सत्यभामा पुत्र रत्न को जन्म दे, वहीं पर अपना झण्डा गाड़ दें। उसी भूमि पर यादव वंश का अभ्युदय होगा।

समुद्रविजय जी, वसुदेव, श्रीकृष्ण, बलभद्र आदि पूरा यादव कुल चलता-चलता दक्षिण-पश्चिमी समुद्रतट पर पहुँच गया। वहाँ रैवतक गिरि की वायव्य दिशा में छावनी डाली। वहीं पर सत्यभामा ने भानु और भ्रमर—दो पुत्रों को जन्म दिया। निमित्तज्ञ के कहे अनुसार वहीं पर यादवों ने अपनी राजधानी बनाने का निश्चय किया। वासुदेव श्रीकृष्ण ने अष्टम भक्त तप करके देवता का स्मरण किया। सुस्थित नामक देव उपस्थित हुआ। वासुदेव ने कहा—मेरे लिए एक नई नगरी का निर्माण करो। देवता ने इन्द्र महाराज को श्रीकृष्ण वासुदेव की भावना बताई। इन्द्र महाराज ने वैश्रमण कुबेर को आदेश दिया कि वासुदेव श्रीकृष्ण के लिए एक अतीव रमणीय विशाल नगरी का निर्माण करो। कुबेर ने १२ योजन लम्बी और ९ योजन चौड़ी एक भव्य विशाल नगरी का निर्माण किया। इस नगरी में अनेक द्वार-उपद्वार होने से इसका नाम (द्वारवती) द्वारका रखा गया।

आचार्य हेमचन्द्र के वर्णन के अनुसार—यहीं पर पहले वासुदेव की द्वारका नामक नगरी थी जो बाद में समुद्र में डूब गई। कुबेर ने उसी स्थान पर वैसी ही नगरी का निर्माण किया इसलिए उसका भी नाम द्वारका रखा।

—(त्रिषष्टि शलाका ८,१५१)

कुछ विद्वानों का मत है कि–उसमें दश दशार्ह, एक राजा श्रीकृष्ण, एवं बलदेव यों बारह प्रमुख शासक (स्वामी) होने से इसका नाम बारापति पड़ा जो धीरे-धीरे द्वारापति या द्वारका कहलाई।

● पासादीया आदि ४ विशेषणों का अर्थ इस प्रकार है–

पासादीया–जिसे देखने से प्रसन्नता अनुभव हो।

दरिसणीया–जो देखने योग्य हो।

अभिरूवा–जिसे बार-बार देखने का मन होता हो।

पडिरूवा–जिसे जब भी देखो, सुन्दर और सुरम्य दीखे।

Elucidation

As it is expressed in previous pages that the description of 51 propiliators has been given in former five sections, these all were related to *Dwārakā* city and the royal family of *Vāsudeva Śrī Kṛṣṇa*. Hence first of all, the description of *Dwārakā* city has been given

Dwārakā–It is the most popular city in History and literature of India. It was most beautiful and wealthy city How and why it was built, the following popular episode makes it clear to understand easily.

When *Śrī Kṛṣṇa* murdered the cruel and tyrant ruler of *Mathurā* city, named *Kansa*, then the wife of *Kaṅsa–Jīvayaśā* went to her father *Jarāsandha*, who was anti-*Vāsudeva* and ruler of *Rājagṛha* (really monarch of deccan half of Indian penunsula). Weeping bitterly *Jīvayaśā* expressed the whole happenings and murder of her husband *Kaṅsa*, to her mighty father *Jarāsandha*. Listening all this *Jarāsandha* became red in fury. He sent his ambassador to *Śorīpura-ruler–Samudravijaya* (*Samudravijaya* was the great father of *Kṛṣṇa* and *Balarāma;* because the father of *Kṛsna* and *Balarāma–Vasudeva* was the youngest brother of *Samudravijaya. Kṛṣṇa Balarāma* both went to *Śorīpura* after killing *Kaṅsa).*

Ambassador came to the court of *Samudravijaya* and spoke in harsh words–*Samudravijaya* ! Either you send *Kṛṣṇa-Balarāma* with me at once or my lord *Jarāsandha* will destroy you, your city and all *Yādavas* exhaustively.

The harsh words were intolerable to *Kṛṣṇa*. He disgraced the ambassador and ambassador returned back angrily.

Samudravijaya called a meeting of his kiths and kins, ministers and royal astrologers and then asked–What should be done in present circumstances ?

Premier Astrologer told–Though in your family there are three highly great persons–(1) *Tirathaṁkara Aristanemi*, (2) *Vāsudeva Krsṇa* and (3) *Baladeva Balarāma*, so none can harm you, may he be mighty like *Yama*; but this land (territory) is not favourable for *Yādavas*. So for avoiding the struggle and peacelessness of everyday, you should leave this place and go to south-west direction with all your families and citizens. You please stop at the place, where *Satyabhāmā*, wife of *Śrī Kṛṣna*, give the birth to a son. That land would be favourable to *Yādavas* and there you will prosper.

According to the counsel of royal astrologer, *Samudrovijaya*, *Vasudeva*, *Kṛṣṇa*, *Balarāma* etc., whole *Yādava* family and citizens went out from *Śorīpura* and approached the south-west coast of ocean (*Lavana samudra;* present Arabian gulf.) Here all encamped near *Raivataka* mountain. At that place *Satyabhāmā* gave birth to two sons–(1) *Bhānu* and (2) *Bhramara* *Yādavas* decided to establish their capital at that very place. Observing three days' fast *Śrī Kṛsna* called a deity. *Susthita* deity came *Vāsudeva* expressed his desire–Please, construct a new city for me Deity went to his ruler-*Indra* and gave words to the desire of *Kṛṣṇa*. *Indra* ordered *Vaiśramana*– *Kubera* (god of wealth) to construct a very beautiful, heart.-pleasing great and vast city for *Vāsudeva Śrī Kṛṣṇa*.

Kubera constructed a vast and grand city which was twelve *yojanas* in length and nine *yojanas* in breadth. In this city there were many great and small gates, so it was named as *Dwārakā*.

According to *Ācārya Hemacandra* previously at this place was situated of first *Vāsudeva's Dwārakā* city which was drowned in the sea afterwards. *Kubera* created at same place, the city, which was like old city. Therefore it is also named as *Dwārakā*, (*Triṣaṣṭi Śalākā*, 8-151)

Some scholars opine that in this city there were twelve rulers (chief administrators–ten *Daśārhas*, *Śrī Krsna* and *Balarāma*, so it is called *Bārāpati*, which laterly became *Dwārāpati*, *Bāravaī* and finally *Dwārakā*

Modern Historians and archaelogists say that this city was the centre of sea-trade from Arabian contries and middle east Asia in ancient time so it was called as western gateway of India. Hence this city became popular as *Dwārakā*.

■ The meanings of four adjectives *Pāsādīya* etc., are as under–

Pāsādīyā–By seeing which the feeling of pleasure asoures.

Darisaṇīyā–worth-seeing.

Abhirūvā–Desire arouses for seeing which again and again.

Padirūvā–Whenever seen it looked new, nice and splendid.

सूत्र ५ :

तीसे णं बारवईए णयरीए बहिया उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए, एत्थ णं रेवयए णामं पव्वए होत्था । वण्णओ ।

तत्थ णं रेवयए पव्वए णंदणवणे णामं उज्जाणे होत्था । वण्णओ ।

सुरप्पिए णामं जक्खाययणे होत्था पोराणे से णं एगणं वणसंडेणं परिक्खित्ते असोगवरपायवे ।

तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे णामं वासुदेवे राया परिवसइ महया हिमवंत राय-वण्णओ ।

से णं तत्थ समुद्दविजयपामोक्खाणं दसण्हं दसाराणं । बलदेवपामोक्खाणं पंचण्हं महावीराणं । पज्जुण्ण-पामोक्खाणं अद्धुट्ठाणं कुमारकोडीणं । संबपामोक्खाणं सट्ठीए दुद्दंत साहस्सीणं । महासेणपामोक्खाणं छप्पण्णाए बलवग्ग साहस्सीणं । वीरसेण-पामोक्खाणं एगवीसाए वीरसाहस्सीणं । उग्गसेणपामोक्खाणं सोलसण्हं रायसाहस्सीणं । रुप्पिणीपामोक्खाणं सोलसण्हं देवीसाहस्सीणं । अणंगसेणापामोक्खाणं अणेगाणं गणियासाहस्सीणं । अण्णेसिं च बहूणं ईसर जाव सत्थवाहाणं

बारवईए णयरीए अद्धभरहस्स य सम्मत्तस्स य आहेवच्चं जाव विहरइ ।

श्रीकृष्ण का राज-वैभव

सूत्र ५ :

उस द्वारका नगरी के बाहर ईशान कोण (पूर्व एवं उत्तर दिशा के बीच) में रैवतक नाम का एक पर्वत था । उस रैवतक पर्वत पर नन्दन वन नाम

का एक उद्यान था । उस नन्दन वन में सुरप्रिय नाम का एक प्राचीन यक्षायतन (यक्ष मन्दिर) था । वह उद्यान चारों तरफ से एक विशाल वन खण्ड से घिरा हुआ था, और उस वन खण्ड में एक विशाल अशोक वृक्ष था ।

उस द्वारका नगरी में श्रीकृष्ण वासुदेव राज्य करते थे । जो कि महा हिमवान पर्वत के समान, मर्यादा पुरुषोत्तम थे । (राजा एवं नगरी का वर्णन औपपातिक सूत्र के वर्णन के अनुसार जानना चाहिए ।)

द्वारका नगरी में समुद्रविजय जी आदि दश दशार्ह (पूज्य पुरुष) निवास करते थे । महावीर कहे जाने वाले बलदेव आदि पांच श्रेष्ठ महाबली, प्रद्युम्न आदि साढ़े तीन करोड़ कुमार भी द्वारका में थे । शाम्बकुमार, जिनमें प्रमुख गिने जाते थे ऐसे साठ हजार दुर्दान्त वीर तथा महासेन आदि छप्पन हजार बलवर्ग (सैन्यसमूह) थे । वीरसेन आदि इक्कीस हजार वीर योद्धा, उग्रसेन प्रमुख सोलह हजार राजा एवं रुक्मिणी प्रमुख सोलह हजार रानियां थीं । अनंगसेना आदि हजारों गणिकाएं भी द्वारका में रहती थीं । इनके अतिरिक्त अन्य बहुत से ईश्वर (सम्मानित पदधारी नागरिकों) से लेकर अनेक सार्थवाह (व्यापारी) आदि उस नगरी में निवास करते थे ।

इस प्रकार (विपुल वैभव एवं शक्तिशाली वीर योद्धाओं, नागरिकों से सम्पन्न) उस द्वारका नगरी तथा समस्त अर्ध भरत क्षेत्र (जम्बूद्वीप के भरतक्षेत्र के तीन खण्डों) का अधिपतित्व करते हुए वासुदेव श्रीकृष्ण वहां राज्य करते थे ।

Magnificence of Śrīkṛṣṇa's Empire

Maxim 5 :

Out of *Dwārakā* city in the middle of East-North directions (*Īṣāna Koṇa*) there was a mountain named *Raivataka*. On *Raivataka* mountain there was a garden, named *Nandana vana*. In that *Nandana Vana* there was a temple (sanctuary) of *Surapriya Yakṣa* (deity) which was very old. That garden was surrounded by one vast

वासुदेव श्री कृष्ण
का राज वैभव

चित्रक्रम ३ :

श्रीकृष्ण वासुदेव का राजवैभव

वासुदेव श्रीकृष्ण की राजसभा मे एक ओर समुद्रविजय, वसुदेव आदि कुल के पूज्य पुरुष आसीन है । दूसरी ओर गदाधर बलदेव, प्रद्युम्नकुमार, शाम्ब आदि वीर तथा महासेन, वीरसेन आदि सेनानायक, एक ओर नगर के प्रमुख सार्थवाह आदि उपस्थित है । अनगसेना गणिका नृत्य-गीत से सभा का मनोरजन कर रही है । सभा कक्ष मे सुदर्शन चक्र पांचजन्य शख आदि सज्जित दीख रहे है । (वर्ग १/अध्य १)

Illustration No. 3 :

View of *Vāsudeva Śrī Krsna's* royal assembly.

In the royal assembly of *Vāsudeva Śri Krsna*, at one side sitting *Samudravijay* etc , adorables On the other side sitting mace-bearer *Baladeva, Pradyumna, Śāmbu* etc , braves, *Mahāsena, Virasena* etc , army chiefs and premier traders of city Harlot *Anangasenā* recreating assembly by her music, song and dance *Sudarśana* disc weapon *Pāñcajanya* conch are also seen there (Sec 1/Ch 1)

Vanakhaṇḍa, and in that *Vanakhaṇḍa*, there was a huge *Aśoka* tree.

ŚrīKṛṣṇa ruled over that *Dwārakā* city, who was great and high like mountain *Mahāhimavāna*. (The more description about king and city should be known from *Aupapātika sūtra*.)

In *Dwārakā* city ten adorables (*Daśa Daśārha*) reside viz., *Samudravijayajī* etc. And there dwell *Balarāma* etc., five great warriors, *Pradyumna* etc., three and half crores princes, sixty thousand great fighters among them *Śāmba Kumāra* was the foremost, over fifty six thousand mighty men (army groups) among them foremost was *Mahāsena*. *Vīrasena* etc., twentyone thousand brave-men, *Ugrasena* etc., sixteen thousand rulers and *Rukmiṇī* (being foremost) etc., sixteen thousand queens dwell in *Dwārakā* city. *Anaṅgsenā* etc., thousands of prostitutes (harlots)–courtesans also live there. Besides these, other many-numerous *Īśwaras* (having respectable post and position), citizens, *sārthavāhas* (traders) etc., also live in this city.

In this way with vast fortune, magnificence, mighty warriors, citizens, *Dwārakā* city was opulent. *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* ruled over this city and deccan half of India (three parts of *Bharata-Kṣetra* of *Jambūdwīpa*).

सूत्र ६ :

तत्थ णं बारवईए णयरीए अंधगवण्ही णामं राया परिवसइ । महया हिमवन्त, वण्णओ ।

तस्स णं अंधगवण्हिस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था, वण्णओ । तए णं सा धारिणी देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि सयणिज्जंसि एवं जहा महाबले—

सुमिणदंसणं कहणा जम्मं बालत्तणं कलाओ य,

जोव्वण-पाणिग्गहणं, कंता पासाय भोगा य ।

णवरं गोयमो नामेणं । अट्ठण्हं रायवर कन्नाणं एगदिवसेण पाणिं । गिण्हावेंति अट्ठट्ठओ दाओ ।

सूत्र ६ :

उस द्वारका नगरी में अंधकवृष्णि राजा निवास करते थे, जो महान हिमालय पर्वत की भांति मर्यादा पालक और समर्थ थे । धारिणी नाम की उनकी रानी थी ।

किसी दिन धारिणी रानी अपने शयनागार में (**तंसि तारिसगंसि**–पुण्यवान जनों के योग्य) सुख शय्या पर सोई हुई थी । (इसका वर्णन महाबल के प्रकरण के अनुसार समझ लेना चाहिए) जैसा कि–

धारिणी रानी का सिंह स्वप्न दर्शन, पति को स्वप्न कथन, बालक का जन्म, उसकी बाल-लीलाएं, कला शिक्षण, युवा अवस्था आने पर योग्य कन्याओं के साथ पाणिग्रहण, कान्त रमणीय प्रासाद में रहना और सांसारिक भोग भोगना आदि वर्णन यहां महाबल के समान समझ लेना चाहिए ।

विशेष यह है कि बालक का नाम गौतम कुमार रखा गया । एक दिन में आठ उत्तम कुलीन राजकन्याओं के साथ पाणिग्रहण हुआ और कन्यापक्ष की ओर से दाय=प्रीतिदान में आठ हिरण्य कोटि (स्वर्णमुद्राएँ) मिलीं ।

Maxim 6 :

In *Dwārakā* city ruler *Andhakavṛṣṇi* inhabited. He was great like *Himawāna* mountain. *Dhāriṇī* was his queen.

Once *Dhāriṇī* was sleeping on very comfortable bed, (such a bed can be available to meritorious persons–*taṁsi tārisagaṁsi)* in her bedroom. (Its all desoription should be understood from the episode of *Mahābala*. As–

धारणी रानी का स्वप्न दर्शन
गौतम कुमार का जन्म उत्सव
बाल क्रीड़ा
शस्त्र शिक्षा

चित्रक्रम ४ :

गौतमकुमार का जन्म एवं शिक्षण

प्रथम दृश्य में रानी धारिणी सुसज्जित शयन कक्ष मे सोयी श्वेत सिह का स्वप्न देखती है ।

द्वितीय दृश्य मे गौतमकुमार के जन्म की खुशिया मनाई जा रही है । नृत्य गान हो रहा है तथा मिष्टान्न बाँटा जा रहा है ।

तृतीय दृश्य मे गौतमकुमार की बालक्रीडा, गुरु के पास शस्त्रशिक्षण तथा आठ राजकन्याओ मे पाणिग्रहण का दृश्य है।   (वर्ग १/अध्य १)

Illustration No. 4 :

Birth and learning of *Gautamakumāra*

First Scene–Sleeping in her decorated bed-room queen *Dhāriṇī* dreams a lion of white colour

Second scene–Birth ceremony held of *Gautamakumara*, singing and dancing, sweets are distributed

Third scene–Childish plays of *Gautamakumāra*, learning of strategy from teacher and marriage with 8 royal priceses,   (Sec 1/Ch 1)

Queen *Dhāriṇī's* seeing the dream of a lion, expressing her dream to her husband, babybirth, funs of baby, studies of arts etc., young age, marriage with beautiful and cultured maidens, residing in a comfortable and pleasant palace, and enjoyment of worldly pleasures etc. All the description should be conceived here like *Mahābala*.

Here mentionable speciality is—that name of baby was kept *Guatama Kumāra*. He married eight princesses a day and he got eight crore gold-coins from his fathers-in-law as dowery (*dāya*).

सूत्र ७ :

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी आइगरे जाव विहरइ। चउव्विहा देवा आगया। कण्हे वि णिग्गए।

तए णं से गोयमे कुमारे जहा मेहे तहा णिग्गए। धम्मं सोच्चा णिसम्म जं णवरं देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि। देवाणुप्पियाणं अंतिए पव्वयामि।

एवं जहा मेहे, जाव अणगारे जाए, इरियासमिए जाव इणमेव णिग्गंथं पावयणं पुरओ काउं विहरइ।

तए णं से गोयमे अणगारे अण्णया कयाइं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ अहिज्जित्ता बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमि अण्णया कयाइं बारवईओ णयरीओ णंदणवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ। पडिणिक्खमित्ता बहिया जणवयविहारं विहरइ।

भगवान अरिष्टनेमि का द्वारका आगमन और गौतमकुमार की दीक्षा

सूत्र ७ :

उस समय अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान ग्रामानुग्राम विहार करते हुए द्वारका नगरी के नन्दनवन उद्यान में पधारे। भगवान का समवसरण

लगा। भवनपति, वाणव्यन्तर, ज्योतिषी एवं वैमानिक–चारों जाति के देव दर्शन करने आये। वासुदेव श्रीकृष्ण भी हजारों के जन समूह के साथ प्रभु के दर्शनार्थ आये।

तब, वह गौतमकुमार भी मेघकुमार की तरह प्रभु के दर्शन करने के लिए घर से निकला। धर्मोपदेश सुनकर हृदय में धारण करके प्रभु से प्रार्थना की–हे देवानुप्रिय ! मैं अपने माता-पिता को पूछकर, उनकी अनुमति प्राप्त कर आप देवानुप्रिय के पास, प्रव्रजित (श्रमण दीक्षा लेना) होना चाहता हूँ।

इस प्रकार मेघकुमार की भाँति, गौतमकुमार ने भी माता-पिता से आज्ञा मांगी। अन्त में बड़े समारोह पूर्वक गौतमकुमार ने दीक्षा ग्रहण कर ली। ईर्यासमिति आदि पांच समिति एवं तीन गुप्ति से सावधान रहकर निर्ग्रन्थ प्रवचन-अर्थात् भगवान की आज्ञा अनुशासन को शिरोधार्य करके विचरने लगे।

उसके पश्चात् गौतम अणगार ने अरिहंत अरिष्टनेमि भगवान के तथारूप-गुण सम्पन्न गीतार्थ स्थविरों के पास सामायिक (आवश्यक सूत्र-श्रुत) आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। अध्ययन करके गौतम अणगार बहुत से उपवास यावत् (बेला, तेला आदि) तप द्वारा आत्मा को भावित करते हुए आत्मानन्द में लीन रहने लगे।

तब, अरिहंत अरिष्टनेमि ने किसी अन्य दिन, द्वारका नगरी के नन्दनवन उद्यान से प्रस्थान किया और अन्य भव्य जीवों को मोक्ष मार्ग का प्रकाश करते हुए विचरने लगे।

Coming of Bhagawāna Ariṣṭanemi to Dwārakā and Consecration of Gautamakumāra

Maxim 7 :

At that time and at that period *Arihanta Ariṣṭanemi* wandering village to village came to *Nandana* garden of *Dwārakā* city, the religious council *(samavasaraṇa)*

held. *Bhavanapati, Vāṇavyantara, Jyotiṣka, Vaimānika*– all the four kinds of gods came to see and bow down to *Bhagawāna*. *Vāsudeva Śrīkṛṣṇa* also came with thousands of people, to see and bow down to him.

Then, that *Gautamakumāra* also came out of his palace, for seeing and bowing down *Bhagawāna* like *Meghakumāra*. Hearing and taking to heart the sermon of *Bhagawāna*, he requested him–O Reverend sir ! (*Devāṇupriya*–beloved as gods) asking permission from my parents, I want to accept consecration near your lotus feet.

Thus, like *Meghakumāra, Gautamakumāra* also asked permission from his parents. In the end *Gautamakumāra* accepted consecration with great pomp and show. He accepted five circumspections (*Samiti*) as circumspection of movement (*Īryā samiti*) and three incognitoes (*gupti*) and began to wander according to the discipline of *Bhagawāna*, i.e., Jain religious monk order.

Thereafter friar (*aṇagāra*) *Gautama* learnt *Sāmāyika* (*Āvaśyaka sūtra*) etc., eleven *aṅgas* from the elder monks of *Bhagawāna Ariṣṭanemi*. After it observing many types of fast penances, like one day', two days', three days' fast penences etc., and by other types of austerities purifying his soul *Gautama* ascetic reserved himself in soul bliss.

Then, any other day *Arihanta Ariṣṭanemi* went out from *Nandana* garden of *Dwārakā* city and began to wander village to village telling the path of salvation to other souls–beings.

सूत्र ८ :

तए णं से गोयमे अणगारे अण्णया कयाइं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ । करित्ता, वंदइ णमंसइ । वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे मासियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।

एवं जहा खंदओ तहा बारस भिक्खु पडिमाओ फासेइ । फासित्ता गुणरयणं वि तवोकम्मं तहेव फासेइ णिरवसेसं । जहा खंदओ तहा चिंतेइ तहा आपुच्छइ । तहा थेरेहिं सद्धिं सेत्तुंजं दुरूहइ, मासियाए संलेहणाए बारस वरिसाइं परियाए जाव सिद्धे ।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं पढमस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।

(पढमं अज्झयणं सम्मत्तं)

सूत्र ८ :

उसके पश्चात् अन्य किसी दिन, गौतम अणगार जहाँ अरिहंत अरिष्टनेमि विराजमान थे वहाँ आये । अरिहंत अरिष्टनेमि को विनयपूर्वक तीन बार दाईं ओर से बाईं ओर प्रदक्षिणा की, प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया–

हे भगवन् ! मेरी इच्छा है कि आपकी आज्ञा–अनुमति प्राप्त होने पर मैं मासिकी भिक्षु प्रतिमा अंगीकार करूँ ?

(अरिहंत अरिष्टनेमि ने कहा–देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो, शुभ कार्य में विलम्ब मत करो ।)

इस प्रकार गौतम अणगार ने स्कन्धक मुनि की तरह क्रमशः बारह भिक्षु प्रतिमाओं की आराधना की । फिर गुणरत्न नामक तप की भी उसी प्रकार सम्पूर्ण आराधना की ।

तप आराधना करते हुए गौतम अणगार ने स्कन्धक मुनि की भांति ही विचार किया, और स्थविर मुनियों को साथ लेकर शत्रुंजय पर्वत पर चढ़े । वहाँ शुद्ध भूमि की प्रतिलेखना कर एक मास की संलेखना की । इस प्रकार संलेखना पूर्वक बारह वर्ष की निर्दोष दीक्षा पर्याय पूर्ण करके, केवल ज्ञान प्राप्त कर अन्त में सर्व कर्मों का क्षय करके सिद्ध हुए ।

श्रुत अध्ययन
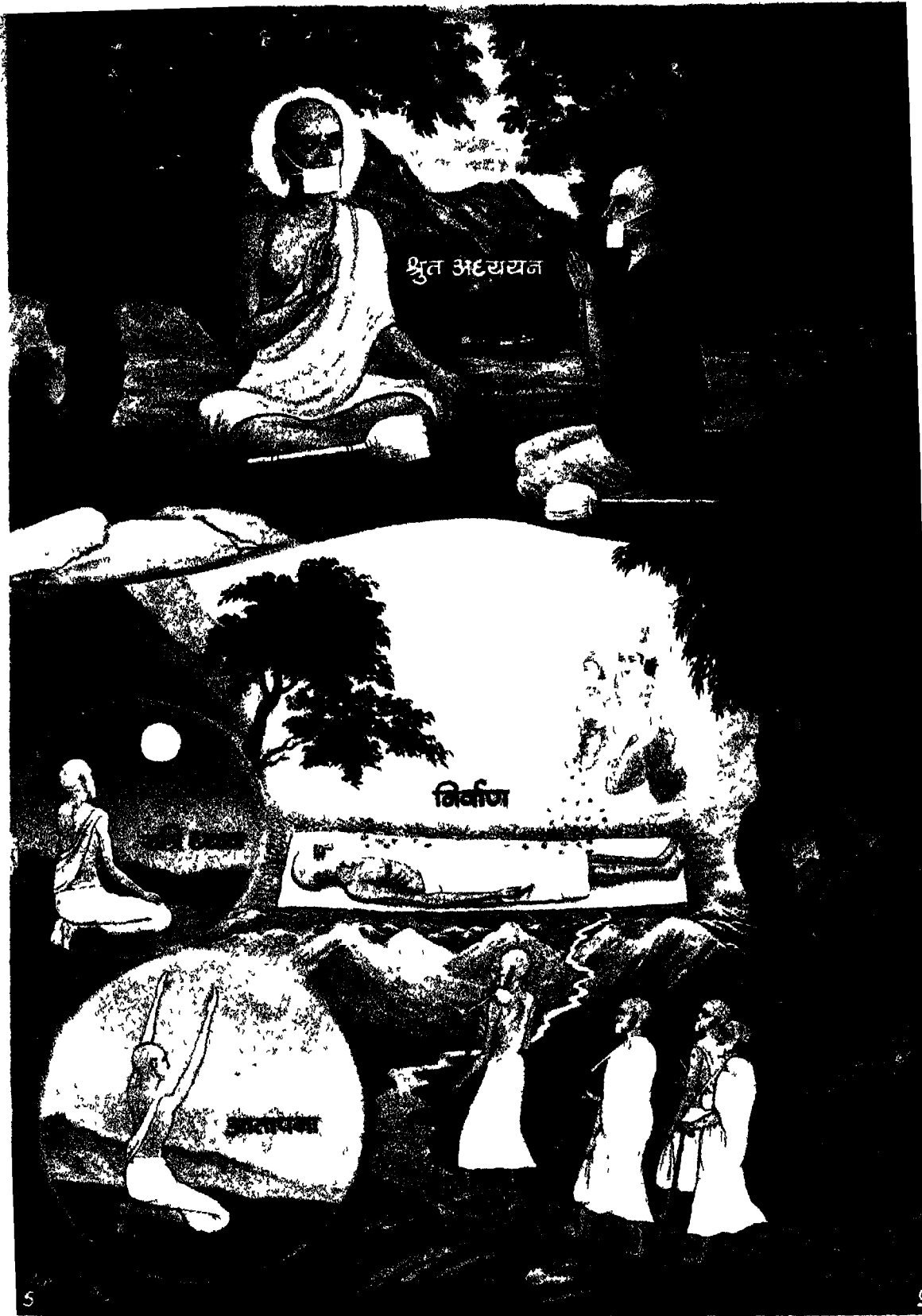
निर्वाण

चित्रक्रम ५ :

गौतम अणगार का निर्वाण

गौतमकुमार ने दीक्षित होकर स्थविरों के पास ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। फिर भिक्षु प्रतिमा अंगीकार की तथा गुणरत्न संवत्सर तप किया। दिन मे सूर्य की प्रखर किरणों के सामने वीरासन से बैठकर आतापना के साथ तथा रात्रि में उकडू आसन से ऊर्ध्वबाहु होकर ध्यान करते है। अन्त मे स्थविरों के साथ शत्रुंजय पर्वत पर जाकर एक मास की संलेखना पूर्वक निर्वाण पद प्राप्त किया। देवताओं ने गौतम मुनि का निर्वाण-महोत्सव मनाया। (वर्ग १/अध्य. १)

Illustration No. 5 :

Salvation of friar *Gautama*

Consecrated *Gautama* learnt eleven *angas* from elder sages, practised sage-firm resolutions, observed *Gunaratna samvatsara* austerity. In day time, sitting by *Virasana* posture grasped the heat of sharp sun-rays and in the night sitting with *utkatuka* posture and raising hands upwards meditated. At the ending period of life rode on mount *Śatrunjaya* with elder sages and attained salvation with one month's *Samlekhana* and gods celebrated salvation-ceremony of monk *Guatama*. (Sec. 1/Ch. 1)

आर्य सुधर्मा–हे जम्बू ! इस प्रकार श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा के प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन का यह भाव कहा है ।

(प्रथम अध्ययन समाप्त)

Maxim 8 :

Thereafter any other day ascetic *Gautama* reached to *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, circumabulated three times, worshipped and bowed down him with devotion, then respectfully expressed his wish–

"*O Bhagawan* ! If you allow me, I want to observe one month *Bhikṣu Pratimā*.

(*Arihanta Ariṣṭanemi* said–Beloved as gods (*Devāṇupriya*) ! Do as you feel happy, but do not delay in meritorious deeds).

Thus *Gautama* ascetic observed twelve *Bhikṣu Pratimās* like *Skandhaka* monk and practised *Guṇaratna saṁvatsara* penance

Practising penances and austerities ascetic *Gautama* also thought like monk *Skandhaka* and then with elder saints climbed up on *Śatruñjaya* mountain. There he searched a place without flora and insects, i.e., pure place. He made it neat and clean. After that with pure heart and steady propiliation, he accepted one month's fast penance (*saṁlekhaṇā*–Really it is a fast penance till death).

Thus with *saṁlekhaṇā* and fulfilling twelve years' consecration period and obtaining infinite knowledge, consuming all *karmas* he attained liberation.

Ārya Sudharmā–O Jambū ! Thus *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has expressed the subject matter of first chapter of first section of *Antakṛddaśā sūtra*.

[First Chapter concluded]

अध्ययन २–१०

सूत्र १ :

एवं जहा गोयमो तहा सेसा वि वण्ही पिया धारिणी माया ।

समुद्दे सागरे गंभीरे थिमिये, अयले कंपिल्ले अक्खोभे, पसेणई विण्हू ए-ए एगगमा ।

पढमो वग्गो दस अज्झयणा पण्णत्ता ।

सूत्र १ :

इस प्रकार जैसा गौतम अणगार का वर्णन किया गया है, उसी प्रकार अन्य नौ का भी वर्णन समझना चाहिए । इन सबके पिता वृष्णि तथा माता धारिणी रानी थी । इन अन्य कुमारों के नाम इस प्रकार हैं–

२. समुद्रकुमार, ३. सागरकुमार, ४. गंभीरकुमार, ५. स्तिमितकुमार, ६. अचलकुमार, ७. कांपिल्यकुमार, ८. अक्षोभकुमार, ९. प्रसेनजित, १०. विष्णुकुमार ।

इन सभी अध्ययनों का वर्णन गौतम मुनि की तरह एक समान जानना चाहिए ।

इस प्रकार प्रथम वर्ग के दस अध्ययन कहे गये हैं ।

(प्रथम वर्ग समाप्त)

Chapterú 2 to 10

Maxim 1 :

Thus, as the description of ascetic *Gautama* has been given, in the same way the description of other 9 chapters should be known and understood. The father of all these was *Andhakavṛṣṇi* and mother was queen *Dhāriṇī* ; but the names of *Kumāras* were–

(2) Samudra Kumāra, (3) Sāgara Kumāra (4) Gambhira Kumāra (5) Stimita Kumāra, (6) Acala Kumāra, (7) Kāmpilya Kumāra (8) Akṣobha Kumāra (9) Prasenajita, and (10) Viṣṇu Kumāra

The subject matter of all these chapters is like monk *Gautama* .

Thus these ten chapters are said.

[Chapters 2 to 10 concluded]
[First Section completed]

विवेचन

भिक्षु प्रतिमा

गौतम अणगार ने महामुनि स्कन्धक के समान भिक्षु की बारह प्रतिमाएँ धारण कीं–प्रतिमाओं का संक्षिप्त स्वरूप इस प्रकार है–

पहली प्रतिमा का धारक साधु एक महीने तक एक दत्ति अन्न की और एक दत्ति पानी की (दाता द्वारा दिये जाने वाले अन्न और पानी की अखण्ड धारा एक दत्ति कहलाती है) लेता है । एक से लेकर सात प्रतिमाओं का समय प्रत्येक का एक-एक मास बढ़ता जाता है । पहली एक मासिकी, दूसरी दो मासिकी, तीसरी त्रैमासिकी, चौथी चार मासिकी, पाँचवी पंच मासिकी, छठी षट्मासिकी और सातवीं सप्तमासिकी कहलाती है । पहली प्रतिमा में अन्न पानी की एक-एक दत्ति, दूसरी में दो, तीसरी में तीन, यावत् क्रमशः सातवीं में सात दत्ति, अन्न की और सात दत्ति ही पानी की ली जाती हैं । आठवीं प्रतिमा का काल सात अहोरात्रि का है । और नवमी प्रतिमा का भी सात दिन रात है । आठवीं, नवमी, दसवीं प्रतिमा में चौविहार उपवास किया जाता है । ग्यारहवीं प्रतिमा का समय एक दिन रात का है और चौविहार बेला करके आराधना की जाती है । बारहवीं प्रतिमा का समय एक रात का है और चौविहार तेले से इसकी आराधना की जाती है ।

भिक्षु प्रतिमाओं का विस्तृत वर्णन अन्तकृद्दशा महिमा में देखिए ।

- रैवतक पर्वत को उज्जयन्त, ऊर्जयन्त, गिरीणाल और गिरनार भी कहा जाता है । महाभारत आदि में भी इस रैवतक पर्वत का वर्णन आता है ।
- जिसमें भिन्न-भिन्न जाति के वृक्ष हों वह वन खण्ड कहलाता है । –ज्ञाता १ टीका

- भगवान अरिष्टनेमि एवं वासुदेव श्रीकृष्ण आदि का जन्म सुप्रसिद्ध हरिवंश में हुआ था। इस वंश में शौर्यपुर के स्वामी शूरसेन नाम के प्रसिद्ध राजा हुए। शूरसेन के पुत्र का नाम शूरवीर था। शूरवीर के दो पुत्र थे–अंधक और वृष्णि। इन दोनों भाइयों के नाम से यह कुल अंधक-वृष्णि कुल नाम से प्रसिद्ध हुआ। (उत्तराध्ययन वृत्ति. २२)
- उत्तर पुराण (७०) के अनुसार शूरवीर के दो पुत्र थे अंधकवृष्णि और नरवृष्णि। अंधकवृष्णि के दस पुत्र थे जो दशार्ह कहलाते थे–१. समुद्रविजय, २. अक्षोभ्य, ३. स्तिमित, ४. सागर, ५. हिमवान, ६. अचल, ७. धरण, ८. पूरण, ९. अभिचन्द्र, १०. वसुदेव। (अभयदेवकृत अन्तकृद्दशावृत्ति।)
- ईश्वर–सचित्र अर्धमागधी कोष के अनुसार 'ईसर' शब्द का प्रयोग–युवराज, मांडलिक राजा, अमात्य, श्रीमंत, श्रेष्ठी आदि के लिए किया जाता था। (स.अ. को. भाग–२, पृष्ठ १५८)
- महाबल का वर्णन भगवती सूत्र शतक–११, उद्देशक ११ में आया है जिसका संक्षेप में हिन्दी भावार्थ अन्तकृद्दशा महिमा में दिया गया है।
- दाय–दात कन्या के विवाह के पश्चात् दी जाने वाली वस्तु (ज्ञाता-वृत्ति)
- देवानुप्रिय–प्राचीन काल में यह एक मधुर सम्मानजनक सम्बोधन था। टीका ग्रन्थों में इस शब्द के दो अर्थ मिलते हैं–(१) देवों के समान प्रिय और (२) सरल आत्मन्। यह शब्द मुख्य रूप से जैन ग्रन्थों में ही मिलता है। वैसे यह सम्बोधन एक आम सम्बोधन था। पिता, पुत्र, गुरु, शिष्य, पति, पत्नी आदि सभी के लिए इसका प्रयोग होता था। सामान्य व्यक्ति के लिए भी 'देवानुप्रिय' शब्द का प्रयोग किया जाता था। बौद्ध साहित्य में 'देवानांप्रिय' शब्द मिलता है।
- मेघकुमार का वर्णन ज्ञातासूत्र अध्ययन १ के अनुसार संक्षेप में अन्तकृद्दशा महिमा में दिया गया है।
- संलेखना के विषय में विशेष स्पष्टीकरण अन्तकृद्दशा महिमा में देखें।

Elucidation

Special Resolution of Monk (Bhikṣu Pratimā)

Ascetic *Gautama* had practised 12 *Bhikṣu Pratimās* (Special resolution of a monk) like great monk *Skandhaka*. The conception of *Bhikṣu Pratimās* is as following–

The practiser of first *Bhikṣu pratimā* takes one *datti* of food and one *datti* of water till one month. The regular flow of food and water, which is being given by a giver is termed as *datti*.

From first to seven *Pratimās*, the time-period of every following *pratimā* increases by one month. As the period of first *pratimā* is one month, second of two months, third of three months, fourth of four months, fifth of five months, sixth of six months and seventh of seven months.

Likewise the number of *dattīs* also increases. As during first *Pratimā* the sage accepts one *datti* of food and one *datti* of water, in second two *dattīs* of food and two *dattīs* of water, in third three *dattīs*, in fourth four *dattīs*, in fifth five *dattīs*, in sixth six *dattis* and in seventh seven *dattīs* of food and water the sage accepts

The time period of eighth *pratimā* is of seven days and nights and so is the case with 9th and tenth *pratimās* All these eighth, nineth and tenth *pratimās* are practised observing complete fast, even not to take water

The time period of eleventh *Bhikṣu Pratimā* is of one day-night only. It is also practised with complete fast penance, meaning to eat and drink nothing–to renounce all the four types of food *annaṁ*, *pānaṁ*, *khādim*, *swādim*.

The time period of twelfth *Bhiksu Pratimā* is of one night only. It also practised with complete three days' fast penance.

–(*Daśāśrutaskandha, Daśā 7*)

Detailed study of *Bhikṣu Pratimās* has been discussed in *Antakṛddaśā Mahimā* Readers are suggested to see that book

- *Raivataka* mountain also called *Ujjayanta, Ūrjayanta, Girīṇāla* and *Giranāra*. The mention of this mountain has also been made in *Mahābhārata* etc

- *Vanakhaṇḍa* denotes a part of wood in which various kinds of trees are found –(*Jñātā 1, Commentary*)

- *Bhagawāna Ariṣtanemi, Vāsudeva Śrīkṛṣna* and their kith and kins took birth in famous *Harivaṁśa*. In this tradition (*Vaṁśa*) the ruler of *Śauryapura*, *Śūrasena* became a famous king. The name of his son was *Śūravīra*. *Śūravīra* had two sons–(1) *Andhaka* and (2) *Vṛṣṇi*. By the name of these two brothers this tradition became popular as *Andhaka–Vṛṣṇikula*. –(*Uttarādhyayana Vṛtti 21*)

According to *Uttar Purāṇa* (70)–*Śūravīra* had two sons–(1) *Andhaka-Vṛṣṇi* and (3) *Nara-Vṛṣṇi.*

Andhaka-Vṛṣṇi had ten sons, who were called *daśārhas* and their names were–(1) *Samudravijaya,* (2) *Akṣobhya* (3) *Stimita* (4) *Sāgara* (5) *Himavāna* (6) *Acala* (7) *Dharaṇa* (8) *Pūrana* (9) *Abhicandra* and (10) *Vasudeva.* –(*Abhayadevavrtti–Antakrddaśā Sūtra*)

- *Īśwara*–According to *Sacitra Ardha-māgadhī Koṣa* the word '*Īśwara*' is used for crown prince, *māṇḍalika rājā* (territorial ruler) *amātya* (minister) *Sāmanta* (government or gazetted officers), rich and wealthy persons etc., –(*S. A. Dictionary, vol. 2. p. 158*)

- The full description of *Mahābala* is given in *Bhagawatī Sūtra, Śataka 11, Uddeśaka 11.* Its simple and brief Hindi version is given in *Antakṛddaśā Mahimā.*

- *Dāya–Dāta* denotes the things which are given wilfully by their fathers at the occasion of the marriage of their daughters –(*Jñātā Vrtti*)

- *Devānupriya* (*Prākṛta* form *Devāṇuppiya*)–It is a word used specially in Jain scriptures denoting sweet and honourable address In Jain world it was a frequent address. Being sweet it was used for father, son, husband, general persons, kings etc., all and even to teacher, disciple, gods, deities until *Tirthaṁkaras.*

  When it was used for fair sex like–goddess, mother, wife, sister, daughter etc., then for showing feminine gender the word *Devānuppiyā* is used.

  It was so common and sweet address that even anti-social persons were addressed with this word.

  In commentaries, we get two meanings of this word–(1) Loved or lovable like gods and (2) gentle soul.

  This word clearly manifests the policy of sweet speaking of Jains; as an English proverb runs–give a good name even to a dog. So in all, *Devānupriya* was a sweet address which can be used for and by any and every person–(living being).

  In Bauddha literature we get the word *Devānāmapriya* meaning beloved of gods but it was only an epithet ascribed by king *Aśoka,* grand son of *Candragupta Maurya,* for himself.

- The description of *Meghakumāra*, we get in *Jñātā Sūtra*, Chapter 1, the same briefly given in simple Hindi language in *Antakṛddaśā Mahimā*.
- For vivid description of *Saṁlekhanā* readers are advised to read the book *Antakṛddaśā Mahimā*.

गुणरत्न तप

गुणरत्न नामक तप सोलह महीनों में सम्पन्न होता है, इसमें तप के ४०७ दिन और पारणा के ७३ दिन होते हैं। पहले मास में एकान्तर उपवास किया जाता है। दूसरे मास में बेले-बेले पारणा और तीसरे मास में तेले-तेले पारणा किया जाता है। इसी प्रकार बढ़ाते हुए सोलहवें महीने में सोलह-सोलह उपवास करके पारणा किया जाता है। इस तप में दिन में उत्कटुक आसन से बैठकर सूर्य की आतापना ली जाती है और रात्रि में वस्त्र रहित वीरासन से बैठकर ध्यान किया जाता है। गौतम कुमार की तप आराधना का चित्र देखिए।

Guṇaratna Saṁvatsara Tapa (Penance)

Guṇaratna penance completes in 16 months Among them 407 days are of fast and 73 days are of *Pāranā* (to take food). During first month one day fast and second day *Pāranā* this order is followed In second month two days' fast and third day *Pāranā*, in third month three days' fast and one day *pāraṇā*. Increasing in this way in 16th month *pāranā* is taken after sixteen days' fast. In this penance during day the practiser sits in sunrays with *Utkatuka* posture and in the night, putting off all clothes the practiser meditates with *Vīrāsana* posture.

The adjacent table elucidates the penance-observing of *Gautama Kumāra* clearly.

卐

गुणरत्न संवत्सर तप-तालिका

महीना	तप व तप संख्या	तप के दिन	पारणे के दिन	योग
पहला	१५ उपवास	१५	१५	३०
दूसरा	१० बेला	२०	१०	३०
तीसरा	८ तेला	२४	८	३२
चौथा	६ चोला	२४	६	३०
पांचवाँ	५ पचोला	२५	५	३०
छठा	४ छह	२४	४	२८
सातवाँ	३ सात	२१	३	२४
आठवाँ	३ अठाई	२४	३	२७
नौवाँ	३ नौ	२७	३	३०
दसवाँ	३ दस	३०	३	३३
ग्यारहवाँ	३ ग्यारह	३३	३	३६
बारहवाँ	२ बारह	२४	२	२६
तेरहवाँ	२ तेरह	२६	२	२८
चौदहवाँ	२ चौदह	२८	२	३०
पन्द्रहवाँ	२ पन्द्रह	३०	२	३२
सोलहवाँ	२ सोलह	३२	२	३४
योग		४०७	७३	४८०

Table of Guṇaratna Saṁvatsara Tapa (Penance)

Month	*Penance (fast) and Penance no.*	*Days of fast Penance*	*Days of Pāraṇā*	*Total*
First	15 fast	15	15	30
Second	10 two days' fast	20	10	30
Third	8 three days' fast	24	8	32
Fourth	6 four days' fast	24	6	30
Fifth	5 five days' fast	25	5	30
Sixth	4 six days' fast	24	4	28
Seventh	3 seven days' fast	21	3	24
Eighth	3 eight days' fast	24	3	27
Nineth	3 nine days fast	27	3	30
Tenth	3 ten days' fast	30	3	33
Eleventh	3 eleven days' fast	33	3	36
Twelfth	2 twelve days' fast	24	2	26
Thirteenth	2 thirteen days' fast	26	2	28
Fourteenth	2 fourteen days' fast	28	2	30
Fifteenth	2 fifteen days' fast	30	2	32
Sixteenth	2 sixteen days' fast	32	2	34
Total		407	73	480

स्कन्धक के समान चिन्तन

गौतम अणगार को स्कन्धक मुनि की तरह एकदा–किसी समय, रात्रि के पिछले प्रहर में धर्म जागरणा करते हुए ऐसा विचार आया–अनेक प्रकार के उदार तप द्वारा मेरा शरीर शुष्क एवं कृश हो गया है। मेरा शारीरिक बल भी क्षीण हो गया है। केवल आत्मबल से चलता और खड़ा रहता हूँ। चलते हुए, खड़े होते हुए हड्डियों में कड़-कड़ की आवाज होती हैं। अतः जब तक मुझमें उत्थान-कर्म-बल-वीर्य-पुरुषाकार पराक्रम है, तब तक मेरे लिये यह श्रेयस्कर है कि रात्रि व्यतीत होने पर प्रातःकाल भगवान के समीप जाकर, उनको वन्दन-नमन कर, पर्युपासना करूँ, करके स्वयं ही पाँच महाव्रतों का आरोपण करके साधु-साध्वियों को खमाकर, स्थविरों के साथ शत्रुंजय पर्वत पर चढ़कर शिलापट्ट की प्रतिलेखना करके, डाभ का संथारा बिछाकर, अपनी आत्मा को संलेखना से दोषमुक्त करके, आहार-पानी का त्याग कर पादपोपगमन संथारा करना तथा उसमें स्थिर रहना मेरे लिए श्रेष्ठ है। –(भ. सू. श. २ उद्दे.१)

Thinking like Skandhaka

Skandhaka was a great sage in Jain *Sūtras*. His thinking was very deep and famous. So the simile of *Gautama* mendicant is given to *Skandhaka* sage

Once, any night during religious awakening monk *Gautama* began to think like this–Due to different types of severe penances my body has become leaned and withered and strength of body also diminished. Only by self-strength I stand and move. While I stand or move my bones crack and make sound Until I have strength, valour, etc., it would be better for me that I should propiliate the religious rites which are practised at the end life. So in the morning I will go to *Bhagawāna* and by bowing down and worship him, myself propiliating five great vows, begging pardon of all saints and nuns, climbing on the mount *Śatruṅjaya* with elder sages, watch a rock, taking bed of grass, making my own soul faultless by *saṁlekhanā*, and renouncing food and water, lying like a broken branch of a tree (*Pādapopagamana saṅthārā*) and should remain steadfast in it This is the best for me. *–(Bha, Sū, Śa, 2, Udd., 1)*

द्वितीय वर्ग

अध्ययन १—८

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पढमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, दोच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं कई अज्झयणा पण्णत्ता ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठ अज्झयणा पण्णत्ता। तं जहा—

अक्खोभे सागरे खलु, समुद्द हिमवंत अयल णामे य ।
धरणे य पूरणे वि य, अभिचन्दे चेव अट्ठमए ॥

सूत्र १ :

जम्बू स्वामी—हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर प्रभु ने प्रथम वर्ग का जो वर्णन किया है, वह मैंने सुना। अब दूसरे वर्ग में श्रमण भगवान महावीर ने कितने अध्ययन फरमाये हैं ?

आर्य सुधर्मा—हे जम्बू ! श्रमण यावत् मुक्ति प्राप्त भगवान महावीर ने दूसरे वर्ग के आठ अध्ययन फरमाये हैं, जैसे कि—१. अक्षोभकुमार, २. सागर, ३. समुद्र, ४. हिमवान, ५. अचल, ६. धरण, ७. पूरण और ८. अभिचन्द्र।

SECOND SECTION

Chapters 1 to 8

Maxim 1 :

Jambū Swāmī–O Reverend Sir ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* described as the first section, so I heard

attentively. Now please tell me that how many chapters have been described by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* in the second section of *Antakṛiddaśā Sūtra*.

Ārya Sudharmā–O *Jambū* ! *Śramaṇa* until salvated *Bhagawāna Mahāvīra* has described eight chapters of second section. As–(1) *Akṣobhakumāra* (2) *Sāgara* (3) *Samudra*, (4) *Himavāna*, (5) *Acala*, (6) *Dharaṇa*, (7) *Pūraṇa*, and (8) *Abhicandra*.

अध्ययन १ से ८

सूत्र २ :

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए वण्ही पिया धारिणी माया। जहा पढमो वग्गो, तहा सव्वे अट्ठ अज्झयणा। गुणरयणं तवोकम्मं सोलसवासाइं परियाओ। सेत्तुंजे मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अगंस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते।

इइ दोच्चो वग्गो अट्ठ अज्झयणा समत्ता।

सूत्र २ :

उस काल उस समय में द्वारका नगरी में इन आठों कुमारों के वृष्णि राजा पिता और धारिणी माता थी। जिस प्रकार प्रथम वर्ग कहा, उसी प्रकार ये सभी आठों अध्ययन समझने चाहिए। इन सभी साधकों ने गुणरत्न संवत्सर तप किया। सोलह वर्ष का निर्मल चारित्र पालन कर शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना की, यावत् सिद्ध हुए।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर प्रभु ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा के दूसरे वर्ग का यह भाव फरमाया है।

(द्वितीय वर्ग के अध्ययन १ से ८ समाप्त)

Chapters 1 to 8

Maxim 2 :

(At that time and at that period) Father was *Vṛṣṇi* and mother was *Dhāriṇī* of all these eight princes. As in the first section said about *Gautamakumāra*, in the same way all these eight chapters should be known. All the practisers observed *Guṇaratna saṁvatsara* penance and practised consecration period of sixteen years. These practised pure conduct and with *saṁlekhanā* of one month all these attained liberation from mountain *Śatruñjaya*.

Thus O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has told the subject matter of the second section of Eighth *Aṅga Antakṛddaśā*

[Eight chapters consumed]

[Second section completed]

卐

तृतीय वर्ग

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स दोच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते, तच्चस्स णं भंते ! वग्गस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स तच्चस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं तेरस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—

१. अणीयसेणे, २. अणंतसेणे, ३. अजियसेणे, ४. अणिहयरिऊ, ५. देवसेणे, ६. सत्तुसेणे, ७. सारणे, ८. गए, ९. सुमुहे, १०. दुम्मुहे, ११ कूवए, १२ दारुए, १३ अणादिट्ठी ।

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स तेरस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—अणीयसेणे जाव अणादिट्ठी ।

पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

सूत्र १ :

आर्य जम्बू—हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर प्रभु ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा के दूसरे वर्ग का जो भाव कहा, वह मैंने सुना। अब हे भगवन् ! तीसरे वर्ग का श्रमण भगवान महावीर प्रभु ने क्या भाव कहा है?

सुधर्मा स्वामी—हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा सूत्र के तीसरे वर्ग में तेरह अध्ययनों का वर्णन किया है, जो इस प्रकार है—

१. अनीकसेन, २. अनन्तसेन, ३. अजितसेन, ४. अनिहतरिपु, ५. देवसेन, ६. शत्रुसेन, ७. सारण, ८. गजसुकुमाल, ९. सुमुख, १०. दुर्मुख, ११. कूपक, १२. दारुक, १३. अनाधृष्टि ।

आर्य जम्बू–हे भगवन् ! श्रमण प्रभु महावीर ने आठवें अंग अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग में १३ अध्ययन कहे हैं तो प्रथम अध्ययन का क्या भाव फरमाया है?

THIRD SECTION

Maxim 1:

Ārya Jambū–O Reverend sir ! 1 heard attentively the description given by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* of the second section of Eighth *Aṅga Antakṛddaśā Sūtra.* Now please tell me what *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* told in third section of this *Aṅga.*

Sudharmā Swāmī–O Jambū ! Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra has described thirteen chapters in the third section of Eighth *Aṅga Antakṛddaśā Sūtra,* which are as follows–

(1) *Anīkasena* (2) *Anantasena* (3) *Ajitasena* (4) *Anihataripu,* (5) *Devasena* (6) *Śatrusena* (7) *Sāraṇa* (8) *Gaja Sukumāla* (9) *Sumukha* (10) *Durmukha* (11) *Kūpaka* (12) *Dāruka* and (13) *Anādhṛṣṭi.*

Ārya Jambū–O Reverend sir ! If *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has said thirteen chapters in the third section of Eighth *Aṅga Antakṛddaśā Sūtra;* then what description he has given of first chapter.

प्रथम अध्ययन

सूत्र २ :

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णामं णयरे होत्था । रिद्धित्थिमिय-समिद्धे, वण्णओ ।

तस्स णं भद्दिलपुरस्स णयरस्स बहिया उत्तर-पुरत्थिमे दिसिभाए सिरीवेण णामं उज्जाणे होत्था, वण्णओ। जियसत्तू राया।

तत्थ णं भद्दिलपुरे णयरे णागे णामं गाहावई होत्था, अड्ढे जाव अपरिभूए।

तस्स णं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा। तस्स णं णागस्स गाहावइस्स पुत्ते सुलसाए भारियाए अत्तए अणीयसेणे णामं कुमारे होत्था। सुकुमाले जाव सुरूवे। पंच धाई परिक्खित्ते।

तं जहा—खीरधाई, मज्जणधाई, मंडणधाई, कीलावणधाई, अंकधाई।

जहा दढपइण्णे जाव गिरिकंदर-मल्लीणेव चंपकवरपायवे सुहंसुहेणं परिवड्ढई।

अनीकसेन कुमार

सूत्र २ :

श्री सुधर्मा स्वामी—हे जम्बू ! उस काल उस समय में भद्दिलपुर नाम का नगर था। वह नगर उत्तम नगरों के सभी गुणों से युक्त, धन धान्यादि से परिपूर्ण, भय रहित एवं भवन-उपवन आदि से समृद्ध, वर्णन करने योग्य था।

उस भद्दिलपुर नगर के बाहर ईशान कोण में श्रीवन नाम का उद्यान था। वहां जितशत्रु नामक राजा थे।

उस भद्दिलपुर नगर में नाग नामक गाथापति रहता था। वह ऋद्धि सम्पन्न एवं अपराभूत—किसी बात से हार मानने वाला नहीं था।

उस नाग नामक गाथापति के सुलसा नामक पत्नी थी। वह सुकुमार एवं रूपवती थी। उस नाग गाथापति एवं सुलसा पत्नी के अनीकसेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह भी सुकुमार एवं रूपवान था। पांच धायों के द्वारा उसका पालन-पोषण किया गया। पाँच धायमाताएं इस प्रकार थीं—

नाग गाथापति
एवं सुलसा
क्षीरपान
स्नान
निद्रा
शृंगार

चित्रक्रम ६ :

अनीकसेनकुमार

भद्दिलपुर निवासी नाग गाथापति अपनी भार्या सुलसा के साथ अनीकसेनकुमार की बाल-लीला देखकर प्रसन्न हो रहा है।

विभिन्न देशो की पाँच धायमाताओं द्वारा कुमार का लालन-पालन—

१ क्षीरधात्री—दूध पिलाती है।

२. मज्जनधात्री—स्नान कराती है।

३ मडनधात्री—केशसज्जा, वस्त्र पहनाना आदि कार्य करती है।

४ अकधात्री—कुमार को गोदी मे लेती है। लोरी सुनाकर सुलाती है।

५ क्रीडाधात्री—विविध प्रकार के खिलोनो मे खिलाती है।

(वर्ग ३/अध्य १)

Illustration No. 6 :

Anīkasenakumāra

Resident of *Bhaddilapura* city, *Nāga* trader with his wife *Sulasā*, becoming glad visualising the childish plays of his son *Anīkssenakumāra*

Nurturing of child (*Kumāra*) by five mothers (nurses) of different countries,—1 Foster mother—makes child to drink milk, 2 bathe mother—bathes the child, 3 decorating mother—decorates child with clothes, ornaments and design his hairs in various styles, 4 lap mother-takes child in her lap and makes him to sleep singing lullabies, 5 amusement mother—makes baby to play with many kinds of toys (Sec 3/Ch 1)

१. क्षीरधात्री–दूध पिलाने वाली, २. मज्जनधात्री–स्नान कराने वाली, ३. मंडनधात्री–आभूषण वस्त्रादि पहनाने वाली, ४. क्रीड़ापनधात्री–खेल खिलाने वाली एवं ५. अंकधात्री–गोद में रखने वाली।

वह अनीकसेन दृढ़प्रतिज्ञ कुमार के समान एवं पर्वत की गुफा में एकान्त में जिस प्रकार चंपक वृक्ष निर्विघ्न बढ़ता है, उसी प्रकार वह सुखपूर्वक बढ़ रहा था।

● दृढ़प्रतिज्ञ कुमार का वर्णन औपपातिक सूत्र में आया है। अन्तकृद्दशा महिमा में देखें।

Chapter 1

Anīkasena Kumāra

Maxim 2 :

Sudharmā Swāmī–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Bhaddilapura*. That had many characterstics like great cities, opulated with wealth and agriculture products, gardens and parks, buildings and palaces and free from fear. So it was describable.

Out of that city *Bhaddilapura*, in its north-east direction, there was situated a garden (park) named *Śrīvana*.

The ruler of *Bhaddilapura* was king *Jitaśatru*.

In that city lived *Nāga Gāthāpati* (trader). He was wealthy and respected so he was invincible by any body.

Sulasā was the wife of *Nāga Gāthāpati*. She was beautiful and tender-bodied. She gave birth to a son named *Anīkasena*. He was also beautiful and tender. He was nurtured by five mothers (*dhātrī mātā*).

These were–(1) Foster mother, who make him to drink milk, (2) *Majjana dhātrī*–bathing mother, (3) *Maṇḍana dhātrī*, the mother who adorns him by clothes and ornaments, (4) *Krīḍā dhātrī*, she was supporter to play him, (5) *Lap mother*–who takes him in her lap.

Anīkasena was growing like *Dṛḍhapratijña Kumāra*, as the fragrant tree of *campaka* grows up without any hinderance in a cave of mountain and lonely place.

- *Aupapatika Sūtra* vividly explains the description of *Dṛḍhapratijña Kumāra*. See full description in *Antakṛddaśā Mahima*.

सूत्र ३ :

तए णं तं अणीयसेणं कुमारं साइरेगं अट्ठवास-जायं अम्मापियरो कलायरिय जाव भोगसमत्थे जाए यावि होत्था ।

तए णं तं अणीयसेणं कुमारं उम्मुक्क-बालभावं जाणित्ता अम्मापियरो सरित्तयाणं, सरिसवयाणं, सरिसत्तयाणं, सरिसलावण्ण-रूव-जोवण्ण-गुणोववेयाणं सरिसेहिंतो कुलेहिंतो आणिल्लियाणं बत्तीसाए इब्भवर कण्णगाणं एग-दिवसेणं पाणिं गिण्हावेंति ।

सूत्र ३ :

जब अनीकसेन कुमार आठ वर्ष से अधिक वय का हुआ तो माता-पिता ने शिक्षण के लिए कलाचार्य के पास भेजा । कला-कौशल प्राप्त कर वह भोग समर्थ युवावस्था को प्राप्त हुआ ।

तब उस अनीकसेन कुमार को माता-पिता ने बाल भाव मुक्त अर्थात् युवावस्था को प्राप्त हुआ जानकर, उसके अनुरूप समान वयवाली, समान त्वचा (रंग) और रूपलावण्य तथा तारुण्य गुण वाली, अपने समान कुलों से लाई गई बत्तीस इभ्य श्रेष्ठियों की कन्याओं के साथ उसका एक ही दिन में पाणिग्रहण करवाया ।

Maxim 3 :

When *Anīkasena Kumāra* crossed the age of eight years then his parents sent him to an able teacher for education. He became at home in various arts and crafts and branches
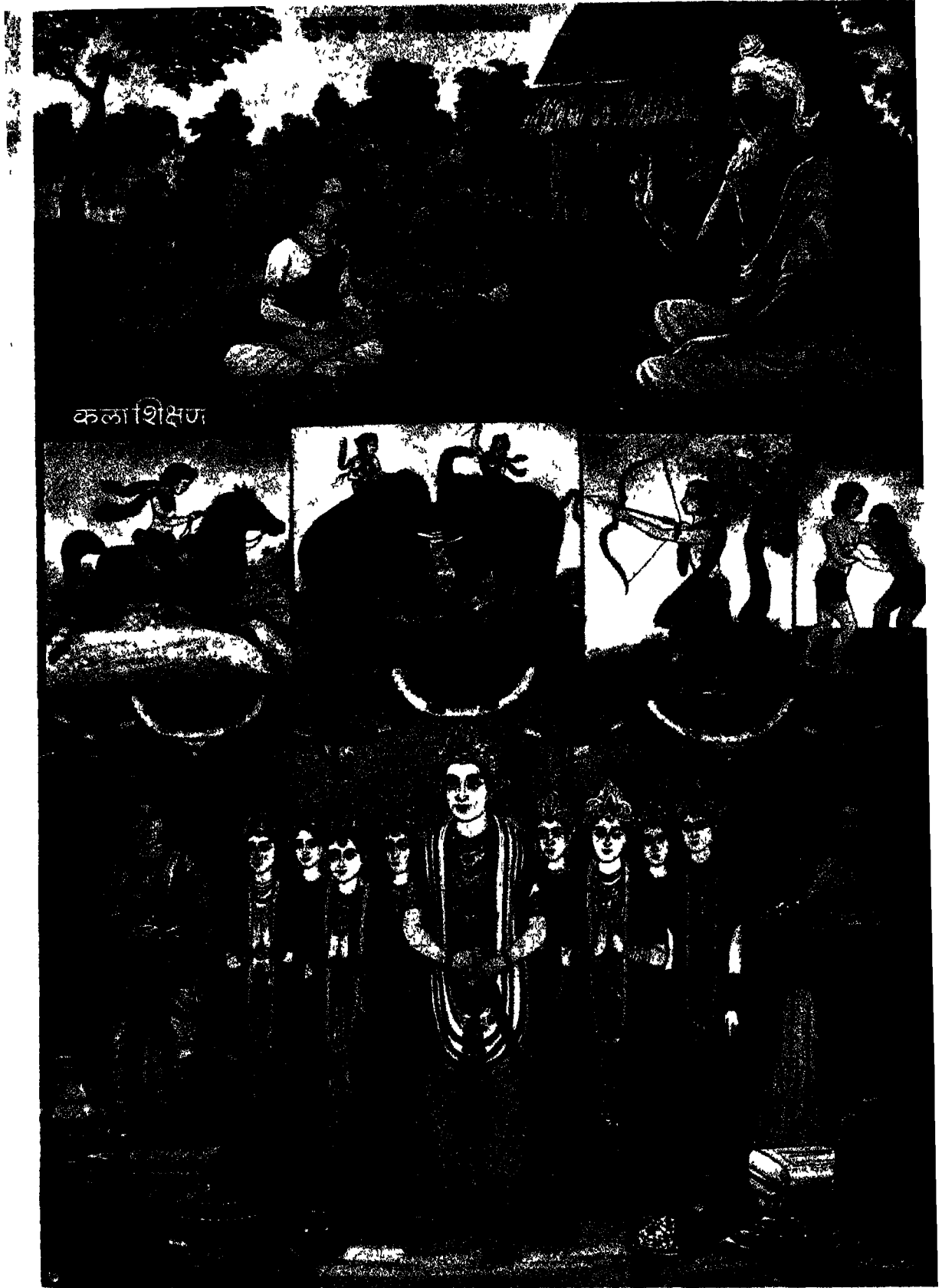
कलाशिक्षण

चित्रक्रम ७ :

अनीकसेनकुमार का शिक्षण एवं विवाह

दृश्य १–कलाचार्य के पास कुमार शिक्षण ग्रहण करते है ।

दृश्य २–मल्लयुद्ध, शस्त्र-सचालन-कला, गज युद्ध, अश्वयुद्ध आदि का प्रशिक्षण लेते है ।

दृश्य ३–एक ही दिन मे बत्तीस कन्याओ के साथ विवाह तथा नाग गाथापति द्वारा प्रीतिदान । (वर्ग ३/अध्य १)

Illustration No. 7 :

Education and marriage of *Anikasenakumara*

First Scene–Pupils (*Kumāras*) take education near teacher

Second Scene–*Kumaras* learn the technique of wrestling weapon strategy, elephant fighting, horse fighting etc

Third Scene–Marriage with thirtytwo maidens in a single day and love donation by *Naga* trader (Sec 3/Ch 1)

of learning and along with he became young and capable to enjoy worldly pleasurers.

Then knowing him young his parents married him with thirty two richmen's daughters in only one day. The youths (young maidens) were like him, as in age, colour, beauty, charming and youth.

सूत्र ४ :

तए णं से णागे गाहावई अणीयसेणस्स कुमारस्स इमं एयारूवं पीइ-दाणं दलयइ । तं जहा—बत्तीसं हिरण्णकोडीओ, जहा महब्बलस्स जाव उप्पिंपासायवरगए फुट्टमाणेहिं मुइंग-मत्थएहिं भोगभोगाइं भुंजमाणे विहरइ ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी जाव समोसढे । सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं जाव विहरइ । परिसा णिग्गया ।

तए णं तस्स अणीयसेणस्स कुमारस्स तं महया जणसद्दं जहा गोयमे तहा णवरं सामाइयमाइयाइं चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ । बीसं वासाइं परियाओ सेसं तहेव जाव सेत्तुंजे पव्वए मासियाए संलेहणाए जाव सिद्धे ।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स पढमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।

(पढमं अज्झयणं सम्मत्तं)

सूत्र ४ :

पाणिग्रहण कराने के पश्चात् उस नाग गाथापति ने अनीकसेन कुमार को इस प्रकार का प्रीतिदान किया, जैसे कि बत्तीस करोड़ चाँदी, सोना आदि । इसका विवरण महाबल के समान समझना चाहिए । यावत् इस प्रकार अनीकसेन कुमार ऊपर प्रासाद में बजती हुई मृदंगों की तालों के साथ गीत-नृत्य आदि सांसारिक सुखों को भोगते हुए रहता था ।

उस समय में अरिहंत अरिष्टनेमि ग्राम-ग्राम विचरते हुए भद्दिलपुर नगर में पधारे । श्रीवन नामक उद्यान में यथाविधि अवग्रह तृण-पाट आदि की आज्ञा लेकर, विराजमान हुए । धर्म श्रवण करने परिषद आई ।

तदनन्तर उस अनीकसेन कुमार को भी भगवान के आगमन की सूचना मिली, दर्शनार्थ जाते हुए जन समूह को देखा, उसके मन में भी भगवान के दर्शनों की इच्छा जागी । गौतम कुमार के समान अनीकसेन कुमार ने भी समवशरण में जा, प्रभु की धर्म देशना सुनी, तदनन्तर माता-पिता की आज्ञा लेकर प्रभु के चरणों में दीक्षा प्राप्त की । गौतम कुमार से विशेष यह कि सामायिक श्रुत आदि ग्यारह अंग तथा चौदह पूर्वों का ज्ञान भी सीखा । २० वर्ष की श्रमण पर्याय का पालन किया । शेष उसी प्रकार शत्रुंजय पर्वत पर जाकर एक मास की संलेखना करके यावत् सिद्ध हुए ।

इस प्रकार हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर प्रभु ने आठवें अन्तकृद्दशा अंग के तीसरे वर्ग के प्रथम अध्ययन का वर्णन किया है ।

(तीसरे वर्ग का प्रथम अध्ययन समाप्त)

Maxim 4 :

After marriage, *Nāga Gāthāpati* gave such a present (*Prītidāna*) to his son *Anīkasena Kumāra*, as thirty two crores silver and gold (coins) etc. Its description should be known like *Mahābala* (until) the time of *Anīkasena* was passing pleasurefully with sweet voices of songs and orchestra– musical instruments etc.

At that time and at that period wandering village to village *Arihanta Ariṣṭanemi* came to *Bhaddilapura*, stayed at *Śrīvana* garden with due consent about every necessary thing. Congregation assembled for hearing his sermon. *Anīkasena Kumāra* also came to know about coming of *Bhagawāna*. While he saw the people going to bow down to *Bhagawāna*, his desire also aroused. Like *Gautama Kumāra*, *Anīkasena Kumāra* also approached to the religious assembly, and heard the sermon. Thereafter

का भिक्षार्थ आगमन
आहार दान
जिज्ञासा
समाधान

चित्रक्रम ९ :

रानी देवकी के भवन में छह अनगार

छहों सहोदर अणगार दो-दो के सिंघाडे मे द्वारका मे भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए पहला सिघाडा रानी देवकी के भवन मे आ रहा है । दो अणगारो को आते देखकर रानी देवकी उठकर सामने जाती है । वन्दना नमस्कार करती है, फिर उन्हे भोजन गृह मे ले जाकर सिंहकेशर मोदक बहराती है ।

कुछ समय बाद दूसरा सिघाडा भवन मे प्रवेश करता है । एक समान रग रूप वय होने से देवकी उसी सिघाडे को दुबारा आया समझकर आश्चर्यपूर्वक देखती है । कुछ देर बाद तीसरा सिघाडा आता है तब तो देवकी रानी गहरे विचार मे डूब जाती है कि क्या वे ही मुनि तीसरी बार आये है ? मुनियो से पूछने पर मुनियो द्वारा रहस्य का उद्घाटन ।

(वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 9 :

Six Friars in the Palace of Queen Devakī

Six friars divided themselves in three groups of two sages each First group of two sages wandering in *Dwārakā* city, coming to the palace of *Devakī* Seeing them *Devakī* comes forward, praises and bows down to them Bringing from kitchen gives them *Singha Keśara* sweet-balls and let them go

After some time second group of two sages enters Seeing the sages alike in age, colour etc , *Devakī* awfully gazes them

After a few time when third group of two sages enters, *Devakī* drowns deep in thoughts–whether the same sages have come thrice She asks to sages Sages reveal the secret

(Sec. 3/Ch. 8)

तए णं एगे संघाडए बारवईए णयरीए उच्च-णीय मज्झिमाई कुलाई घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणे वसुदेवस्स रण्णो देवईए देवीए गिहं अणुप्पविट्ठे ।

तए णं सा देवईदेवी ते अणगारे एज्जमाणे पासित्ता हट्ठ-तुट्ठ चित्तमाणंदिया, पीईमणा परमसोमणस्सिया, हरिसवस- विसप्पमाणहियया आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता सत्तट्ठपयाई अणुगच्छइ अणुगच्छित्ता तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ, णमंसइ । वंदित्ता, णमंसित्ता जेणेव भत्तघरए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सीहकेसराणं मोयगाणं थालं भरेइ, भरित्ता ते अणगारे पडिलाभेइ पडिलाभित्ता वंदइ, णमंसइ । वंदित्ता णमंसित्ता पडिविसज्जेइ ।

छह अणगार : देवकी के भवन में

सूत्र ९ :

उसके पश्चात् उन छहों मुनियों ने अन्यदा किसी समय, बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय किया और गौतम स्वामी के समान प्रभु के समक्ष उपस्थित होकर बोले–

हे भगवन् ! हम बेले की तपस्या के पारणे में आपकी आज्ञा पाकर दो-दो के तीन संघाडों से द्वारका नगरी में यावत् भिक्षा हेतु भ्रमण करना चाहते हैं ।

भगवान ने कहा–देवानुप्रियो ! जैसे सुख हो, वैसा करो ।

तब उन छहों मुनियों ने अरिहंत अरिष्टनेमि की आज्ञा पाकर प्रभु को वन्दन नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार करके वे भगवान अरिष्टनेमि के पास से सहस्राम्रवन उद्यान से प्रस्थान करते हैं । उद्यान से निकल करके वे दो-दो के तीन संघाटकों में सहज मन्द-मन्द गति से, शान्त चित्त से ईर्यासमिति पूर्वक भ्रमण करने लगे ।

तब वे छहों मुनि भगवान् अरिष्टनेमि की आज्ञा पाकर जीवन भर के लिये बेले-बेले की तपस्या करते हुए ग्रामानुग्राम विचरण करने लगे ।

Maxim 8 :

As all these accepted consecration, i.e., became houseless mendicants renouncing house-holders' religion, the very day all these approached to *Arihanta Ariṣṭanemi* and bowing worshipping him spoke these words–

O *Bhagawan* ! With your consent we wish that till life we practise two days' fast penance and third day take food. Thus observing austerity and fixing ourselves in soul virtues, we wish to wander with your religious order.

Bhagawāna said–O beloved as gods ! Do, as you feel happy; but do not delay or be not careless in meritorious deeds

Then getting the consent of *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, all these six monks began to wander village to village, with the religious congregation observing two days' fast penance and third day to take food (*Bele-Bele* fast penance) for whole life.

सूत्र ९ :

तए णं ते छ अणगारा अण्णया कयाइं छट्ठक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरिसीए सज्झायं करेंति जहा गोयमसामी जाव इच्छामो णं भंते ।

छट्ठक्खमणस्स पारणए तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा तिहिं संघाडएहिं बारवईए णयरीए जाव अडित्तए ।

अहासुहं देवाणुप्पिया !

तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णंमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहस्संबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमंति पडिणिक्खमित्ता तिहिं संघाडएहिं अतुरियं जाव अडंति ।

चित्रक्रम ८ :

छह सहोदर बन्धु श्रमण

भगवान अरिष्टनेमि के अन्तेवासी छह सहोदर अणगार घुघराले बालो वाले, नीलवर्ण–रूप-वय आदि मे एक समान, बेले–बेले तप करते हुए। बेले तप के पारणा की आज्ञा लेते है। (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 8 :

Six uterine brother–sages

Six uterine brother sages curly haired, alike in form, body-frame, shape, colour, age etc., were resident disciples of *Bhagawana Aristanemi*, regularly observed two days' fast. Now asking the permission from *Bhagawana* to seek food (Sec 3/Ch 8)

प्रभु अरिष्टनेमि के अन्तेवासी छः सहोदर अणगार

him. All these six were alike in colour, structure, configuration and age; differentiation was very difficult among them. Their colour was blue, like blue lotus, horn of a buffalo. There was the mark of *Śrīvatsa* on the chest of every one. Their hairs were soft, curly and conjusted. These all were as beautiful as *Nalakūbara*.

■ *Nalakūbara* means the very beautiful son of *Vaiśramaṇa* (god of wealth). *Vaidic* scriptures also mention *Nalakūbara* as the beautiful son of *Kubera*.

सूत्र ८ :

तए णं ते छ अणगारा जं चेव दिवसं मुण्डा भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदंति णमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी--इच्छामो णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणा विहरित्तए ।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ।

तए णं ते छ अणगारा अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरंति ।

सूत्र ८ :

तब (दीक्षित होने के पश्चात्) वे छहों मुनि जिस दिन मुण्डित होकर अगार से अणगार धर्म में प्रव्रजित हुए, उसी दिन अरिहंत अरिष्टनेमि के पास आकर वंदना नमस्कार कर इस प्रकार बोले--
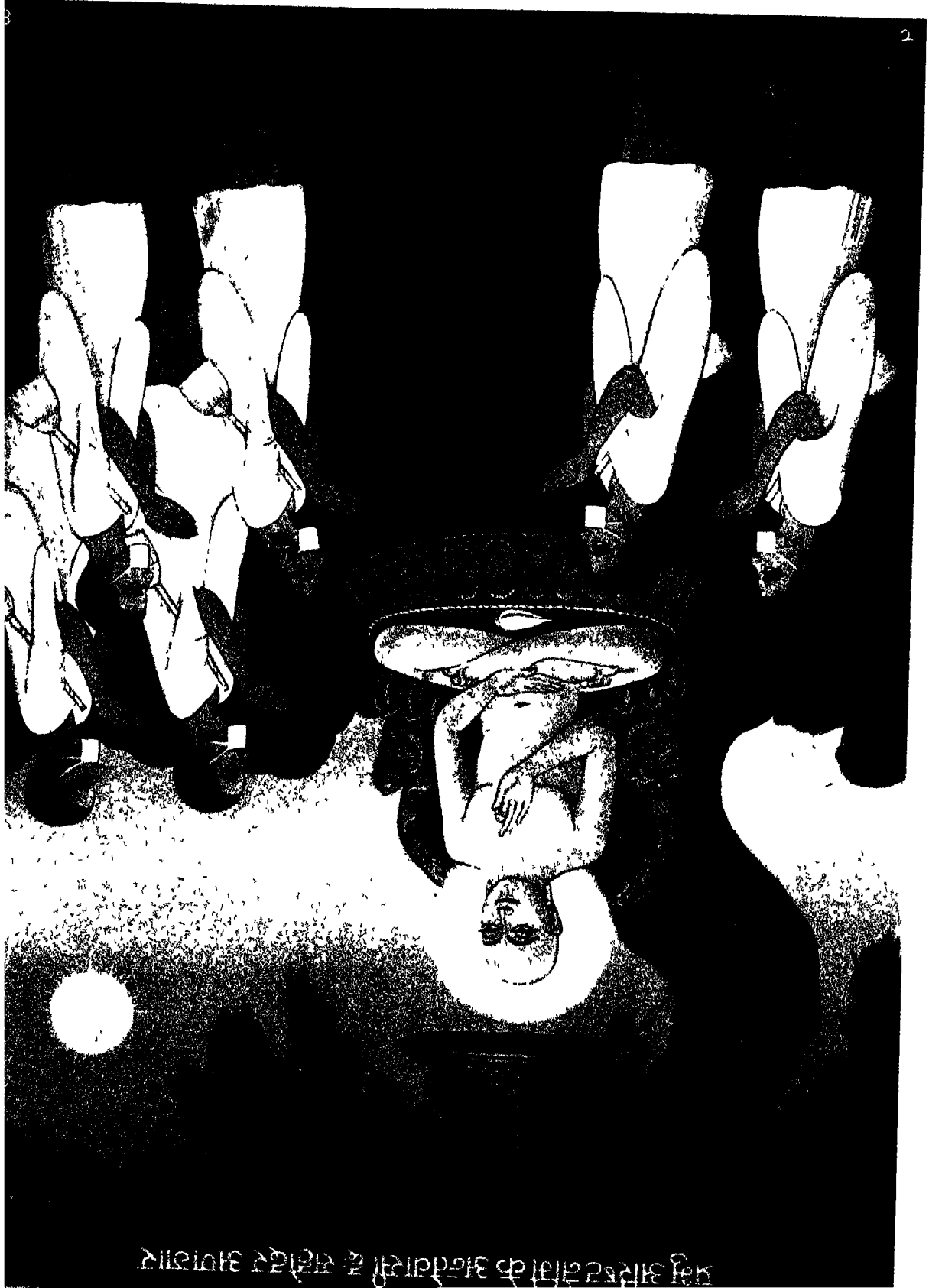
हे भगवन् ! हम चाहते हैं कि आपकी आज्ञा पाकर जीवन पर्यन्त निरन्तर बेले--बेले की तपस्या द्वारा अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरण करें ।

प्रभु ने कहा--हे देवानुप्रियो ! जिससे तुम्हें सुख प्राप्त हो, वही कार्य करो, शुभ कार्य में प्रमाद मत करो ।

सूत्र ७ :

आर्य जम्बू--हे भन्ते ! मैंने सातवें अध्ययन का भाव सुना, अब आठवें अध्ययन का प्रभु महावीर ने क्या अधिकार (उत्क्षेपक) कहा है ? कृपा कर फरमाइये ।

आर्य सुधर्मा--इस प्रकार हे जम्बू ! उस काल, उस समय में द्वारका नगरी में कृष्ण वासुदेव आदि प्रथम अध्ययन में किये गये वर्णन के अनुसार वर्णन समझना चाहिए । यावत् अरिहंत अरिष्टनेमि भगवान पधारे ।

उस काल, उस समय में भगवान अरिष्टनेमि के अंतेवासी शिष्य छः मुनि सहोदर भाई थे । वे समान आकार वाले, समान त्वचा (रंग) और अवस्था में समान दिखने वाले थे । शरीर का रंग नीलकमल, भैंस के सींग की गुली (भीतरी भाग) और अलसी के फूल जैसा नीली आभा (छवि) वाला था । उनके वक्षस्थल पर श्रीवत्स का चिन्ह था और कुसुम के समान कोमल एवं कुण्डल के समान घुंघराले बालों वाले वे सभी मुनि नलकूबर के समान लगते थे ।

- नलकूबर का अर्थ है– वैश्रमण देव का एक बहुत रूपवान पुत्र । वैदिक ग्रंथों में भी नलकूबर को कुबेर का सुन्दर पुत्र बताया है ।

Chapter 8

Maxim 7 :

Ārya Jambū–O Reverend Sir ! I have heard the subject matter of seventh chapter. Now, please tell me what description of eighth chapter has been given by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra.*

Ārya Sudharmā–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Dwārakā*. The description of city should be known from first chapter of first section, until, *Arihanta Ariṣṭanemi Bhagwāna* came.

At that time and at that period the six uterine brothers were the disciples of *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, who lived near

Chapter 7

Maxim 6 :

Ārya Jambū–O reverend Sir ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* as described the sixth chapter, so you have told me and I have heard attentively. Now please tell me–what is the description of seventh chapter.

Ārya Sudharmā–At that time and at that period there was a city named *Dwārakā*. The description of that city should be known from first chapter of the first section.

Speciality was that there was ruler *Vasudeva*, and *Dhāriṇī Devī* was his queen. *Dhāriṇī* has seen a lion in dream. Her son was named as *Sāraṇa Kumāra*. After marriage he got fifty-fifty crores of silver and gold as wilful pleasure gift.

Sāraṇa Kumāra had studied *Sāmāyika* etc., eleven *Aṅgas* and fourteen *Pūrvas*. His consecration period was of twenty years. Remaining like *Gautama Kumāra*, with *Saṁlekhanā* of one month he attained salvation from *Śatruṅjaya* mountain.

(Seventh chapter concluded)

आठवां अध्ययन

सूत्र ७ :

जइ णं भंते ! उक्खेवो अट्ठमस्स ।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईये णयरीए जहा पढमे जाव अरहा अरिट्ठणेमी सामी समोसढे ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतेवासी छ अणगारा भायरो सहोदरा होत्था । सरिसया, सरिसत्तया सरिसव्वया, णीलुप्पल गवल-गुलिय-अयसि-कुसुमप्पगासा सिरिवच्छं-कियवच्छा कुसुम-कुण्डल-भद्दलया णलकुब्बर समाणा ।

these learned fourteen *Pūrvas*. All these became emancipated by *saṁlekhanā-Saṁthārā* at mountain *Śatruṅjaya.*

(2 to 6 Chapters concluded)

सातवां अध्ययन

सूत्र ६ :

जइ णं भंते ! उक्खेवो सत्तमस्स !

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमे । णवरं वसुदेव राया, धारिणी देवी, सीहो सुमिणे, सारणे कुमारे, पण्णासओ दाओ, चोद्दसपुव्वाइं वीसं वासाइं परियाओ सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंज सिद्धे ।

(इति सत्तमज्झयणं)

सूत्र ६ :

आर्य जम्बू—हे पूज्य ! श्रमण भगवान महावीर ने छठे अध्ययन का जो भाव (उत्क्षेपक—जिसका अर्थ है—वर्णन, अधिकार या भाव है) कहा, वह सुना, अब सातवें अध्ययन का क्या उत्क्षेपक अधिकार है ? कृपा कर फरमाइये ।

आर्य सुधर्मा—उस काल उस समय में द्वारका नगरी थी । वहां का वर्णन प्रथम अध्ययन के समान समझना चाहिए । विशेष—वहां वसुदेव राजा थे, और धारिणी देवी उनकी रानी थी । देवी ने सिंह का स्वप्न देखा । उनके पुत्र का नाम सारण कुमार रखा गया । उसे विवाह में पचास-पचास स्वर्ण-रजत कोटि का प्रीतिदान मिला । सारण कुमार ने सामायिक आदि ग्यारह अंगों तथा १४ पूर्वों का अध्ययन किया । बीस वर्ष तक दीक्षा पर्याय का पालन किया । शेष गौतम कुमार की तरह शत्रुंजय पर्वत पर एक मास की संलेखना सहित सिद्ध हुए ।

(सातवां अध्ययन समाप्त)

However, *pritidāna* and *dāya*, both the words are used in *Āgamas*, according to occasion, in the same sense.

अध्ययन २-६

सूत्र ५ :

जहा अणीयसेणे एवं सेसा वि (अणंतसेणे, अजियसेणे, अणिहयरिऊ, देवसेणे, सत्तुसेणे) छ अज्झयणा एगगमा। बत्तीसओ दाओ। बीस वासाइं परियाओ। चोद्दस पुव्वाइं अहिज्जंति सेत्तुंजे जाव सिद्धा।

(छट्ठं अज्झयणं सम्मत्तं)

सूत्र ५ :

जिस प्रकार अनीकसेन कुमार का वर्णन किया गया, उसी प्रकार शेष अध्ययन भी, २. अनंतसेन, ३. अजितसेन, ४. अनिहतरिपु, ५. देवसेन और ६. शत्रुसेन–समझना चाहिए।

ये छः ही अध्ययन एक समान हैं। इन सबको भी बत्तीस-बत्तीस करोड़ चांदी सोने का प्रीतिदान मिला। सबका २०-२० वर्ष का दीक्षा काल रहा। सबने चौदह पूर्व का अध्ययन किया एवं सभी शत्रुंजय पर्वत पर संलेखणा की आराधना करके सिद्ध हुए।

(तीसरे वर्ग के २ से ६ अध्ययन समाप्त)

Chapter 2–6

Maxim 5 :

As the description of *Anīkasena is* so is of subsequent chapters, viz., (2) *Anantasena* (3) *Ajitasena* (4) *Anihataripu* (5) *Devasena* and (6) *Śatrusena.*

These six chapters are alike. All these get the wilful pleasure, gift of thirty two crores silver and gold (coins). The consecration period of all these was twenty years. All

taking the permission of parents, accepted the consecration in the lotus feet of *Bhagawāna*.

Speciality from *Gautama Kumāra* is this–that *Anīkasena Kumāra* learned *Sāmāyika* etc., eleven *Aṅgas* and fourteen *Pūrvas*, practised *śramaṇahood* upto 20 years. Like the same, he climbed upon mountain *Śatruṅjaya* and liberated after the *saṁlekhanā* of one month.

Thus O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has described the subject matter of first chapter of third section of Eighth *Aṅga Antakṛddaśā Sūtra*.

(First chapter of third section concluded)

विवेचन

प्रीतिदान–किसी भी हर्ष के प्रसंग पर प्रसन्नता के साथ दिया जाने वाला पुरस्कार या उपहार प्राचीन समय में "प्रीतिदान" के नाम से प्रसिद्ध था। ध्यान देने की बात है कि कन्यापक्ष की ओर से वर पक्ष को दिया जाने वाला धन जिसे आजकल दहेज कहते हैं, प्राचीन समय में "दाय" कहलाता था। गौतम कुमार के प्रकरण में "दाय" शब्द का प्रयोग हुआ है। किन्तु यहां प्रीतिदान शब्द है और यह अपनी बत्तीस पुत्रवधुओं के लिए वर के पिता नाग गाथापति की ओर से दिया गया। जो उन बत्तीस कन्याओं (बहुओं) में बाँट दिया गया।

वैसे आगमों में 'दाय' और 'प्रीतिदान' दोनों ही शब्दों का यथाप्रसंग समान अर्थ में भी प्रयोग मिलता है।

Elucidation

Prītidāna–At any occasion of pleasure, the prize or present given wilfully and with happiness, was famous by the term *prītidāna* in ancient times. It is to be taken into consideration the wealth given by relatives of bride to bridegroom which is now called dowry, in the ancient times it was called *dāya*. In the episode of *Gautama Kumāra* the word *dāya* is used; but here is the word *prītidāna* and it is given by *Nāga Gāthāpati* the father of bridegroom to his thirtytwo daughters-in-law, which was distributed among them (brides).

उन तीनों संघाड़ों में से एक संघाड़ा द्वारिका नगरी के ऊँच- नीच-मध्यम कुलों में, एक घर से दूसरे घर, भिक्षाचर्या के हेतु भ्रमण करता हुआ राजा वसुदेव की महारानी देवकी के प्रासाद में प्रविष्ट हुआ ।

उस समय देवकी रानी उन दो मुनियों के संघाड़े को अपने यहाँ आये देखकर प्रसन्न संतुष्ट एवं चित्त में आनन्दित हुई । प्रीतिवश उसका मन परमाल्हाद को प्राप्त हुआ, हर्षातिरेक से उसका हृदय-कमल विकसित हो उठा ।

तब देवकी रानी आसन से उठकर सात-आठ कदम मुनियुगल के सम्मुख गई । सामने जाकर तीन बार दायें से बांईं ओर उनकी प्रदक्षिणा की । प्रदक्षिणा कर उन्हें वन्दन नमस्कार किया । वन्दन नमस्कार के पश्चात जहाँ भोजनशाला है, वहाँ आई । भोजनशाला में आकर सिंहकेशर मोदकों (विशेष प्रकार के सुगंधित एवं पौष्टिक लड्डू) से एक थाल भरा और थाल भरकर उन मुनियों को प्रतिलाभ दिया । प्रतिलाभ देने के पश्चात् देवकी ने उन्हें पुनः वन्दन-नमन कर विदा किया ।

Six Monks : In the Palace of Devakī

Maxim 9 :

Thereafter at any day of *pāraṇā* (the day of taking food) of two days' fast penance all these six monks studied in the first three hours (first *prahara*) of the day and after that approached to *Bhagawāna*, like *Gautama Swāmī* and spoke thus unto him.

O *Bhagawan* ! We all six monks want to wander in *Dwārakā* city, in three groups (containing two in each group) for seeking food as the *pāraṇā* of two days' fast penance with your consent.

Bhagawāna said–Beloved as gods ! Do, as you feel happy.

Then getting the consent all the six monks bowed down and worshipped *Arihanta Ariṣṭanemi*. After it, from there,

these monks went out and reached *Sahasrāmravana* (the wood of mango trees). Going out of that wood they divided themselves in three groups of two monks. Then they began to wander in the city with peaceful mind and observing circumspection of movement.

First Group

One of those three groups wandering in *Dwārakā* city seeking alms from high-low-medium standard houses, from one to the other house, approached to the palace of *Devakī*, the queen of king *Vasudeva*.

Queen *Devakī* became very glad, happy and filled with bliss, seeing the two monks coming to her palace. Due to affection her mind filled with joy, her heart bloomed like a lotus due to the extremity of happiness

Standing up from her seat queen *Devakī* went towards monk couple, seven or eight steps with pleasureful heart, and circumambulated bowed down and worshipped them. After she went to kitchen with monk-couple. There he put *Singha-Keśara Modaka* (a kind of too much fragrant and nourishing–vitalising sweetball) in a big plate and gave to monk-couple. After this queen *Devakī* once again bowed down, worshipped and gave farewell to monk-couple.

विवेचन

● जहा गोयम सामी जाव इच्छामो ....

छहों सहोदर मुनियों ने गौतम स्वामी की तरह (गौतम स्वामी की दिनचर्या का वर्णन भगवती सूत्र शतक २ उद्देशक–५ में आया है ।) बेले के पारणे के दिन प्रथम प्रहर में शास्त्र-स्वाध्य, दूसरे प्रहर में ध्यान तथा तीसरे प्रहर में शान्त भाव से मुखवस्त्रिका, वस्त्रों व पात्रों की प्रतिलेखना की । पात्रों को लेकर भगवान के चरणों में विधिवत् वन्दन नमस्कार करके नगरी में भिक्षार्थ जाने की आज्ञा मांगी । आज्ञा मिल जाने पर चंचलता रहित तथा ईर्या शोधन पूर्वक शांति चित्त से भिक्षा हेतु भ्रमण करने लगे । यह वर्णन जानना चाहिए ।

उच्च-नीच-मध्यम कुल के विषय में प्राचीन आचार्यों का स्पष्टीकरण इस प्रकार है–

- राजा आदि के राज भवन–सत्ता एवं संपदा की दृष्टि से उच्च कुल।
- श्रेष्ठ, धनी व्यापारी आदि के भवन मध्यम कुल।
- एक मंजिले छोटे झोंपड़ी आदि में रहने वालों के भवन नीच कुल कहे जाते थे।

साधु इन सभी कुलों में सामुदानिक रूप में समभाव के साथ भिक्षा के लिए जाते थे।

(आचारांग-निशीथ सूत्र के अनुसार)

Elucidation

■ *Jahā Goyama Sāmī Jāva icchāmo ....*

All these six uterine brother monks wished like *Gautama Swāmī*.

The method of seeking alms of *Gautama Swāmī*. we get in *Bhagavatī Sūtra*, *Śataka* 2, *Uddeśaka* 5. Like him, all these six brother monks studied scriptures in the first *prahara* of the day, in second involved in meditation, in third peacefully watched cloths, mouth-cloth, utensils etc. Taking utensils reached to the lotus feet of *Bhagawāna* and bowing down in due order asked the permission to wander in the city for seeking alms Obtaining the permission began to wander in the city for seeking alms with peaceful mind and observing movement circumspection.

■ Regarding high-medium-low standard people, the clarification of ancient sages–preachers, is like this–

(a) *High* (standard)–The palaces of kings, rulers, powerful persons etc.

(b) *Medium*–Big houses of wealthy traders and rich persons.

(c) *Low*–One storeyed houses, cottages of general public.

Sages used to seek alms from all these three types of houses and persons without any differentiation .

(According *to Ācārāṅga* and *Niśītha Sūtra)*

सूत्र १० :

तयाणंतरं च णं दोच्चे संघाडए बारवईए णयरीए उच्च जाव पडिविसज्जेइ।

तयाणंतरं च णं तच्चे संघाडए उच्च-णीय जाव पडिलाभेइ । पडिलाभित्ता एवं वयासी–

किण्हं देवाणुप्पिया ! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए दुवालसजोयण-आयामाए णवजोयण-वित्थिण्णाए पच्चक्खं देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्च-णीय-मज्झिमाइं कुलाइं घरसमुदाणस्स भिक्खायरियाए अडमाणा भत्तपाणं णो लभंति ? जण्णं ताइं चेव कुलाइं भत्तपाणाए, भुज्जो भुज्जो अणुप्पविसंति ।

दूसरा संघाटक

सूत्र १० :

प्रथम संघाटक के लौट जाने के पश्चात् उन छः सहोदर साधुओं के तीन संघाटकों में से दूसरा संघाटक भी द्वारका के उच्च-नीच-मध्यम आदि कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करता हुआ महारानी देवकी के प्रासाद में आया । देवकी ने प्रथम संघाटक की भाँति दूसरे मुनि संघाटक को भी प्रसन्न मन से सिंह केसर मोदकों का प्रतिलाभ देकर विसर्जित किया ।

तीसरा संघाटक

द्वितीय संघाटक के लौट जाने के पश्चात् उन मुनियों का तीसरा संघाड़ा भी द्वारका नगरी के ऊँच-नीच-मध्यम कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करता हुआ महारानी देवकी के प्रासाद में प्रविष्ट हुआ । देवकी ने पहले आये दो संघाटकों के समान उस तीसरे संघाटक को भी प्रसन्न मन से सिंह केसर–मोदकों का प्रतिलाभ दिया । प्रतिलाभ देकर आश्चर्य चकित होकर महारानी देवकी इस प्रकार बोली–

हे देवानुप्रियो ! क्या कृष्ण वासुदेव की इस बारह-योजन लम्बी, नव योजन चौड़ी, प्रत्यक्ष देवलोक के समान, द्वारका नगरी में श्रमण निर्ग्रन्थों को उच्च-नीच एवं मध्यम कुलों के गृह समुदायों से, भिक्षार्थ भ्रमण करते हुए

आहार पानी प्राप्त नहीं होता, कि उन्हें आहार पानी के लिए उन्हीं कुलों में बार-बार आना पड़ता है।

Second Group

Maxim 10 :

First group of two monks returned. After some time the second group of two monks, wandering for seeking food from high-low and middle class houses (house-holders) of *Dwārakā* city, approached to the palace of queen *Devakī*. *Devakī* gladly gave *singha-keśara modaka* and let them go.

Third Group

Second group of two monks returned. After some time, third group of two monks (of six brother monks), wandering for seeking food from high-low-middle class houses of *Dwārakā* city, approached the palace of queen *Devaki*. She became glad again and thought herself fateful, but also filled with suspicion, yet she gave these monks *singha-keśara-modaka* with regard and asked–

'O beloved as gods (reverend sages) ! Do the sages not get food and water from the high-low-middle clas houses of *Dwārakā* city of *Vāsudeva Kṛṣṇa*, which is twelve *yojana* long and nine *yojana* wide and like heaven abode; so the sages have to come again and again in the same house for fulfilling their need of food and water.

सूत्र ११ :

तए णं ते अणगारा देवइं देविं एवं वयासी–णो खलु देवाणुप्पिये ! कण्हस्स वासुदेवस्स इमीसे बारवईए णयरीए जाव देवलोगभूयाए समणा णिग्गंथा उच्च-णीय जाव अडमाण भत्तपाण णो लब्भंति णो चेव णं ताइं ताइं कुलाइं दोच्चंपि तच्चंपि भत्तपाणाए अणुप्पविसंति।

एवं खलु देवाणुप्पिए ! अम्हे भद्दिलपुरे णयरे णागस्स गाहावइस्स पुत्ता सुलसाए भारियाए अत्तया छ भायरो सहोदरा सरिसया जाव णलकुब्बर-समाणा अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म संसार भयउव्विग्गा भीया जम्म-मरणाओ मुण्डा जाव पव्वइया ।

तए णं अम्हे जं चेव दिवसं पव्वइया तं चेव दिवसं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदामो णमंसामो; वंदित्ता णमंसित्ता इमं एयारूवं अभिग्गहं अभिगिण्हामो-इच्छामो णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणा ।

जाव अहासुहं !

देवाणुप्पिए ! तए णं अम्हे अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाया समाणा जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं जाव विहरामो । तं अम्हे अज्ज छट्ठक्खमण पारणगंसि पढमाए पोरिसीए जाव अडमाणा तव गेहं अणुप्पविट्ठा ।

तं णो खलु देवाणुप्पिए ते चेव णं अम्हे । अम्हे णं अण्णे !

देवइं देविं एवं वयइ वइत्ता, जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।

सूत्र ११ :

देवकी द्वारा इस प्रकार का प्रश्न पूछे जाने पर वे मुनि देवकी देवी से इस प्रकार बोले—हे देवानुप्रिये ! ऐसी बात तो नहीं है कि कृष्ण वासुदेव की इस यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान द्वारका नगरी में श्रमण निर्ग्रन्थों को उच्च-नीच-मध्यम कुलों में भ्रमण करते हुए आहार पानी प्राप्त नहीं होता है । और न मुनिजन आहार-पानी के लिए उन घरों-कुलों में दूसरी-तीसरी बार जाते हैं ।

हे देवानुप्रिये ! वास्तव में बात इस प्रकार है । भद्दिलपुर नगर में हम नाग गाथापति के पुत्र और उनकी सुलसा भार्या के आत्मज छः सहोदर भाई हैं । पूर्णतः समान आकृति एवं समान रूप वाले नलकूबर के समान हैं । हम छहों भाइयों ने अरिहंत अरिष्टनेमि का उपदेश सुनकर और उसे धारण

कर संसार के भय से उद्विग्न एवं जन्म-मरण से भयभीत हो मुण्डित होकर श्रमण धर्म की दीक्षा ग्रहण की है ।

हमने जिस दिन दीक्षा ग्रहण की थी, उसी दिन अरिहंत अरिष्टनेमि को वन्दन नमन किया और वन्दन नमस्कार कर इस प्रकार का अभिग्रह धारण करने की आज्ञा चाही । "हे भगवन् ! आपकी अनुमति प्राप्त होने पर जीवन पर्यन्त बेले-बेले की तपस्यापूर्वक अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरना चाहते हैं ।"

तब प्रभु ने कहा—"देवानुप्रियो ! जिससे तुम्हें सुख हो, वैसा करो, प्रमाद मत करो ।"

हे देवानुप्रिये ! उसके बाद अरिहंत अरिष्टनेमि की अनुज्ञा प्राप्त होने पर हम जीवन भर के लिए निरंतर बेले-बेले की तपस्या करते हुए विचरने लगे ।

तो इस प्रकार आज हम छहों भाई बेले की तपस्या के पारणा के दिन प्रथम प्रहर में स्वाध्याय करने तथा द्वितीय प्रहर में ध्यान करने के पश्चात् तृतीय प्रहर में प्रभु अरिष्टनेमि की आज्ञा प्राप्त कर तीन संघाटकों में भिक्षार्थ उच्च–मध्यम एवं निम्न कुलों में भ्रमण करते हुए तुम्हारे घर आ पहुँचे हैं ।

तो देवानुप्रिये ! ऐसी बात नहीं है कि जो पहले दो संघाटकों में मुनि तुम्हारे यहाँ आये थे, वे हम ही हैं । वस्तुतः हम दूसरे हैं ।

उन मुनियों ने देवकी देवी को इस प्रकार कहा, और यह कहकर वे जिस दिशा से आये थे, उसी दिशा की ओर लौट गये ।

Maxim 11 :

This question of *Devakī* answered by the sages in these words–O beloved as gods ! The position is not like this, that sages could not get food and water from high-low-middle-class houses of this city of *Kṛṣṇa Vāsudeva*, which is like heaven abode and nor the sages go over and again in the same house for their need of food and water.

O beloved as gods ! The fact is like this. We six are uterine brothers, sons of *Nāga Gāthāpati* and his wife *Sulasā*, inhabitant of city *Bhaddilapura*. We all six brothers are just alike regarding age, colour, body-formation etc., and looked like–resembled *Nalakūbara*. We all six brothers heard sermon of *Arihanta Arıṣṭanemi*, took it to heart and being frightened from the cycle of births and deaths–the world, we accepted consecration and practising sagehood.

The day we all six brothers accepted consecration, bowed down and worshipped *Arihanta Ariṣṭanemi* and expressed our utter wish in these words–"O *Bhagawan* ! by your permission we wish to wander with you observing two days' fast penance (and third day to take food) (*Bele-Bele tapasyā*) till life, thus purifying our souls."

Then *Bhagawāna* permitting us said–"O beloved as gods ! Do as you feel happy; but do not delay (careless).

O beloved as gods (*Devākī*) ! obtaining the permission of *Arihanta Ariṣṭanemı*, we began to wander practising *bele-bele* austerity.

Thus, today is the day of breaking fast of six meals, of all six brothers. During the first *prahara* (three hours) of day we studied scriptures and in second *prahara* medıtated and in the third *prahara* taking the permission of *Arihanta Ariṣṭanemi*, we made three groups of two monks each and wandering for seeking food and water ın high-low-middle class houses of the city approached to your palace.

O beloved as gods ! It is not the fact that the monks came to you in two former groups, we are those; but it is true that we are other.

Those monks said such to *Devakī* and returned back to the direction they had come.

सूत्र १२ :

तए णं तीसे देवईए देवीए अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे ।

एवं खलु अहं पोलासपुरे णयरे अइमुत्तेणं कुमार समणेणं बालत्तणे वागरिया—तुमं णं देवाणुप्पिए ! अट्ठपुत्ते पयाइस्ससि सरिसए जाव णल-कुब्बरसमाणे णो चेव णं भारहेवासे अण्णाओ अम्मयाओ तारिसए पुत्ते पयाइस्संति ।

तं णं मिच्छा ? इमं णं पच्चक्खमेव दिस्सइ भारहे वासे अण्णाओ वि अम्मयाओ एरिसए जाव पुत्ते पयायाओ । तं गच्छामि णं अरहं अरिट्ठणेमिं वंदामि णमंसामि, वंदित्ता णमंसित्ता इमं च णं एयारूवं वागरणं पुच्छिस्सामि त्ति कट्टु एवं संपेहेइ संपेहित्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी-लहु करण जाणप्पवरं जाव उवट्ठवेति जहा देवाणंदा जाव पज्जुवासइ ।

सूत्र १२ :

इस प्रकार की बात सुनकर (मुनियों के लौट जाने के पश्चात्) देवकी के मन में इस प्रकार की विचार तरंगें उत्पन्न हुईं ।

एक बार पोलासपुर नगर में अतिमुक्त कुमार नामक श्रमण ने मेरे समक्ष बचपन में इस प्रकार भविष्यवाणी की थी कि—हे देवानुप्रिये देवकी ! तुम, एक दूसरे के पूर्णतः समान (सरीखे) आठ पुत्रों को जन्म दोगी, जो नलकूबर के समान होंगे । भरतक्षेत्र में दूसरी कोई माता वैसे पुत्रों को जन्म नहीं देगी ।

क्या यह भविष्यवाणी आज मिथ्या सिद्ध हुई ? क्योंकि यह प्रत्यक्ष ही दीख रहा है कि भरतक्षेत्र में अन्य माताओं ने भी सुनिश्चित रूपेण ऐसे एक समान छह सुन्दर पुत्रों को जन्म दिया है । (मुनि की बात मिथ्या नहीं होनी चाहिए, फिर यह प्रत्यक्ष में उससे विपरीत क्यों ? विचारों की इस उथल-पुथल में देवकी ने निर्णय किया) "ऐसी स्थिति में मैं अरिहन्त अरिष्टनेमि भगवान की सेवा में जाऊँ, उन्हें वन्दन नमस्कार करूँ, और वन्दन नमस्कार करके अतिमुक्तक मुनि के कथन के विषय में प्रभु से पूछूँ" देवकी ने इस प्रकार सोचा, ऐसा सोचकर देवकी ने अपने आज्ञाकारी पुरुषों

को बुलाया और बुलाकर कहा–"शीघ्र ही लघुकर्ण वाले (शीघ्रगामी) श्रेष्ठ धर्म रथ को तैयार करके लाओ ।"

आज्ञाकारी पुरुषों ने रथ उपस्थित किया । देवकी महारानी तैयार होकर उस रथ में बैठीं और प्रभु के समवशरण में उपस्थित हुईं । देवानन्दा द्वारा जिस प्रकार भगवान महावीर की पर्युपासना किये जाने का वर्णन है, उसी प्रकार महारानी देवकी भगवान अरिष्टनेमि के दर्शन कर पर्युपासना करने लगी ।

Maxim 12 :

Hearing this episode and after returning sages, the mind of *Devakī* engrossed by these thought currents.

Once, in my childhood, in *Polāsapura* city sage *Atimukta* foretold about me that *Devakī*, the beloved as gods ! you will give birth to eight sons, they will resemble each other and would be beautiful like *Nalakūbara.* In this *Bharatakṣetra*, no other mother will give birth to such sons.

Does this forecast not proved false to-day ? It is clearly evident that other mothers have also given birth to such resembling sons. (But forecast of sage must not be wrong. Why this controversy before my eyes ? During the up and down of thoughts) *Devakī* determined that I should go to *Arihanta Ariṣṭanemi,*bow down and worship him and doing thus, ask about the forecast of sage *Atimukta. Devakī* thought like this and as such she called the family servants and ordered them–"Bring forth quickly the stately religious chariot (*ratha)* with all equipments."

Family servants presented the chariot immediately. Queen *Devakī* sat in that chariot and approached in the religious congregation of *Ariṣṭanemi.* As we get the description of worshipping *Bhagawāna Mahāvīra*, by *Devānandā* in the same way *Devakī* began to worhip *Arihanta Ariṣṭanemi.*

देवकी चिन्ता मग्न
धर्म रथ में

चित्रक्रम १० :

रानी देवकी की शंका तथा भगवान के समक्ष पृच्छा

दृश्य १–मुनियो के चले जाने के पश्चात् देवकी चिन्तन मग्न होकर सोचती है, मुझे बचपन में श्रमण अतिमुक्तक ने कहा था– इस भरतक्षेत्र में तुम नलकूवर के समान सुन्दर एक जैसे आठ पुत्रो की माता वनोगी। ऐसे पुत्रों को भरतक्षेत्र मे अन्य कोई माता जन्म नही देगी, तो क्या मुनि की वाणी असत्य सिद्ध हो गई ? ये छह सहोदर वधु भी नलकूवर के समान एक जैसे है और इन मुनियों ने वताया कि इनकी माता, नाग गाथापति की भार्या सुलसा है वास्तव मे क्या यही सत्य है ?

दृश्य २–संशयशील होकर माता देवकी धर्मरथ पर आरूढ होकर भगवान अरिष्टनेमि से छहो सहोदर वधु अणगारो की चर्चा करके श्रमण अतिमुक्तक की भविष्य वाणी के विषय मे शका करती है। भगवान अरिष्टनेमि द्वारा समाधान। (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 10 :

Suspicion of queen *Devakī* and asking from *Bhagawāna*

First Scene–After returning sages *Devakī* thinks deeply–When I was merely a lass, monk *Atimuktaka* said to me–you would be the mother of eight sons, beautiful like *Nalakūbara* in this *Bhratakṣetra* (*Bhārata*–India) Other woman could not give birth to such sons Then are the words of monk proved false ? These six uterine brother sages are alike and like *Nalakūbara* and these sages told that their mother is *Sulasā*, wife of *Nāga* trader Is it really true ?

Second Scene–Being doubtful mother *Devakī* riding on religious chariot approaches to *Bhagawāna* and discussing about six uterine brother sages expresses her suspicion about the words of monk *Atimuktaka* *Bhagawāna* pacifies her curiosity. (Sec 3/Ch. 8)

विवेचन

"अइमुत्तेणं कुमार समणेणं" पाठ से यहाँ अभिप्राय है अतिमुक्त नामक कुमार श्रमण की भविष्यवाणी से । घटना इस प्रकार है ।

अतिमुक्त कुमार श्रमण कंस के छोटे भाई थे । जिस समय कंस की पत्नी जीवयशा अपनी छोटी ननद देवकी के साथ क्रीड़ा कर रही थी उस समय अतिमुक्त कुमार जीवयशा के घर में भिक्षा के लिए गये थे । आमोद-प्रमोद में मग्न जीवयशा ने अपने देवर को मुनि के रूप में देखकर उपहास करना प्रारम्भ किया । वह बोली–"देवर जी ! आओ तुम मेरे साथ क्रीड़ा करो, इस आमोद-प्रमोद में तुम भी भाग लो ।"

इस पर मुनि अतिमुक्त कुमार जीवयशा से कहने लगे–"जीवयशे ! जिस देवकी के साथ तुम इस समय क्रीडा कर अपने भाग्य पर इतरा रही हो, भविष्य में इस देवकी के गर्भ से आठ पुत्र उत्पन्न होगे । ये पुत्र इतने सुन्दर और पुण्यात्मा होंगे कि भारतवर्ष में किसी स्त्री के ऐसे पुत्र नहीं होंगे । परन्तु इस देवकी का सातवाँ पुत्र तेरे पति को मारकर आधे भारतवर्ष पर राज्य करेगा ।" यह बात देवकी देवी ने बचपन में सुनी थी । अतः इसी के समाधान हेतु उसने भगवान अरिष्टनेमि के पास जाने का निश्चय किया ।

● **जहा देवाणंदा जाव पज्जुवासइ–**

माता देवकी का भगवान की सेवा में जाने का वर्णन भगवती सूत्र शतक ९ उद्देशक ३३ में वर्णित माता देवानन्दा की दर्शन यात्रा के समान बतलाया गया है । अर्थात् देवकी धार्मिक रथ में बैठकर द्वारका के मध्य बजारों में होती हुई नन्दन वन में पहुंची । भगवान के अतिशय को देखकर रथ से नीचे उतरी और पाँच अभिगम करके समवशरण में जाकर भगवान को विधिवत् वन्दना नमस्कार करके सेवा पर्युपासना करने लगी ।

Elucidation

1. The clause *Aīmutteṇaṁ Kumāra Samaṇeṇaṁ* here indicates the forecast of *Atimukta Kumāra-sage.* Happening is this.

Atimukta Kumāra-sage was the younger brother of *Kaṁsa.* When the wife of *Kaṁsa, Jīvayaśā* was making amusements with *Devakī* (the younger sister-in-law) at that time *Atimukta Kumāra-sage* reached the house of *Jīvayaśā* for

seeking food and water. Envolved in rejoicings *Jīvayaśā*, when saw *Atimukta Kumāra-sage*, took in view the past relation of brother-in-law, began to joke. She said—"Brother-in-law ! You also come and participate in amusements and rejoicings."

Then *Atimukta Kumāra-sage* said-*Jīvayaśā* ! Now you are rejoicing with *Devakī* and thinking yourself much fateful; but in future *Devakī* will give birth to eight sons. These sons would be such beautiful and fateful that no other woman of *Bhārat-Varṣa* (India) can produce such sons. But the seventh son of this *Devakī* will murder your husband and rule over half of *Bhārata-varṣa* (India). *Devakī* listened this fact in her childhood. For ascertaining this, queen *Devakī decided* to go to *Bhagawāna Ariṣṭanemi.*

■ ***Jahā Devāṇandā jāva pajjuvāsaï ..***

Description of going *Devakī* to *Bhagawāna Ariṣṭanemi* is told like going to see *Bhagawāna Mahāvīra* by *Devānandā*, which we get in *Bhagavatī Sūtra, Śataka 9, Uddeśaka 33.* Meaning–*Devakī* sitting in religious chariot, going through the main markets of *Dwārakā* approached *Nandana-vana* Seeing the felicitations of *Bhagawāna*, she practised five *Abhigamas* and then reaching the religious assembly of *Bhagawāna* bowed down to him in due order and began to praise and worship him

सूत्र १३ :

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी देवई देविं एवं वयासी—से णूणं तव देवई ! इमे छ अणगारे पासित्ता अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था । एवं खलु पोलासपुरे णयरे अइमुत्तेणं तं चेव जाव णिग्गच्छसि, णिगच्छित्ता जेणेव ममं अंतियं हव्वमागया से णूणं देवई देवी ! अयमट्ठे समट्ठे ?

हंता ! अत्थि ।

एवं खलु देवाणुप्पिए !

तेणं कालेणं तेणं समएणं भद्दिलपुरे णयरे, णागे णामं गाहावई परिवसइ, अड्ढे । तस्सणं णागस्स गाहावइस्स सुलसा णामं भारिया होत्था । सा सुलसा-गाहावइणी बालत्तणे चेव णिमित्तिएणं वागरिया—एस णं दारिया

णिंदू भविस्सई । तए णं सा सुलसा बालप्पभिइं चेव हरिणेगमेसि देवभत्ता यावि होत्था ।

हरिणेगमेसिस्स पडिमं करेइ, करित्ता कल्लाकल्लिं ण्हाया जाव पायच्छित्ता उल्लपड-साडिया महरिहं पुप्फच्चणं करेइ, करित्ता जाणुपायवडिया पणामं करेइ, तओ पच्छा आहारेइ वा णीहारेइ वा ।

सूत्र १३ :

तदनन्तर अर्हन्त अरिष्टनेमि देवकी को सम्बोधित कर इस प्रकार बोले– हे देवकी ! क्या इन छः साधुओं को देखकर वस्तुतः तुम्हारे मन में इस प्रकार का विचार या संशय उत्पन्न हुआ कि पोलासपुर नगर में अतिमुक्तकुमार श्रमण ने तुम्हें आठ अद्वितीय पुत्रों को जन्म देने का जो भविष्यकथन किया था, वह मिथ्या सिद्ध हुआ ऐसा प्रत्यक्ष दिखाई दे रहा है ? अतः उस विषय में पृच्छा करने के लिए तुम जल्दी-जल्दी यहाँ चली आई हो । हे देवकी ! क्या यह बात ठीक है ?

देवकी ने कहा–हाँ भगवन् ! ऐसा ही है ।

प्रभु अरिष्टनेमि ने शंका समाधान करते हुए कहा–हे देवानुप्रिये ! उस काल उस समय में भद्दिलपुर नगर में नाग नाम का गाथापति रहता था, जो आढ्य (महान ऋद्धिशाली) था । उस नाग गाथापति की सुलसा पत्नी थी । उस सुलसा गाथापत्नी को बाल्यावस्था में ही किसी निमित्तज्ञ ने कहा– यह बालिका निंदू (मृतवत्सा) यानि मृत बालकों को जन्म देने वाली होगी । इस कारण सुलसा बाल्य-काल से ही हरिणगमेषी देव की भक्त बन गई ।

सुलसा ने हरिणगमेषी देव की मूर्ति बनाई । मूर्ति बनाकर प्रतिदिन प्रातःकाल स्नान करके यावत् दुःस्वप्न निवारणार्थ प्रायश्चित्त (शुद्धि) कर गीली साड़ी पहने हुए उसकी बहुमूल्य सुन्दर पुष्पों से अर्चना करती । पुष्पों द्वारा पूजा के पश्चात् घुटने टिकाकर (पाँचों अंग नमाकर) प्रणाम करती, तदनन्तर आहार-नीहार आदि अपने अन्य कार्य करती थी ।

Maxim 13 :

Thereafter *Arihanta Ariṣṭanemi* addressing queen *Devakī* spoke thus unto her–O *Devakī* ! Did such suspicion and thought arouse in your mind, that the forecast about you done by *Atimukta Kumāra-sage* that you will give birth to eight matchless sons, that proved false, it seems ? In this regard, for asking and being sure, you have come quickly here. Is it correct ?

Devakī accepted–O *Bhagawan* ! It is correct.

Bhagawāna Ariṣṭanemi removing the doubt, began to speak–

O beloved as gods ! At that time and at that period, a *gāthāpatī* named *Nāga* lived in *Bhaddilapura*. He was very rich. *Sulasā* was his wife. An astrologer told about *Sulasā*, when she was in childhood that this girl would give birth to deceased childs, On account of this, *Sulasā* became he devotee of *Hariṇagameṣī* god

Sulasā made an image of *Hariṇagameṣī* god Every morning she bathed, repented for rectification of ill-dreams and worship the god by fragrant, beautiful flowers of great wealth, wearing all the time drenched robe After worship she fell on her knees and bow down; then she used to did the work of household, food etc

सूत्र १४ :

तए णं तीसे सुलसाए गाहावइणीए भत्ति-बहुमाण सुस्सुसाए हरिणेगमेसी देवे आराहिए यावि होत्था । तए णं से हरिणेगमेसी देवे सुलसाए गाहावइणीए अणुकंपणट्ठाए सुलसं गाहावइणि तुमं च णं दोण्णि वि समउउयाओ करेइ ।

तए णं तुब्भे दो वि सममेव गब्भे गिण्हह, सममेव गब्भे परिवहह, सममेव दारए पयायह । तए णं सा सुलसा गाहावइणी विणिहायमावण्णे दारए

चित्रक्रम ११ :

अर्हत् अरिष्टनेमि के द्वारा रहस्योद्‌घाटन

देवकी रानी के पूछने पर अर्हत् अरिष्टनेमि ने बताया कि भद्‌दिलपुर निवासी नाग गाथापति की पत्नी सुलसा को किसी ने कहा था, कि वह मृतवत्सा होगी, अत वह बाल्यकाल से ही गीली साडी पहनकर बहुमूल्य पुष्पों आदि से हरिणगमैषी देवता की भक्ति करने लगी। हरिणगमैषी देव सुलसा की अनुकम्पा के लिए कस के कारागार मे जन्मे तुम्हारे जीवित पुत्रो को उठाकर उसके पास रख देता था और उसकी मृत सन्तान को तुम्हारे पास लाकर रख देता, जिससे तुम्हे लगता कि तुमने मृत सन्तान को जन्म दिया है। वास्तव मे ये छहो सहोदर श्रमण तुम्हारे ही आत्मज है। (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 11 :

The secret revealed by *Arhat Aristanemi*

At the curiosity of queen *Devaki*, *Arhat Aristanemi* told–Anybody fore-told to *Sulasā*, wife of *Nāga* trader, resident of *Bhaddilapura*, that you will give birth to still (dead) sons Therefore from her childhood she began to offer valuable flowers to god *Harinagamaisī* with great devotion wearing drenched robe (*sāri*), *Harinagamaisī* pleased Having pity on *Sulasā*, god *Harinagamaisī* used to put your alive sons you give birth in the prison of *Kansa* beside *Sulasā* and her still sons beside you So you felt that you have given birth to a still son Really these six uterine brother friars are your own sons. (Sec 3/Ch 8)

सुलसा द्वारा देव की भक्ति
कारागार में पुत्र जन्म

पच्चायइ । तए णं से हरिणेगमेसी देवे सुलसाए अणुकंपणट्ठाए विणिहायमावण्णए दारए करयल-संपुडेणं गिण्हइ । गिण्हित्ता तव अंतियं साहरइ ।

तं समयं च णं तुम णवण्हं मासाणं सुकुमाल दारए पसवसि ।

जे वि य णं देवाणुप्पिए ! तव पुत्ता ते वि य जाव अंतियाओ करयल-संपुडेणं गिण्हइ, गिण्हित्ता सुलसाए गाहावइणीए अंतिए साहरइ ।

तं तव चेव णं देवइ ! ए ए पुत्ता। णो चेव णं सुलसाए गाहावइणीए ।

सूत्र १४ :

तब सुलसा गाथापत्नी की उस भक्ति (अनुराग) बहुमान-सन्मान सत्कार पूर्वक की गई सेवा-शुश्रूषा से देवता प्रसन्न हुआ । हरिणगमेषी देव, सुलसा गाथापत्नी पर अनुकम्पा करने हेतु सुलसा गाथापत्नी को तथा तुम्हें–दोनों को समकाल में ऋृतुमति (रजस्वला) करता ।

तब तुम दोनों समकाल में गर्भ धारण करतीं और समकाल में ही बालक को जन्म देतीं । तब हरिणगमेषी देव सुलसा पर अनुकम्पा करने के लिए उसके मृत बालक को सावधानी पूर्वक दोनों हाथों में लेता और लेकर तुम्हारे पास ले आता ।

इधर उस समय तुम भी नवें मास का काल पूर्ण होने पर सुकुमार बालक को जन्म देती थीं ।

हे देवानुप्रिये ! जो तुम्हारे पुत्र होते उनको भी हरिणगमेषी देव तुम्हारे पास से अपने दोनों हाथों में ग्रहण करता और उन्हें ग्रहण कर सुलसा गाथापत्नी के पास लाकर रख देता था ।

अतः वास्तव में हे देवकी ! ये तुम्हारे ही आत्मज पुत्र हैं, सुलसा गाथा पत्नी के नहीं हैं ।

Maxim 14 :

The god pleased with *Sulasā* by her such devotion, respect and service. On account of compassion for *Sulasā*

Gāthāpatnī god *Hariṇagameṣī* menstruated both–you and her at the same time.

Then at the same time you and she become pregnant and both give birth to sons at the same (after completing the pregnancy period of nine months) time.

Then god *Hariṇagameṣī*–used to take the still (deceased) son of *Sulasā* and kept that beside you.

O beloved as gods ! Like this the god carefully took your alive son and kept in the lap of *Sulasā* housewife.

Devakī ! Therefore, verily, these six monks are your sons and not of *Sulasā*.

सूत्र १५ :

तए णं सा देवई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया, अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ । वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव ते छ अणगारा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता ते छप्पि अणगारे वंदइ णमंसइ ।

वंदित्ता णमंसित्ता आगयपण्हुया पप्फुल्ललोयणा कंचुय-पडिक्खित्तिया दरियवलय बाहा-धाराहय-कलंब-पुप्फग विव समूससिय–रोमकूवा ते छप्पि अणगारे अणिमिसाए दिट्ठीए पेहमाणी पेहमाणी सुचिरं णिरिक्खइ । णिरिक्खित्ता वंदइ णमंसइ ।

वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छई, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता तमेव धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ, दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बारवइं णयरिं अणुप्पविसइ ।

अणुप्पविसित्ता जेणेव सए गिहे, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ,

पच्चोरुहित्ता जेणेव सए वासघरे, जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता, सयंसि सयणिज्जंसि णिसीयइ ।

सूत्र १५ :

तब उस देवकी देवी ने अरिहंत अरिष्टनेमि के मुखारविन्द से इस प्रकार रहस्य उद्घाटित करने वाली बात सुनकर हृदयंगम की । संतुष्ट एवं प्रसन्न चित्त होकर अरिहंत अरिष्टनेमि भगवान को वन्दन नमस्कार किया और वन्दन नमस्कार करके वे छहों मुनि जहाँ विराजमान थे, वहाँ आई । आकर उसने उन छहों मुनियों को वन्दन किया ।

वन्दन नमस्कार करके देवकी छहों अणगारों को अपलक देखने लगी । उन अणगारों को देखकर उसके हृदय में, पुत्र-प्रेम उमड़ पड़ा । उसके स्तनों से दूध झरने लगा । हर्ष के कारण उसकी आँखें विकसित हो गयीं और खुशी के आँसू भर आये । अत्यन्त हर्ष के कारण शरीर फूलने से उसकी कंचुकी की कसें टूट गईं और भुजाओं के आभूषण तथा हाथ की चूड़ियाँ तंग हो गईं । जिस प्रकार वर्षा की धारा पड़ने से कदम्ब पुष्प एक साथ विकसित हो जाते हैं, उसी प्रकार उसके शरीर के सभी रोम-रोम पुलकित हो गये । वह उन छहों मुनियों को निर्निमेष दृष्टि से देखती हुई चिरकाल तक निरखती ही रही । फिर स्वयं को संभालकर उसने छहों मुनियों को वन्दन नमस्कार किया ।

वन्दन नमस्कार करके वह जहाँ भगवान अरिष्टनेमि विराजमान थे, वहाँ आई और आकर अर्हत् अरिष्टनेमि को तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दन नमस्कार किया ।

वन्दन नमस्कार करके उसी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हुई । रथारूढ़ हो, जहाँ द्वारका नगरी है, वहाँ आयी और वहाँ आकर द्वारका नगरी में प्रविष्ट हुई ।

देवकी द्वारका नगरी में प्रवेश कर जहां अपने प्रासाद के बाहर की उपस्थानशाला अर्थात् बैठक थी वहाँ आयी, वहाँ आकर धार्मिक रथ से

नीचे उतरी, नीचे उतरकर जहाँ अपना वास गृह (निवास कक्ष) था, जहाँ अपनी शय्या थी, वहाँ आयी, वहाँ आकर अपनी शय्या पर बैठ गयी।

Maxim 15 :

Then *Devakī Devī*, listening the secret disclosed by *Arihanta Ariṣṭanemi*, became glad. She bowed down, praised and worshipped him and reached to the six monks and bowed down and worshipped them.

Devakī gazed those sages till a long time. Her heart filled with motherly affection. Her breasts began to milch. Due to joy her eyes streamed and filled with tears of happiness. Her body spread out so the binding threads of her brassier broken up, her bracelets splitted on her arms, the root-cells of her hair swelled like *kadamba* flowers beaten by rain showers. She observed those six monks with unwinking eyes upto a long time. Then *Devakī* brought herself to her senses and again bowed down all the six sages.

Thereafter she came to *Arihanta Ariṣṭanemi*, circumambulating thrice she bowed down to him with devotion and went out of religious assembly.

She sat in her religious chariot, reached *Dwārakā* city and then her palace. Getting down from chariot she entered her bed-room and sat on her bed.

सूत्र १६ :

तए णं तीसे देवईए अयं अज्झत्थिए चिंतिए पत्थिए मणोगए संकप्पे समुप्पण्णे-एवं खलु अहं सरिसए जाव णलकुब्बर-समाणे सत्त पुत्ते पयाया णो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणए समणुभूए। एस वि य णं कण्हे वासुदेवे छण्णं मासाणं ममं अंतियं पायवंदए हव्वमागच्छइ।

तं धण्णाओ णं ताओ अम्मयाओ जासिं मण्णे णियग-कुच्छिसंभूयाइं थणदुद्धलुद्धयाइं महुर-समुल्लावयाइं मम्मण-जंपियाइं थणमूल-कक्ख

देसभागं अभिसरमाणाइं, मुद्धयाइं पुणो य कोमल-कमलोवमेहिं हत्थेहिं गिण्हिऊण उच्छंगे णिवेसियाइं देंति; समुल्लावए सुमहुरे पुणो-पुणो मंजुलप्पभणिए ।
अहं णं अधण्णा अपुण्णा एत्तो एगयरमवि ण पत्ता (एवं) ओहयमण-संकप्पा जाव झियायइ ।

देवकी को पुत्र अभिलाषा

सूत्र १६ :

उस समय देवकी को इस प्रकार का विचार, चिन्तन और अभिलाषापूर्ण मानसिक संकल्प उत्पन्न हुआ कि—अहो ! मैंने पूर्णतः समान आकृति वाले यावत् नलकूबर के समान सात पुत्रों को जन्म दिया, पर मैंने एक पुत्र की भी बाल्यक्रीड़ा के आनन्द का अनुभव नहीं किया । फिर यह कृष्ण वासुदेव भी छः महीनों के पश्चात् मेरे पास चरण-वन्दना के लिए भागता दौड़ता आता है ।

इस संसार में वास्तव में वे माताएं धन्य हैं, जिनकी अपनी कुक्षि से उत्पन्न हुए, स्तनपान के लोभी बालक, मधुर-आलाप करते हुए, तुतलाती बोली से मन्मन बोलते हुए, स्तनमूल कक्षा भाग में इधर से उधर अभिसरण करते घूमते रहते हैं, एवं फिर उन मुग्ध भोले बालकों को जो माताएँ कमल के समान अपने कोमल हाथों द्वारा पकड़ कर गोद में बिठाती हैं, और अपने बालकों से मंजुल—मधुर शब्दों में बार-बार बातें करती हैं ।

मैं तो निश्चित रूप से अधन्य, अकृतार्थ (असफल) और पुण्यहीन हूँ क्योंकि मैंने इनमें से किसी एक पुत्र की भी बाल-क्रीड़ा नहीं देखी । इस प्रकार देवकी खिन्न मन से हथेली पर मुख रखे उदास होकर आर्त्तध्यान करने लगी ।

Son-desire of Devakī

Maxim 16 :

Then there arose such thinking, thought and mental current in the mind of *Devakī*—Oh truely I gave birth to seven sons exactly alike (until) resembling *Nalakūbara* in beauty but

I could not enjoy the childhood plays of even one of them. Even this *Kṛṣṇa* comes to me after six months for reverence, but in hurry.

In this world, really happy and fateful are those mothers, the sons (child) born from their own wombs, greedy for sucking the milk of their breasts, lisping sweetly, babbling and pattling, moving to their armpits from where the breasts arose up, give a sitting in their laps having them by lotus-like hands, give sweet talks and pleasing words.

Definitely, I am hapless, meritless and successless; because I have not even visualized the childhood plays of any one of my seven sons.

Thus *Devakī*, putting her cheek on her palm, drowned in sorrowful thoughts with frustrated mind and hopes

सूत्र १७ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे ण्हाए जाव विभूसिए देवईए देवीए पायवंदए हव्वमागच्छइ ! तए णं से कण्हे वासुदेवे देवइं देविं पासइ पासित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ करित्ता देवइं देविं एवं वयासी—

अण्णया णं अम्मो ! तुब्भे ममं पासित्ता हट्ठ जाव भवह, किण्णं अम्मो ! अज्ज तुब्भे ओहय जाव झियायह ।

तए णं सा देवई देवी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु अहं पुत्ता ! सरिसए जाव समाणे सत्त पुत्ते पयाया । णो चेव णं मए एगस्स वि बालत्तणे अणुभूए ।

तुमं पि य णं पुत्ता ! ममं छण्हं-छण्हं मासाणं अंतियं हव्वमागच्छसि, तं धण्णाओ णं ताओ, अम्मयाओ जाव झियामि ।

सूत्र १७ :

देवकी इस प्रकार उदास होकर बैठी थी कि उसी समय वहाँ श्रीकृष्ण वासुदेव स्नान कर यावत् वस्त्र अलंकारों से विभूषित होकर देवकी माता

चिन्ता मग्न माता से
श्री कृष्ण का प्रश्न

चित्रक्रम १२ :

देवकी का शिशु लालन के लिए आर्तध्यान

अर्हत अरिष्टनेमि से सत्य जानकर देवकी घर आई और उदास होकर सोचने लगी–वे माताए धन्य है, भाग्यशालिनी है, जो अपने शिशु को अपने हाथ से खिलाती है, अगुली पकडकर चलाती है, और गोद मे लेकर उसका दुलार करती है, उसे दूध पिलाती है, और वार-वार अपने शिशुओ के साथ तोतली बोली बोलती है । मैने सात पुत्रो को जन्म दिया, परन्तु एक की भी बाल-लीला नही देखी । यह श्रीकृष्ण वासुदेव भी तो छह-छह महीने से कुछ क्षण के लिए ही सूरत दिखाने आता है ।

देवकी इन विचारो मे खोई है, तभी श्रीकृष्ण वासुदेव उनकी चरण-वन्दना करने आते है । देवकी माता को उदास और अन्यमनस्क देखकर श्रीकृष्ण कारण पूछते है । (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 12 :

Painy feelings of *Devakī* for a baby.

Knowing real fact from *Arhat Aristanemi*, *Devakī* returned to her palace and began to think sadly–Fateful are those mothers, who make their babies play with their own hands, walk them taking their fingers, love them getting up in their laps, fed them by their own breasts, embrace them, speak lisking and pleasing words with their babies over and over again I have given birth to seven sons but could not see the childish plays of any one of them Even this *Vāsudeva Krsna* comes to bow me even after six months and that is also for few minutes

Devakī is deep in such sadful thoughts; at the same time *Śrī Krsna Vāsudeva* comes to rever and bow down to her feet Seeing mother *Devakī* sad he asks the reason

(Sec 3/Ch 8)

के चरण वन्दन के लिए शीघ्रतापूर्वक आये । तब कृष्ण वासुदेव देवकी माता के दर्शन करते हैं । दर्शन कर देवकी के चरणों में वन्दन करते हैं । उन्होंने अपनी माता को उदास और चिन्तित देखा तो चरण वन्दन कर देवकी देवी से इस प्रकार पूछने लगे–

हे माता ! इससे पहले तो मैं जब-जब आपके चरण वन्दन के लिए आता था, तब-तब आप मुझे देखते ही हर्ष से पुलकित एवं आनन्दित हो जाती थीं, पर माँ आप आज उदास, चिन्तित तथा आर्त्तध्यान में निमग्न सी क्यों दिखाई दे रही हो ? हे माता ! इसका क्या कारण है ? कृपा करके बताइये ।

कृष्ण द्वारा इस प्रकार का प्रश्न पूछे जाने पर देवकी देवी कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहने लगी–हे पुत्र ! वस्तुतः बात यह है कि मैंने एक समान आकार, एक समान रंग-रूप वाले सात पुत्रों को जन्म दिया, परन्तु मैंने उनमें से किसी एक का भी बाल्यकाल अथवा बाल-लीला का अनुभव नहीं किया ।

पुत्र ! तुम भी छः छः महीनों के अन्तर से मेरे पास चरण वन्दन के लिए आते हो । इसीलिए मैं ऐसा सोच रही हूँ कि वे माताएँ धन्य हैं, पुण्यशालिनी हैं, जो अपनी संतान को स्तनपान कराती हैं, यावत् उनके साथ मधुर आलाप करती हैं, और उनकी बाल-क्रीड़ा के आनन्द का अनुभव करती हैं । मैं अधन्य हूँ, अकृत-पुण्य हूँ । यही सब सोचती हुई मैं उदासीन होकर इस प्रकार का आर्त्तध्यान कर रही हूँ ।

Maxim 17 :

Thus *Devakī* was sitting sad-minded. At the same time *Kṛṣṇa Vāsudeva*, bathed (until) decorated his body with clothes and ornaments, came quickly to mother *Devakī* for reverence of her feet. Then *Vāsudeva Kṛṣṇa* saw and bowed down at the feet of *Devakī*. When he saw his mother sad and worried then he enquired–

O mother ! Formerly whenever I come to touch your feet, you always became glad seeing me; but O mother ! today

why are you sad, worried and brooding ? What is its reason ? Please tell me.

On this question *Devakī* began to say unto *Kṛṣṇa Vāsudeva*–O Son ! really the fact is this that I have given birth to seven sons exactly same in colour, form and body formation; but could not enjoy the childhood days and plays of any single son.

You also come to me after six months for touching my feet. Hence I am thinking that those mothers are fateful, who feed their sons by their breasts until give sweet words. I am hapless, meritless. Pondering over all this I am sad, worried and brooding.

सूत्र १८ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे देवईं देविं एवं वयासी–मा णं तुब्भे अम्मो ! ओहय जाव झियायह । अहं णं तहा वत्तिस्सामि जहा णं ममं सहोदरे कणीयसे भाउए भविस्सइ ।

त्ति कट्टु देवईं देविं ताहिं इट्ठाहिं कंताहिं जाव वग्गूहिं समासासेइ ।

समासासित्ता तओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव पोसहसाला तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता जहा अभओ णवरं हरिणेगमेसिस्स अट्ठम भत्तं पगिण्हइ ।

जाव अंजलिं कट्टु एवं वसायी–इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! मम सहोदरं कणीयसं भाउयं विदिण्णं ।

श्रीकृष्ण द्वारा चिन्ता निवारण का उपाय

सूत्र १८ :

माता की यह बात सुनकर श्रीकृष्ण वासुदेव ने देवकी देवी से इस प्रकार कहा–हे माताजी ! आप उदास अथवा चिन्तित होकर अब आर्त्तध्यान मत करो । मैं ऐसा प्रयत्न करूँगा कि जिससे मेरे एक सहोदर छोटा भाई होगा ।

चित्रक्रम १३ :

श्रीकृष्ण द्वारा हरिणगमैषी देव की आराधना

श्रीकृष्ण वासुदेव ने पौषधशाला में जाकर तेला करके हरिणगमैषी देवता का आह्वान किया। हरिणगमैषी देव आकाश मे प्रकट हुआ। श्रीकृष्ण वासुदेव ने कहा–हे देवानुप्रिय ! मेरी माता की इच्छा है कि मुझे एक छोटा भाई प्राप्त हो। (वर्ग ३/अध्य. ८)

Illustration No. 13 :

Propiliation of god *Harinagamaisī* by *Śrī Krsna*.

Srī Krsna Vāsudeva went to oratory (*Pausadhaśālā*), observed three days' fast penance and called god *Harinagamaisī*. *Harinagamaisī* came and remained still in sky. *Śrī Krsna Vāsudeva* gave words to his desire–Beloved as gods ! My mother wishes that I should have one my uterine younger brother. (Sec 3/Ch 8)

माता की इच्छापूर्ति
की अभिलाषा

इस प्रकार कहकर श्रीकृष्ण ने देवकी माता को प्रिय, अभिलषित, मधुर एवं इष्ट कान्त वचनों से धैर्य बंधाया, आश्वस्त किया ।

इस प्रकार अपनी माता को आश्वस्त कर श्रीकृष्ण माता के आवास से निकले । निकलकर जहां पौषधशाला थी वहां आये। पौषधशाला में आकर जिस प्रकार अभयकुमार ने अष्टम भक्त तप (तेला) स्वीकार करके अपने देवता की आराधना की थी, उसी प्रकार श्री कृष्ण वासुदेव भी तेला करके हरिणगमेषी देव की आराधना करने लगे ।

आराधना से आकर्षित होकर वह दिव्य रूप एवं विशिष्ट कान्तिवाला हरिणगमेषी देव अन्तरिक्ष में कृष्ण वासुदेव के सम्मुख उपस्थित हुआ और श्रीकृष्ण वासुदेव से बोला–हे देवानुप्रिय ! मैं हरिणगमेषी देव हूं। अष्टम भक्त तप करके आपने मुझे क्यों याद किया ? आपकी आराधना से आकृष्ट हुआ मैं उपस्थित हूँ। कहिये, क्या इच्छा है ? आपका क्या मनोरथ है ? मैं आपके किस शुभ कार्य में सहायता कर सकता हूँ ?

तब श्रीकृष्ण वासुदेव ने दोनों हाथ जोड़कर उस देव से कहा–हे देवानुप्रिय ! मेरे एक सहोदर लघुभ्राता का जन्म हो, यह मेरी इच्छा है ।

Worry-Preventive device by Śrīkṛṣṇa

Maxim 18 :

Hearing this expression and knowing the desire of mother, *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* said–O mother ! Do not be sad, worried and brood, I shall so strive that my uterine brother will take birth.

Thus saying *Śrīkṛṣṇa* assured his mother *Devakī* with sweet, pleasing and agreeable words.

Thus assuring his mother, *Śrīkṛṣṇa* came out of the palace and reached oratory (*Pauṣadhaśālā*). As *Abhaya Kumāra* propiliated his god accepting three days' fast penance, in the same way *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva*, accepting three days' fast penance began to propiliate god *Hariṇagameṣī*.

Having divine form and unique lustre god *Hariṇagameṣī*, attracted by propiliation came and staying in sky became present before *Kṛṣṇa Vāsudeva* and spoke thus–O beloved as gods ! I am god *Hariṇagameṣī*. Why you have called me by eight meals fast austesity. Attracted by your penance I am present before you. Tell me your desire, I can help you, in which your good deed ? What is your wish ?

Then *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* spoke to god with folded hands–O beloved as gods ! One my uterine brother should take birth, it is my wish.

विवेचन

अभयकुमार की भांति श्रीकृष्ण वासुदेव ने हरिणगमेषी देवता की आराधना की और एक छोटा भाई प्राप्त करने की इच्छा जताई।

अभयकुमार का वर्णन ज्ञातासूत्र अ. १ में मेघकुमार के प्रसंग में आता है । माता धारिणी देवी को अ-समय में वर्षा ऋतु जैसी क्रीड़ा करने का दोहद उत्पन्न हुआ । उसकी पूर्ति के लिए अभयकुमार ने अपने पूर्वभव के मित्र सौधर्मकल्प वासी देवता की आराधना की। आराधना की विधि इस प्रकार है–पौषधशाला मे जाकर तेले का तप किया । पूर्ण ब्रह्मचर्यपूर्वक पौषध किया । सब प्रकार के आभूषण आदि उतार कर घास का संथारा बिछाया । अष्टम भक्तपूर्वक मन से हरिणगमेषी देवता का ध्यान कर आह्वान किया । तेले की पूर्ति के दिन देवता का आसन चलायमान हुआ । उसने अवधिज्ञान के उपयोग से जाना तो उत्तर वैक्रिय समुद्घात करके शीघ्र गति से अन्तरिक्ष में स्वयं आकर उपस्थित हुआ ।

Elucidation

Jahā Abhao........

Like *Abhaya Kumāra, Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* propiliated god *Hariṇgameṣī* and expressed his desire for a younger uterine brother.

Description of *Abhaya Kumāra*, we get in *Jñātāsūtra*, Chapter 1, regarding the episode of *Megha kumāra*. An intense desire arose in the head and heart of mother (really step mother of *Abhaya Kumāra) Dhāriṇī*. While she was

pregnant, that I may enjoy rainy season but it was not according to time, because at that time summer was prevailing. For fulfilling the intense desire of pregnant *Dhāriṇī*, *Abhaya Kumāra* propiliated a god who was residing in *Saudharma* heaven, but was friend of his (*Abhaya Kumāra's*) former life. Method of propiliation is thus–Going to oratory (*pauṣadhaśālā*) accepted three days' fast penance, practising full celibacy done *pauṣadha* (a special vow), putting off all kinds of ornaments, spread a pallet–bed of grass. With eight meals fast putting mind in *Hariṇagameṣī* god called him by heart. At the last day of three days' fast, the seat of god moved. By clairvoyance he became aware of the fact, then he came with fast speed and presented himself staying in sky, i.e , not touching the ground or remaining four fingers above from the surface of earth.

सूत्र १९ :

तए णं से हरिणेगमेसी देवे कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–होहिइ णं देवाणुप्पिया ! तव देवलोयचुए सहोदरे कणीयसे भाउए ! से णं उम्मुक्कबालभावे जाव जोव्वणगमणुप्पत्ते अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुण्डे जाव पव्वइस्सइ।

कण्हं वासुदेवं दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयइ, वइत्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

सूत्र १९ :

तदनन्तर वह हरिणगमेषी देव श्रीकृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोला–हे देवानुप्रिय ! देवलोक का एक देव वहां की आयुष्य पूर्ण होने पर देवलोक से च्युत होकर आपके सहोदर छोटे भाई के रूप में जन्म लेगा और इस प्रकार आपका मनोरथ अवश्य पूर्ण जायेगा। परन्तु वह बाल्यकाल बीतने पर युवावस्था प्राप्त होने पर भगवान श्री अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर श्रमण दीक्षा ग्रहण कर लेगा ।

उस देव ने श्रीकृष्ण वासुदेव को दूसरी बार, तीसरी बार भी यही बात कही और कहने के पश्चात् जिस दिशा की ओर से आया था उसी दिशा की ओर लौट गया ।

Maxim 19 :

Thereafter that *Hariṇagameṣī* god spoke such unto *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva*–O beloved as gods ! one god, completing his duration of celestial abode, will take birth as your uterine younger brother, so your desire will be surely fulfilled. But passing boyhood and attaining young age being tonsured he will accept sagehood near *Bhagawāna Śrī Ariṣṭanemi.*

The god said thus twice and thrice to *Śrīkrsṇa Vāsudeva* and then he went back to the same direction from which he came.

सूत्र २० :

तए णं से कण्हे वासुदेवे पोसहसालाओ पडिणिक्खमइ । पडिणिक्खमित्ता जेणेव देवई देवी तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता देवईए देवीए पायग्गहणं करेइ, करित्ता एवं वयासी–होहिइ णं अम्मो ! ममं सहोदरे कणीयसे भाउ त्ति कट्टु देवईं देविं ताहिं इट्ठाहिं जाव आसासेइ, आसासित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।

तए णं सा देवई देवी अण्णया कयाइं तंसि तारिसगंसि जाव सीहं सुमिणे पासित्ता पडिबुद्धा, जाव हट्ठ-तुट्ठहियया तं गब्भं सुहं सुहेणं परिवहइ ।

सूत्र २० :

इसके पश्चात् श्रीकृष्ण वासुदेव पौषधशाला से निकले, निकलकर देवकी माता के पास आये और आकर माता का चरण वन्दन किया । चरण वन्दन करके माता से इस प्रकार बोले–"माताजी ! मेरे एक सहोदर छोटा भाई अवश्य होगा । आपकी इच्छा पूरी होगी। अब आप चिन्ता न करें ।" इस प्रकार उन्होंने देवकी माता को मधुर एवं इष्ट वचनों से आश्वस्त किया और आश्वस्त करके जिधर से आये थे, उधर ही वापस स्वस्थान को चले गये ।

कालान्तर में एकदा देवकी माता जब पुण्यशाली जन के योग्य सुखशय्या पर सोई हुई थी, तब एक सिंह का स्वप्न देखा। स्वप्न देखकर वह जागृत हुई। उठकर राजा वसुदेव जी के पास आई और स्वप्न का वृत्तान्त कहा। इस प्रकार अपने मनोरथ की पूर्णता को निश्चित समझकर देवकी हर्षित एवं प्रसन्न होती हुई सुखपूर्वक अपने गर्भ का परिवहन (पालन-पोषण) करने लगी।

Maxim 20 :

After that *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* came out of oratory and reached to mother *Devakī*. Touching her feet, he said–O mother ! my one uterine brother will surely be born. Your desire will be fulfilled. So you should worry not. Thus he assured mother *Devakī* by sweet and agreeable words and then went back to the direction from which he came.

Then at any other time mother *Devakī* was sleeping on a luxurious (worth sleeping meritorious persons) bed, she saw a lion in dream. She woke up, came to king *Vasudeva* and told her dream. Thus understanding the fulfilment of desire definitely, she became glad and happily began to nurture the child in her womb with due care.

सूत्र २१ :

तए णं सा देवई देवी नवण्हं मासाणं जासुमणा-रत्तबन्धुजीवयं-लक्खारस-सरसपारिजातक-तरुणदिवायर-समप्पभं सव्व-नयणकंतं सुकुमालं जाव सुरूवं गयतालुय समाणं दारयं पयाया। जम्मणं जहा मेहकुमारे जाव।

जम्हा णं अम्हे इमे दारए गयतालुसमाणे तं होउ णं अम्हं एयस्स दारयस्स नामधेज्जे गयसुकुमाले। तएणं तस्स दारगस्स अम्मा पियरे नामं करेंति गयसुकुमाले त्ति। सेसं जहा मेहे जाव अलं भोगसमत्थे जाए यावि होत्था।

सूत्र २१ :

तत्पश्चात् नव मास का गर्भकाल पूर्ण होने पर देवकी देवी ने जपा कुसुम, लाल बंधु जीवक पुष्प के समान, लाक्षारस, श्रेष्ठ पारिजात एवं उदीयमान

सूर्य के समान (लाल) रक्त कान्ति वाले सर्वजन-नयनाभिराम, सुकुमाल परिपूर्ण इन्द्रियों वाले, सौम्य आकार वाले गजतालु के समान लाल एवं कोमल रूपवान पुत्र को जन्म दिया।

गजसुकुमाल के जन्म का वर्णन मेघकुमार के समान समझना चाहिए। (यावत्) नामकरण के समय माता-पिता ने सोचा—"क्योंकि हमारा यह बालक गजतालु के समान सुकोमल एवं सुन्दर है। इसलिए हमारे इस बालक का नाम "गजसुकुमाल" हो।" इस प्रकार विचार कर बालक के माता-पिता ने उसका नाम "गजसुकुमाल" रखा। शेष वर्णन मेघकुमार के समान समझना चाहिए। इस प्रकार क्रमशः गजसुकुमाल युवावस्था को प्राप्त कर भोग-समर्थ हो गया।

Maxim 21 :

Thereafter, on completion of nine month's pregnancy period, *Devakī Devī* gave birth to a son, having the beauty of a jasumina-flower, red *Bandhujīvaka* flower, of lac-pigment, best *Pārijātaka* flower, red like rising sun, eye-soothing of all persons, tender, with all developed senses, good shapeliness and like an elephant's palate.

The description of *Gaja Sukumāla* (name of newly born son of *Devakī*) should be known as of *Megha Kumāra*. (until) At the time of giving name, parents thought that our this child is tender and beautiful like an elephant's palate, so its name should be *Gaja Sukumāla*. Thinking thus the parents of the child gave him the name *Gaja Sukumāla*. Remaining description should be known like *Megha Kumāra*. In this way gradually *Gaja Sukumāla* became young and capable to enjoy worldly entertainments and rejoicings, pleasures.

विवेचन

- जा सुमणा—(जपा-सुमण) लाल वर्ण के फूल, अडहुल का फूल।
- रत्त बंधुजीवक—दुपहरिया का पौधा। बरसात में इस पर लाल रंग के फूल खिलते हैं। लोक भाषा में इसे बीर बहूटी या इन्द्रगोप भी कहते हैं।

दर्शन
स्वप्न फल पृच्छा

चित्रक्रम १४ :

माता देवकी का स्वप्न-दर्शन, स्वप्न-फल पृच्छा

दृश्य १—सुखशैया मे सोई हुई माता देवकी स्वप्न देखती है-एक श्वेत सिंह उसके उदर में प्रवेश कर रहा है ।

दृश्य २—जागृत होकर देवकी रानी राजा वसुदेव के शयनकक्ष मे आती है और अपना विचित्र स्वप्न सुनाती है । वसुदेव जी बताते है—तुम एक भाग्यशाली पुत्र की माता बनोगी ।

दृश्य ३—प्रात काल राज सभा मे स्वप्नपाठक को बुलाकर स्वप्न फल पूछते है । स्वप्नपाठक बताता है—एक सुन्दर पराक्रमी पुत्र का जन्म होगा । राजा स्वप्नपाठक को पुरस्कार देकर प्रसन्न करते है । (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 14 :

Dream of mother *Devakī* and enquiry about its consequences.

First Scene—Sleeping at comfortable bed *Devakī* dreams that a white lion entering in her abdomen through her mouth

Second Scene—Being awakened *Devakī* reaches to the bed room of king *Vasudeva*, tells her astonishing dream to him *Vasudeva* tells—you would be mother of a fateful son

Third Scene—In the morning *Vasudeva* calls a oneirocritic (*swapnapāthaka*) and asks the result of that dream He tells a brave and beautiful son will be born King pleases him by giving reward (Sec 3/Ch 8)

● **लक्खारस**–महावर,

● **तरुण दिवायर**–आचार्य अभयदेव के अनुसार यहां तरुण दिवाकर से उदीयमान लाल सूर्य जैसा लाल रंग अभिप्रेत है ।

● **जम्मणं जहा जम्म मेहकुमारे**–मेघकुमार के जन्म का वर्णन इस प्रकार है–

धारिणी के समान देवकी महारानी के दोहद की पूर्ति होने पर वह सुख-पूर्वक अपने गर्भ का पालन करने लगी और नौ मास साढ़े सात दिन व्यतीत होने पर उसने एक सुन्दर पुत्र रत्न को जन्म दिया । जिसका जन्म महोत्सव मेघकुमार के समान समझना चाहिए। जन्म की खुशी में–

१. सूचना देने वाली दासियों को दासता से मुक्त किया और उनको उपहार में विपुल धनराशि प्रदान की ।
२. नगर को सुगन्धित जल से पवित्र कराया । कैदियों को बन्धन मुक्त किया और तोल माप की वृद्धि की ।
३. दस दिन के लिये सभी व्यापार कर मुक्त कर दिया और गरीबों और अनाथों को राजा ने मुक्त हाथ से दान दिया । दस दिन तक राज्य में आनन्द महोत्सव हुआ ।
४. बारहवें दिन राजा ने विपुल भोजन बनवाकर मित्र, ज्ञाति, राज्य सेवक आदि के साथ खाते-खिलाते हुए आनन्द प्रमोद का उत्सव मनाया । फिर उनका वस्त्राभूषणादि से सत्कार-सम्मान कर माता-पिता बोले कि हमारा यह बालक गज के तालु के समान कोमल व लाल है, इसलिए इसका नाम गजसुकुमाल होना चाहिये, ऐसा कहकर पुत्र का नाम गजसुकुमाल रखा । **(ज्ञाता सूत्र के पाठ के अनुसार)**

Elucidation

Ja Sumaṇa–(Japākusum) flowers of red colour, *Aḍahula*-flowers.

Rakta Bandhu Jīvaka–Plant of noon, on it red colour flowers bloom in rainy season. Generally it is also called *Vīrabahūṭī* or *Indragopa*.

Lakkhā rasa–Mahāvara–red colour.

T*aruṇa Diwāyara*–According to *Ācārya Abhayadeva*, here this word denotes red colour as of rising sun.

Jammaṇaṁ jahā Meha Kumāre.........

Description of birth of *Megha Kumāra* is as follows–

Like *Dhāriṇī* while intense desire of *Devakī* fulfilled then she began to nurture womb-child carefully. When nine months and seven and a half days passed of her pregnancy period, she gave birth to a beautiful son, whose birth ceremony should be known like *Megha Kumāra*. In the happiness of birth–

1. Slave-women, who gave the information of baby-birth, were freed from slavery and huge wealth was given to them as gift etc
2. City was purified with fragrant water,, prisoners were made free and weights and measures were increased.
3. For ten days all the trades were announced tax-free. King lavishly gave charity to poors and orphans. Pleasure ceremony was celebrated in the kingdom till ten days
4. On the twelfth day king get prepared food etc , in huge quantity and celebrated the joyful ceremony eating and making to eat with his friends, caste persons and state-servants. Then honoured them by clothes and ornaments Afterwards parents spoke that our this child is tender and red like an elephant's palate, so its name should be *Gaja Sukumāla* Thus saying they gave the name *Gaja Sukumāla* to their son

–(according the wordings of Jñātā Sūtra)

सूत्र २२ :

तत्थ णं बारवईए णयरीए सोमिले नामं माहणे परिवसइ, अड्ढे, रिउव्वेय जाव सुपरिणिट्ठिए यावि होत्था ।

तस्स सोमिलस्स माहणस्स सोमसिरी णामं माहणी होत्था, सुकुमाला ।

तस्स णं सोमिलस्स माहणस्स धूया सोमसिरीए माहणीए अत्तया सोमा णामं दारिया होत्था, सुकुमाला जाव सुरूवा । रूवेणं जाव लावण्णे उक्किट्ठा, उक्किट्ठ सरीरा यावि होत्था ।

तए णं सा सोमा दारिया अण्णया कयाइं ण्हाया जाव विभूसिया बहूहिं खुज्जाहिं जाव परिक्खित्ता सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव रायमग्गे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता रायमग्गंसि कणग-तिंदूसएणं कीलमाणी कीलमाणी चिट्ठइ ।

चित्रक्रम १५ :

सोमिल विप्र से कन्या की याचना

दृश्य १—द्वारका निवासी सोमिल विप्र की एक अत्यन्त सुकुमार कन्या है सोमा। स्नान एव शृगार करके वह अपनी दासियो के साथ राजमार्ग पर स्वर्ण कन्दुक से क्रीडा कर रही है।

दृश्य २—वासुदेव श्री कृष्ण हाथी पर बैठे गजसुकुमाल को साथ लिये अर्हत् अरिष्टनेमि के दर्शन करने जा रहे है। स्वर्ण कन्दुक से खेलती रूप-लावण्यवती सोमा को देखकर उसके विषय मे पूछते है तथा गजसुकुमाल के लिए वधू के रूप मे उसकी विप्र सोमिल से याचना करते है। (वर्ग ३/अध्य. ८)

Illustration No. 15 :

Asking the daughter of *Somila Vipra (Brāhmana)*

First Scene—Most beautiful, tender and young girl *Soma* is the daughter of *Somila Vipra*, the resident of *Dwārakā* city Bathing and decorating herself she is playing with a golden ball with her girl-friends and slave maidens

Second Scene—*Vāsudeva Śri Krsna* riding on an elephant, with his younger uterine brother *Gaja Sukumāla*, going to praise and bow down to *Arhat Aristanemi*, enquires about the beautiful *Soma*, who is playing with golden ball and asks her from *Somila* as the wife of *Gaja Sukumāla*

(Sec 3/Ch 8)

सोमिल
सोमा

सोमिल ब्राह्मण

सूत्र २२ :

उस द्वारका नगरी में सोमिल नामक एक ब्राह्मण रहता था, जो समृद्ध था और ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, सामवेद इन चारों वेदों का सांगोपांग ज्ञाता था तथा यज्ञ-याग आदि कर्मकांडों का रहस्यवेत्ता भी था ।

उस सोमिल ब्राह्मण के सोमश्री नाम की ब्राह्मणी (पत्नी) थी । सोमश्री सुकुमार एवं रूप लावण्यवती थी ।

उस सोमिल ब्राह्मण की पुत्री और सोमश्री की आत्मजा सोमा नाम की कन्या थी जो सुकुमाल यावत् बड़ी रूपवती थी । उसका रूप, लावण्य श्रेष्ठ था तथा देहयष्टि (शरीर) का गठन भी उत्कृष्ट था ।

वह सोमा कन्या अन्यदा किसी दिन स्नान कर यावत् वस्त्रालंकारों से विभूषित हो, कुब्जा चिलात आदि बहुत सी दासियों से घिरी हुई अपने घर से बाहर निकली । घर के बाहर जहां राजमार्ग है, वहां आई और राजमार्ग में सुवर्ण की (सुवर्ण तारों से गठित) गेंद से खेलने लग गई ।

Somila Brāhmaṇa

Maxim 22 :

At that time in *Dwārakā* city a *brāhmaṇa* dwelt, whose name was *Somila*. He was rich and well-versed in all the four *Vedas*, *viz.*, *Ṛgveda*, *Yajurveda*, *Atharvaveda* and *Śāmaveda;* and also was knower of the secrets of *Yajña-Yāga* and other rituals, sacrifices etc.

His wife was *Somaśrī*. She was tender and beautiful.

Somā was the daughter of *Somila* and *Somaśrī*. She was tender until too much beautiful. Her shape (construction of body) was excellent and beauty was superb.

At any other day that maiden *Somā* bathed (until) adorned by clothes and ornaments, surrounded by *Kubjā*, *Cilāta* etc., slave-maidens came out of house. Having set out came

to highway. On the highway she began to play with golden (binded by golden threads) ball.

सूत्र २३ :

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे परिसा णिग्गया ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे ण्हाए जाव विभूसिए । गयसुकुमालेणं कुमारेणं सद्धिं हत्थिखंधवरगए सकोरंट मल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुवमाणीहिं उद्धुयमाणीहिं बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स पायवंदए णिग्गच्छमाणे सोमं दारियं पासइ । पासित्ता सोमाए दारियाए रूवेण य जोव्वणेण य जायविम्हिए ।

सोमा का गजसुकुमाल के लिए ग्रहण

सूत्र २३ :

उस काल उस समय में अरिहंत अरिष्टनेमि द्वारका नगरी में पधारे । परिषद धर्म देशना सुनने को आई ।

उस समय कृष्ण वासुदेव भी भगवान के शुभागमन के समाचार सुनकर स्नान आदि करके वस्त्रालंकारों से विभूषित हुए । गजसुकुमाल कुमार के साथ हाथी के हौदे पर आरूढ़ हुए । उनके गले में कोरंट पुष्पों की माला थी और मस्तक पर छत्र धारण किये हुए थे, दोनों ओर श्वेत एवं श्रेष्ठ चामर ढुल रहे थे । द्वारका नगरी के मध्य भागों से होकर अर्हत् अरिष्टनेमि के चरण-वन्दन के लिये जा रहे थे, तब राजमार्ग पर खेलती हुई उस सोमा कन्या को देखते हैं । सोमा कन्या के रूप, लावण्य और कान्ति-युक्त यौवन को देखकर कृष्ण वासुदेव अत्यन्त आश्चर्यचकित हुए ।

Preservation of Somā for Gaja Sukumāla

Maxim 23 :

At that time and at that period *Arihanta Ariṣṭanemi* came to *Dwārakā*. Congregation went out for listening his sermon.

Heaving heard auspicious news of coming *Bhagawāna*, *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* bathed and decked and rode an elephant with *Gaja Sukumālą Kumāra*. *Śrīkṛṣṇa* was wearing garland of *Korṇṭa* flowers and an umbrella on his head, white and best *cāmaras* were fanned on his both sides. Thus he was going to bow down through the middle of *Dwārakā*. Then he saw *Somā* playing on highway. He was wonder-struck seeing the shape, youth, beauty etc., of maiden *Somā*.

सूत्र २४ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ सद्दावित्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! सोमिलं माहणं जायित्ता सोमं दारियं गिण्हह-गिण्हित्ता कण्णंऽतेउरंसि पक्खिवह । तए णं एसा गयसुकुमालस्स भारिया भविस्सइ । तए णं ते कोडुंबिय-पुरिसा जाव पक्खिवयंति ।

तए णं ते कोडुंबिय-पुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ । णिगच्छित्ता जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे जाव पज्जुवासइ ।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हस्स वासुदेयस्स गयसुकुमालस्स कुमारस्स तीसे य. धम्म कहाए । कण्हे पडिगए ।

सूत्र २४ :

तब कृष्ण वासुदेव ने साथ में चलने वाले आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाया, बुलाकर इस प्रकार कहा–हे देवानुप्रियो ! तुम सोमिल ब्राह्मण के पास जाओ और उससे इस सोमा कन्या की याचना करो । उसे प्राप्त करो और फिर उसे लेकर कन्याओं के अन्तःपुर में पहुँचा दो । समय आने पर यह सोमा कन्या, मेरे छोटे भाई गजसुकुमाल की भार्या होगी ।

तब श्रीकृष्ण की आज्ञा शिरोधार्य कर वे आज्ञाकारी पुरुष सोमिल ब्राह्मण के पास गये और उससे कन्या की याचना की । उससे सोमिल ब्राह्मण

बहुत-बहुत प्रसन्न हुआ और अपनी कन्या को ले जाने की स्वीकृति दे दी। उन कौटुम्बिक पुरुषों ने सोमा को उसके पिता सोमिल से प्राप्त कर कन्याओं के अन्तःपुर में पहुँचा दिया। और उन्होंने श्रीकृष्ण को निवेदन किया कि– आपकी आज्ञा का पूर्णतः पालन हो गया।

तत्पश्चात् कृष्ण वासुदेव द्वारका नगरी के मध्य भाग से होते हुए निकले और निकलकर जहाँ सहस्राम्रवन उद्यान था वहां पहुँचे। पाँच अभिगम-पूर्वक प्रभु को वन्दन नमस्कार करके उचित स्थान पर बैठकर उनकी सेवा करने लगे।

उस समय भगवान् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव और गजसुकुमाल कुमार प्रमुख उस सभा को धर्मोपदेश दिया। प्रभु की देशना सुनकर श्रीकृष्ण अपने आवास को लौट गये।

Maxim 24 :

Then *Vāsudeva Kṛṣṇa* called the chamberlains going with him and ordered them–O beloved as gods ! Go to *Somila brāhmaṇa* and beg this maiden *Somā* from him, take hold of her and put her in the harem of maidens At proper time, this maiden *Somā*, would be the wife of my younger brother *Gaja Sukumāla.*

Then chamberlains obeying the order of *Śrīkṛṣṇa* went to *Somila brāhmaṇa* and asked his daughter *Somila* became very much glad and agreed to take away his daughter. Chamberlains took *Somā* from his father *Somila* and put her in harem. And then they said to *Śrīkṛṣṇa* that your order has been fulfilled

Thereafter *Kṛṣṇa Vāsudeva* went through the middle of *Dwārakā* and reached *Sahasrāmra* garden (wood), practised five *abhigamas* and bowed down to *Bhagawāna* and then sit at a proper place.

Bhagawāna Ariṣṭanemi preached sermon to the congregation, the premier were *Gaja Sukumāla* and *Śrīkṛṣṇa.*

संसार ज्वाला
वैराग्य
निवेदन
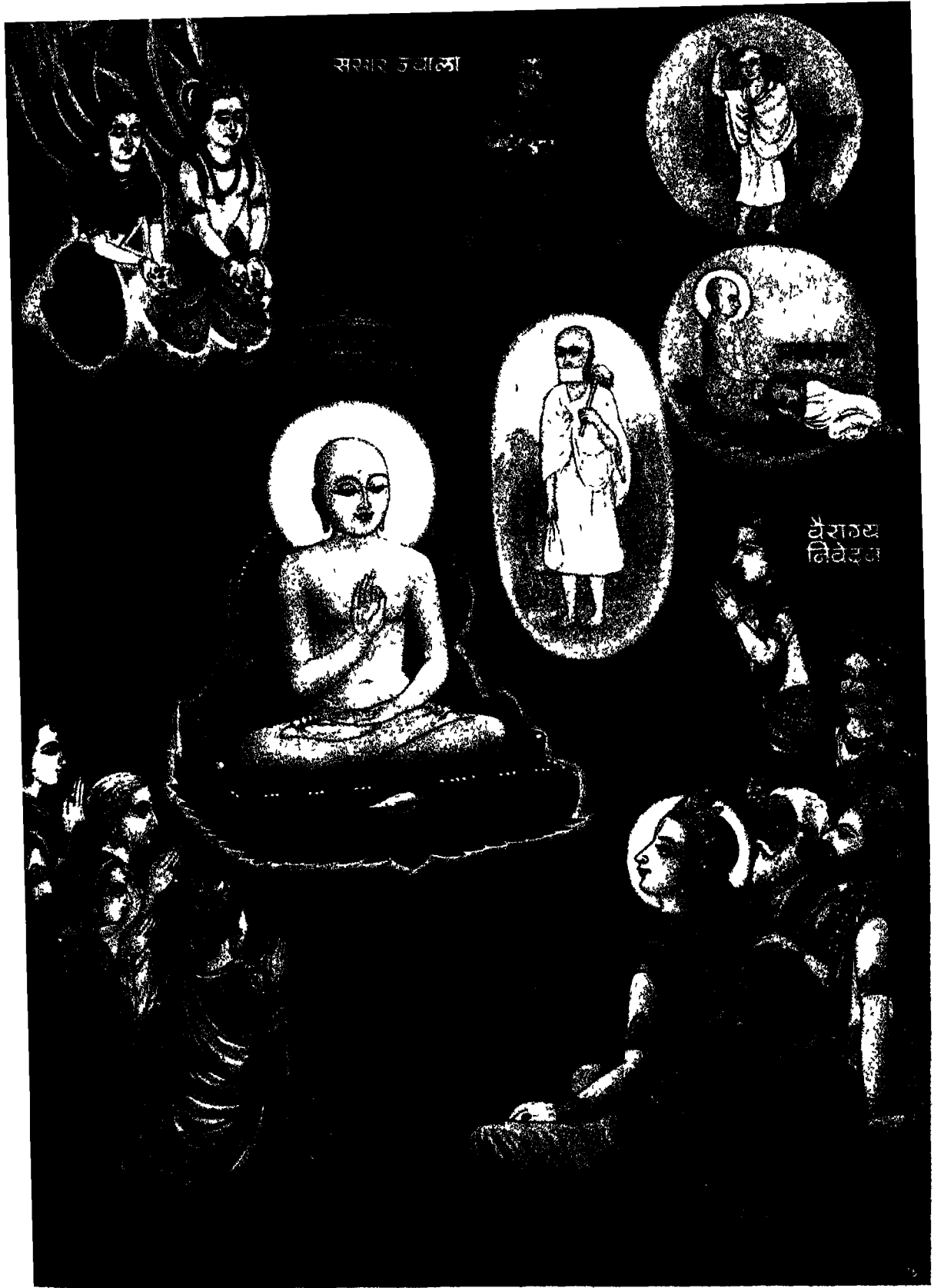
चित्रक्रम १६ :

गजसुकुमाल को वैराग्य जागरण

अर्हत् अरिष्टनेमि का उपदेश सुनकर गजसुकुमाल का मन ससार से विरक्त हो उठता है। वे कहते है–प्रभो! जैसे किसी के घर मे आग लगने पर वह अपनी सबमे मूल्यवान वस्तु को निकाल लाना चाहता है। वैसे ही मै भी जन्म-जरा-मृत्यु की अग्नि मे अपनी आत्म-मजूषा को निकालकर आपके चरणो मे मुडित होकर सयम ग्रहण कर आत्म कल्याण करना चाहता हूं।

वासुदेव श्रीकृष्ण आदि चकित होकर गजसुकुमाल की बाते सुन रहे है। (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 16.

Apathy of *Gaja Sukumāla*

Hearing the religious sermon of *Arhat Aristanemi*, the heart of *Gaja Sukumāla* filled with apathetic feelings. He utters–Reverend Sir! If any house catches fire then its owner tries to take out his most valuable thing. In the same way, I also want to save my own soul from this world, burning by the fires of birth, oldage death, and wish to purify my soul, being tonsured head in your lotus feet

Vāsudeva Śrī Krsna etc., are listening the words of *Gaja Sukumāla* astonishingly (See 3/Ch 8)

Hearing the sermon of *Bhagawāna*, *Śrīkṛṣṇa* returned back.

सूत्र २५ :

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं धम्मं सोच्चा जं णवरं अम्मापियरं आपुच्छामि ।

जहा मेहो जं णवरं (महिलियावज्जं जाव वड्ढियकुले) ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे जेणेव गयसुकुमाले कुमारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालं कुमारं आलिंगइ, आलिंगित्ता उच्छंगे निवेसेई निवेसित्ता एवं वयासी--

तुमं ममं सहोदरे कणीयसे भाया, तं मा णं देवाणुप्पिया ! इयाणिं अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुण्डे जाव पव्वयाहि। अहं णं बारवईए णयरीए महया रायाभिसेएणं अभिसिंचिस्सामि ।

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हेणं वासुदेवेणं एवं वुत्ते समाणे तुसिणीए संचिट्ठइ ।

सूत्र २५ :

उस समय प्रभु का धर्मोपदेश सुनकर गजसुकुमाल कुमार संसार से विरक्त हो गया । वैराग्य जागृत होने पर प्रभु अरिष्टनेमि को वन्दना करके इस प्रकार बोले--हे भगवन् ! मुझे यह धर्म रुचिकर लगा है और मुझे इस पर प्रीति उत्पन्न हुई है । अतः मैं इसे स्वीकार करना चाहता हूँ और माता-पिता की आज्ञा लेकर मैं आपके पास श्रमण-धर्म ग्रहण करूँगा ।

इस प्रकार मेघकुमार के समान भगवान् को निवेदन करके गजसुकुमाल अपने घर आये और माता-पिता के सामने अपने विचार प्रकट किये । दीक्षा की बात सुनकर देवकी बहुत दुखी हुई । एक बार मूर्च्छित होकर गिर पड़ी । फिर आँसू बहाते हुए उसने कहा--हे पुत्र ! तुम हमें बहुत प्रिय हो। हम तुम्हारा वियोग सहन नहीं कर सकेंगे । अभी तुम्हारा विवाह भी

नहीं हुआ है, इसलिये तुम पहले विवाह करो। विवाह करके कुल की वृद्धि कर संतान को अपना दायित्व सौंप कर फिर दीक्षा ग्रहण करना।

कृष्ण वासुदेव ने गजसुकुमाल के विरक्त होने की बात सुनी, तो वे गजसुकुमाल के पास आये और आकर गजसुकुमाल का स्नेह से आलिंगन किया, आलिंगन करके गोद में बैठाया, गोद में बिठाकर अत्यन्त स्नेह भरे शब्दों से बोले-

हे देवानुप्रिय! तुम मेरे सहोदर छोटे भाई हो, इसलिये मेरा तुमसे कहना है कि इस समय भगवान् अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर दीक्षा ग्रहण मत करो। मैं तुमको द्वारका नगरी में बहुत बड़े समारोह के साथ राज्याभिषेक से अभिषिक्त करूँगा।

Maxim 25 :

Hearing the sermon of *Bhagawāna, Gaja Sukumāla Kumāra* became adverse from world and worldly joys. Being engrossed by apathetic feelings, bowing down to *Ariṣṭanemi Bhagawāna* spoke–O *Bhagawan* ! I feel this doctrine very interesting, I love it, so I want to accept it Taking permission from parents, I will accept *Śramaṇa* hood from you.

Like *Megha Kumāra, Gaja Sukumāla* saying thus to *Bhagawāna* returned to his residence and expressed his own thoughts before parents. Hearing about consecration *Devakī* filled with grief, firstly she swooned, afterwards came into senses and began to say shedding her tears–O son ! You are too dear to us. We could not tolerate your separation. Still you are unmarried, so first of all you wed, increase family-line, generate sons and transfering your responsibilities to your sons, then you accept consecration.

Vāsudeva Kṛṣṇa, as became aware about apathy of *Gaja Sukumāla* he came to him, embraced him, put him in his lap and said in very affectionate words–

गजसुकुमाल की दीक्षा
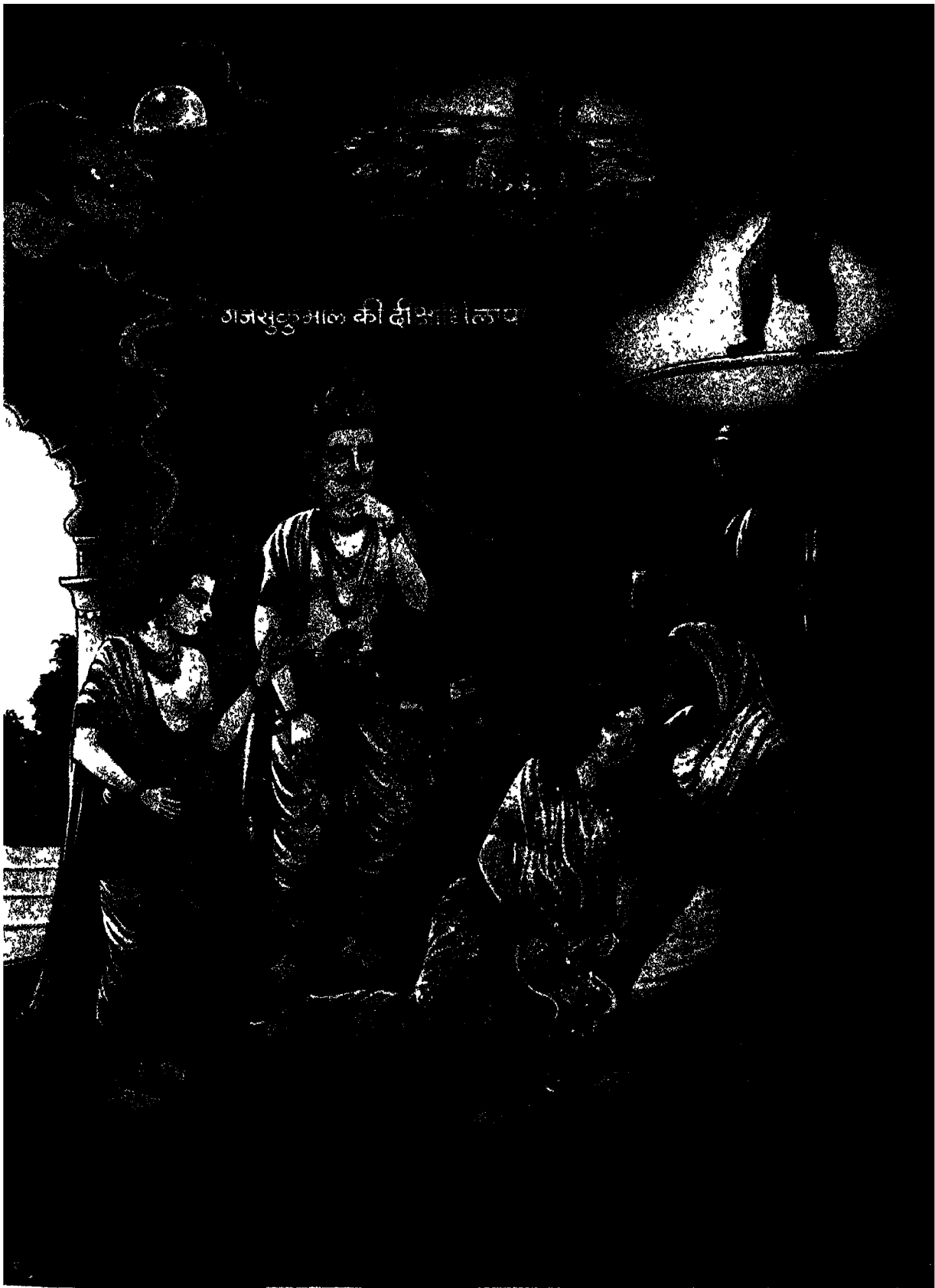
चित्रक्रम १७ :

गजसुकुमाल का वैराग्य

गजसुकुमाल ने पिता-माता से कहा- यह जीवन घास पर गिरी ओस, बिन्दु तथा जल तरगो के समान चचल है, अत मै शीघ्र ही ससार त्याग कर दीक्षा ग्रहण करना चाहता हूँ । यह सुनकर वसुदेव जी चिन्तित हो उठे और माता देवकी तो मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़ी। शीतल उपचार से स्वस्थ होने पर माता ने आँसू बहाते हुए कहा- पुत्र ! सयम ग्रहण करना भुजाओ से महासागर को तैरना और नगी तलवार पर चलने जैसा अत्यन्त दुष्कर है, तुम बहुत सुकुमार हो (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 17 :

Apathy of Gaja Sukumāla

Gajasukumala said to his parents–this life is transitory like a drop on the tip of grass, and waves of water, so I want quickly to accept consecration, leaving this world Hearing these words *Vasudeva* worried and mother *Devakī* swooned and fell down on flour After coming to senses by fanning etc , shedding tears mother said–O Son ! To accept restrain is as difficult as to swim the ocean by arms and to walk on the edge of a sword you are too tender (Sec 3/Ch 8)

O beloved as gods ! you are my younger uterine brother. Hence I say that you should not accept consecration being tonsured head near *Bhagawāna Ariṣṭanemi* at this time. I shall anoint you with a huge ceremony royal coronation in this city *Dwārakā*.

सूत्र २६ :

तए णं से गयसुकुमाले कुमारे कण्हं वासुदेवं अम्मापियरो य दोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी—एवं खलु देवाणुप्पिया ! माणुस्सया कामा असुइ, असासया, वंतासवा जाव विप्पजहियव्वा भविस्संति ।

तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए ।

तए णं तं गयकुसुमालं कुमारं कण्हे वासुदेवे अम्मापियरो य जाहे णो संचाएइ बहुयाहिं अणुलोमाहिं जाव आघवित्तए, ताहे अकामा चेव एवं वयासी—

तं इच्छामो णं ते जाया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासित्तए ।

णिक्खमणं जहा महब्बलस्स जाव तमाणाए तहा जाव संजमित्तए ।

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जाए इरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी ।

सूत्र २६ :

कृष्ण वासुदेव द्वारा ऐसा कहे जाने पर गजसुकुमाल कुमार मौन रहे । कुछ समय मौन रहने के पश्चात् गजसुकुमाल अपने बड़े भाई कृष्ण वासुदेव एवं माता-पिता से दूसरी-तीसरी बार भी इस प्रकार बोले—

हे देवानुप्रियो ! वस्तुतः मनुष्य के काम-भोग एवं देह अपवित्र, अशाश्वत, क्षणविनाशी और मल-मूत्र-कफ-वमन-पित्त-शुक्र एवं शोणित आदि अशुद्धि के भण्डार हैं । यह मनुष्य शरीर और ये उससे सम्बन्धित काम-भोग अस्थिर हैं, अनित्य हैं, एवं सड़न-गलन तथा नाशमान होने के कारण आगे-पीछे कभी न कभी अवश्य नष्ट होने वाले हैं ।

इसलिये हे देवानुप्रिय ! मैं चाहता हूँ कि आपकी आज्ञा मिलने पर भगवान अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या (श्रमण-दीक्षा) ग्रहण कर लूँ ।

तब उस गजसुकुमाल कुमार को कृष्ण वासुदेव और माता-पिता जब बहुत सी अनुकूल और स्नेह भरी युक्तियों से भी समझाने में समर्थ नहीं हुए तब निराश होकर अनचाहे ही श्रीकृष्ण एवं माता-पिता इस प्रकार बोले–

यदि ऐसा ही है तो हे पुत्र ! हम एक दिन की तुम्हारी राज्यश्री (राज की शोभा) देखना चाहते हैं । इसलिये तुम कम से कम एक दिन के लिये तो राजलक्ष्मी को स्वीकार करो ।

माता-पिता एवं बड़े भाई के इस प्रकार अनुरोध करने पर गजसुकुमाल मौन रहे । 'मौनं सम्मति लक्षणं' मानकर बड़े समारोह के साथ १०८ स्वर्ण रजत आदि के कलशों से उनका राज्याभिषेक किया गया ।

गजसुकुमाल के राजगद्दी पर बैठने पर माता-पिता ने उससे पूछा–हे पुत्र ! अब तुम क्या चाहते हो? बोलो, तुम्हारी क्या इच्छा है ?

गजसुकुमाल ने उत्तर दिया–मैं दीक्षित होना चाहता हूँ ।

तब गजसुकुमाल की इच्छानुसार दीक्षा की सभी सामग्री मंगाई गई । गजसुकुमाल सहस्र पुरुष वाहिनी शिविका में बैठ कर विशाल शोभा यात्रा पूर्वक भगवान अरिष्टनेमि के समवसरण में पहुँचे । माता-पिता ने भगवान को शिष्य भिक्षा दी । गजसुकुमाल ने स्वयं सभी आभरण उतारे, पंचमुष्टि लोच किया, फिर भगवान से प्रार्थना की–हे भन्ते ! अब आप ही स्वयं मुझे मुंडित करें, मुनि-वेष प्रदान करें और आचार धर्म का बोध देवें । प्रभु ने चरणसत्तरी, करणसत्तरी आदि का उपदेश दिया । अब वह गजसुकुमाल अणगार हो गये । ईर्यासमिति वाले यावत् गुप्त ब्रह्मचारी बन गये ।

Maxim 26 :

Gaja Sukumāla remain silent hearing these words of *Kṛṣṇa Vāsudeva* After some minutes *Gaja Sukumāla*

दीक्षा की प्रार्थना
कमल की
भाँति निर्लेप

चित्रक्रम १८ :

गजसुकुमाल की दीक्षा

दृश्य १—गजसुकुमाल दीक्षा के लिए तैयार हो, भगवान अरिष्टनेमि के चरणो मे उपस्थित होकर बोले—प्रभु ! जल मे स्थित कमल की भॉति मै विषयो से निर्लिप्त जीवन जीना चाहता हूँ । मुझे अपना शिष्य बनाइए । माता देवकी एव पिता वसुदेव जी ने प्रभु से प्रार्थना की-हे भन्ते ! हमारे चक्षु के समान प्रिय पुत्र को आप शिष्य भिक्षा के रूप मे स्वीकार कीजिए ।

दृश्य २—मुनि वेष धारण किये गजसुकुमाल भगवान के श्रीमुख मे सयम दीक्षा का पाठ ग्रहण करते है । (वर्ग ३/अध्य. ८)

Illustration No. 18 :

Consecration of Gaja Sukumāla

Scene 1 Being ready for consecration and standing near the lotus feet of *Bhagawāna Aristanemi*, spoke thus *Gajasukumāla* unto him—*Prabhu* (Reverend sir) ! I wish to lead my life disinclined to worldly passions, as the lotus remaining in water, does not wet Please accept me as your pupil Mother *Devakī* and father *Vasudeva* also requested—*Bhante* ! Please accept, our son—who is so dear as our eyes, as your disciple

Scene 2 Wearing the robe of a monk, *Gajasukumāla* accepts the consecration shedule from the mouth of *Bhagawāna* (Sec 3/Ch 8)

spoke twice and thrice to his elder brother *Kṛṣṇa Vāsudeva* and parents–

O beloveds as gods ! Really amusements and rejoicings of man and his body are impure, perishable and momentary. This body is filled with stool, urine, phlegm, vomit, semen, blood etc. the dirty things. This human body and the sensual pleasures related to it are unstable, with an end, and being perishable, these are to be exhausted either former or later.

Therefore O beloveds as gods ! I wish that permitted by you, I accept consecration (*śramaṇahood*) near *Bhagawāna Ariṣṭanemi*.

When *Kṛṣṇa Vāsudeva* and his parents could not become capable to mould towards worldly enjoyments *Gaja Sukumāla* even by loving and agreeable expressions, then being disappointed unwishingly *Kṛṣṇa Vāsudeva* and his parents spoke thus unto him–

"O son ! If it is so, then we want to visualise you as a king (adorned with coronation) only for one day. So you accept kingship at least for a single day.

At such insistence of parents and elder brother *Gaja Sukumāla* remain silent. Assuming silence as acceptance with a great ceremony he was coronated by 108 pitchers of gold and silver etc.

After enthronement of *Gaja Sukumāla* parents asked–O son ! Now what do you want ? Tell, what is your wish ?

Gaja Sukumāla answered–I want to be consecrated.

Then according to the wish of *Gaja Sukumāla* all the paraphernalia has been provided. Sitting in the palanquin which is carried by one thousand persons *Gaja Sukumāla* reached to the religious assembly of *Bhagawāna Ariṣṭanemi* with a great procession. Parents gave their son as pupil to *Bhagawāna*. *Gaja Sukumāla* put off all ornaments himself, tonsured his head by five fists and then

requested to *Bhagawāna* that O Bhante (*Bhagawan*) ! Now, you yourself cosecrate me, give me the robe of a sage and knowledge of conduct. *Bhagawāna* preached him (*Gaja Sukumāla*) seventy rules of conduct (*Caraṇa sattarī*) and seventy rules of activity (*Karṇa sattarī*) and consecrated him. Now *Gaja Sukumāla* became a housless mendicant. Practising movement incognito (until) he became secret or deep celebate or guarded in celibacy.

विवेचन

(१) राज्याभिषेक विधि का विस्तृत वर्णन–रायपसेणिय सूत्र में तथा दीक्षा का वर्णन महाबल के प्रकरण भगवती सूत्र ११/११ में विस्तार के साथ मिलता है।

(२) अभिषेक विधि में सर्व प्रकार की औषधियों से युक्त पवित्र जल मत्रोपचार के साथ मस्तक पर छिडका जाता है। इसमें १०८ सुवर्ण कलश, १०८ रजत कलश तथा १०८ मिट्टी के कलशों में औषधियों से युक्त समुद्र एवं नदियों आदि का जल भरा जाता है।

राज्याभिषेक के पश्चात् माता-पिता पूछते हैं–अब तुम्हारी क्या इच्छा है? हमे बताओ। तब गजसुकुमाल कहते हैं–कुत्रिकापण–(एक ऐसी देवाधिष्ठित दुकान जिसमे सब प्रकार का सामान मिलता हो। संसार की दुर्लभ से दुर्लभ वस्तु यहा मिलती है। आज की भाषा में ससार का यह सबसे बडा डिपार्टमेंटल स्टोर कहा जा सकता है) से मेरे लिए दीक्षा के उपकरण, रजोहरण, पात्र आदि मगाओ, और नाई को बुलाओ। तब दो लाख स्वर्णमुद्राओं का सामान तथा एक लाख स्वर्ण मुद्रा देकर नाई को बुलाया गया। नाई ने गजसुकुमाल के चार अंगुल अग्रकेश छोड़कर बाकी शेष केश का उस्तरे से मुंडन किया। माता देवकी ने श्वेत उज्ज्वल वस्त्र में उन केशों को ग्रहण किया, फिर एक रत्न करंडिये (रत्न मंजूषा) मे उन्हें संभालकर रखा और कहा–मेरे प्रिय पुत्र के केश हमारे लिये बहुत-सी तिथियों, पर्वों, महोत्सवों आदि में अन्तिम दर्शन के लिए उपयोग में आयेंगे।

दीक्षा की शोभा-यात्रा आदि का विस्तृत वर्णन अन्तकृद्दशा सूत्र महिमा में देखे।

Elucidation

(1) Detailed description of coronation we get in *Rāyapaseṇiya Sūtra* and that of consecration in *Bhagawatī Sūtra* (11/11) in the episode of *Mahābala*.

(2) In instalment method (*abhiṣeka vidhi*) the purified water mixed with all kinds of herbs sprinkled on the head of a person with chanting *mantras*. In this the herb-mixed pure water is filled from seas, rivers etc. in 108 pitchers of gold, 108 pitchers of silver and 108 pitchers of clay.

After the royal function or function of coronation parents ask–Now what is your wish, tell us. Then *Gaja Sukumāla* says–For me, ask for parapharnelias of consecration–duster (*rajoharaṇa*) utensils (*pātra*) from the shop *Kutrikāpaṇa* (a shop headed by a god or deity, where every kind of goods are available. All the things of the world which are most difficult to get are also available in that shop. In modern days, it can be told as the biggest departmental store of the world.) and also call a barber. Then paraphernalias costing two lakhs golden coins and a barber for one lakh gold coin was asked. Then barber shaved the head of *Gaja Sukumāla* by razor leaving only four *angula* fore-hairs. Mother *Devakī* took those shaven hairs in a white and neat cloth and then kept them in a box studded with gems with due care and said–These hairs of my dear son would be utilised and useful for last visualization on the auspicious occasions days, festivals and celebrations.

(3) Vivid description of *dīksā* grand procession etc., readers are suggested to study *Antakrddśā Mahimā*

सूत्र २७ :

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे जं चेव दिवसं पव्वइए तस्सेव दिवसस्स पुव्वावरण्ह-कालसमयंसि जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता एवं वयासी–

इच्छामि णं भंते ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे महाकालंसि सुसाणंसि एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जिता णं विहरित्तए।

अहासुहं देवाणुप्पिया !

तए णं से गयसुकुमाले अणगारे अरहया अरिट्ठणेमिणा अब्भणुण्णाए समाणे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ। वंदित्ता णमंसित्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियाओ सहसंबवणाओ उज्जाणाओ पडिणिक्खमइ। पडिणिक्खमित्ता जेणेव महाकाले सुसाणे तेणेव उवागच्छइ।

उवागच्छित्ता थंडिलं पडिलेहेइ, पडिलेहित्ता उच्चार-पासवण भूमिं पडिलेहेइ पडिलेहित्ता ईसिं पब्भारगएणं काएणं जाव दो वि पाए साहट्टु एगराइयं महापडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

महाप्रतिमा-धारण

सूत्र २७ :

दीक्षित होने के पश्चात् गजसुकुमाल मुनि जिस दिन दीक्षित हुए, उसी दिन के पिछले भाग (तृतीय प्रहर) में जहां अरिहंत अरिष्टनेमि विराजमान थे, वहां आये। वहां आकर उन्होंने भगवान अरिष्टनेमि को तीन बार प्रदक्षिणा की। प्रदक्षिणा करके इस प्रकार निवेदन किया–

हे भगवन् ! आपकी अनुमति प्राप्त होने पर मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महाप्रतिमा धारण कर विचरना चाहता हूँ ।

प्रभु ने कहा–हे देवानुप्रिय ! जिससे तुम्हें सुख प्राप्त हो वही करो ।

गजसुकुमाल मुनि ने अरिहंत अरिष्टनेमि की आज्ञा मिलने पर भगवान अरिष्टनेमि को वंदन नमस्कार किया। वंदन नमस्कार कर अर्हत् अरिष्टनेमि के पास से चलकर सहस्राम्रवन उद्यान से निकले, और जहां महाकाल श्मशान था, वहां आये ।

महाकाल श्मशान में आकर प्रासुक स्थण्डिल भूमि (जीव-जन्तु रहित निर्दोष स्थान) की प्रतिलेखना-देखभाल करते हैं । इसके पश्चात् उच्चार- प्रस्रवण (मल-मूत्र त्याग) के योग्य भूमि का प्रतिलेखन करते हैं । इसके पश्चात् एक स्थान पर खड़े हो, अपनी देह यष्टि को किंचित् झुकाये हुए (दोनों हाथों को घुटनों तक लम्बा करके) एक पुद्गल केन्द्र पर दृष्टि जमाकर दोनों पैरों को (चार अंगुल के अन्तर से) सिकोड़ कर एक रात्रि की महाप्रतिमा अंगीकार कर ध्यान में लीन हो गये ।

Acceptance of Special Vow of Mahāpratimā

Maxim 27 :

After consecration, *Gaja Sukumāla* sage in the first part of afternoon (third *prahara* of the day), the same day on

which came into sage order, he went to the place where *Arihanta Ariṣṭanemi* was, thrice circumambulated and then spoke in polite words–

O *Bhagawan* ! On being permitted by you I want to abide observing the great vow-resolution (*mahāpratimā*) of one night in the cemetry (funeral place) of *Mahākāla*.

Bhagawāna said–O beloved as gods ! Do as you feel happy.

Thus being permitted by *Arihanta Ariṣṭanemi* sage *Gaja Sukumāla* bowed down and worshipped him and starting from there walked out of *Sahasrāmravana* and reached cemetry *Mahākāla*.

There he looked for clean spot free from flora and insects. After that he looked for clean spot for discharging stool and urine. Thereafter standing at a place, slightly bending forward his body (hanging both the hands upto knees), fixing eyes on a lump of matter (*pudgala*), contracting both legs (with the distance of four fingers between the heels and toes of both legs), accepting great firm resolution (*Mahāpratimā*) of one night went deep into meditaion.

सूत्र २८ :

इमं च णं सोमिले माहणे सामिधेयस्स अट्ठाए बारवईओ णयरीओ बहिया, पुव्वणिग्गए । समिहाओ य दब्भे य कुसे य पत्तामोडयं च गिण्हइ । गिण्हित्ता तओ पडिणियत्तइ, पडिणियत्तित्ता महाकालस्स सुसाणस्स अदूरसामंतेणं वीईवयमाणे संझाकालसमयंसि पविरल-मणुस्संसि गयसुकुमालं अणगारं पासइ ।

पासित्ता तं वेरं सरइ, सरित्ता आसुरुत्ते एवं वयासी–एस णं भो ! स गयसुकुमाले कुमारे अपत्थिय जाव परिवज्जिए जेणं मम धूयं सोमसिरीए भारियाए अत्तयं सोमं दारियं अदिट्ठदोसपइयं कालवत्तिणीं विप्पजहित्ता मुण्डे जाव पव्वइए ।

सोमिल द्वारा उपसर्ग

सूत्र २८ :

इधर सोमिल ब्राह्मण समिधा (यज्ञ की लकड़ी) लेने के लिये द्वारका नगरी के बाहर गजसुकुमाल अणगार के श्मशान भूमि में जाने से पूर्व ही निकला था, वह उधर जंगल से समिधा, दर्भ, कुश, डाभ एवं अग्रभाग से मुड़े पत्तों को लेता है। उन्हें लेकर वहां से अपने घर की तरफ लौटता है। लौटते समय महाकाल श्मशान के निकट से जाते हुए संध्या काल की बेला में, जबकि मनुष्यों का आवागमन बहुत कम हो गया था, वह गजसुकुमाल मुनि को वहां ध्यानस्थ खड़े देखता है।

उन्हें देखते ही सोमिल के हृदय में पूर्वभवों के वैर का संस्कार जाग्रत हुआ। पूर्वजन्म के वैर का स्मरण हुआ। पूर्व जन्म के वैर की स्मृति होने पर वह क्रोध से तमतमा उठा और इस प्रकार बुदबुदाया (बड़बड़ाया)– अरे यह तो वही अप्रार्थनीय का प्रार्थी (मृत्यु की इच्छा करने वाला) निर्लज्ज एवं श्री-कान्ति आदि से हीन गजसुकुमाल कुमार है, जो मेरी सोमश्री भार्या की कुक्षि से उत्पन्न, यौवनावस्था को प्राप्त, मेरी निर्दोष पुत्री सोमा कन्या को अकारण ही छोड़कर मुण्डित होकर साधु बन गया है।

Trouble (Upasarga) by Somila

Maxim 28 :

Brāhmaṇa Somila for taking sacrificial wood went out of *Dwārakā* to the forest, before *Gaja Sukumāla* reached the *Mahākāla* funeral place The way to forest passed nearby the same funeral place. In the forest he collected sacrificial wood, grass, plucked up fore-part bent leaves and returned to the city–to his home. On returning passing by *Mahākāla* cemetry at the time of evening twilight when the coming and going of men becomes rare, he saw monk *Gaja Sukumāla* there standing in meditation

Seeing the monk, the enmity of former births awakened in the heart of *Somila*. He recollected the enmity of former

सोमिल ने मस्तक पर
अंगारे रखे

चित्रक्रम १९ : महाकाल श्मशान में ध्यान तथा महाउपसर्ग

दृश्य १—दीक्षा लेकर दिन के तृतीय प्रहर मे मुनि गजसुकुमाल महाकाल श्मशान मे जाकर एक रात्रि की महाप्रतिमा धारण कर ध्यानस्थ हो गए। श्मशान मे कही चिताएँ जल रही है। कही नरमुड पडे है। इधर-उधर हिंसक मासाहारी जानवर घूम रहे है। सोमिल विप्र यज्ञ की सामग्री साथ लिये, उधर से गुजरा तो उसने गजसुकुमाल को मुनि रूप मे देखा। वह क्रोध मे पागल हो उठा "इसी राजकुमार ने मेरी प्यारी पुत्री सोमा को बिना विवाह किये मझधार मे छोड दिया है तो मै भी अब इसका बदला लूँगा।"

दृश्य २—बदले की भावना से प्रेरित होकर सोमिल ने ध्यानस्थ मुनि के सिर पर गीली चिकनी मिट्टी की पाल बॉधी, फिर पास मे ही जलती चिता से धधकते अगारे लिये और मुनि के सिर पर धर दिये। मुनि का मस्तक और शरीर जलने लगा। मुनि फिर भी शात, अचल खडे रहे। सोमिल भयभीत हुआ, "कही यह दुष्कृत्य करते मुझे किसी ने देख लिया और वासुदेव श्रीकृष्ण को पता लग जायेगा तो" वह उलटे पॉव नगर की ओर भागा। (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 19 :

Meditation and great trouble in Mahākāla cemetry

Scene 1 Accepting consecration in the third *prahara* (3p m) of day, monk *Gajasukumala*, accepting the great monk resolution approached the *Mahākala* funeral place and went deep into meditation Anywhere in cemetry pyres are burning, somewhere are half burnt and unburnt corpses, flash eater and violent animals are wandering hither and tither *Brahma Somila* passed by that cemetry Then he saw *Gajasukumala* as a sage He became mad in fury–this prince has bereaved my dear daughter, without marrying her, then I shall also take revenge of that

Scene 2 Instigated by the feelings of revenge *Somila* put wet clay on the head of monk and then taking from a pyre kept burning coals The head and body of monk began to burn, still he stood erect and calm *Somila* frightened–lest any man may see me doing this evil deed, and if *Vāsudeva Śrī Krsna* became aware of this, then " He ran away twards the city

(Sec 3/Ch 8)

births. By this remembrance he raged up in fury and murmured–Oh this is the same *Gaja Sukumāla* desirous of undesirable–wisher of death, shameless and devoid of fortunes; who abandoning my matured, faultless daughter *Somā* (born from the womb of my wife *Somaśrī*) without any cause became an ascetic.

विवेचन

गजसुकुमाल मुनि को ध्यानस्थ देखकर सोमिल के मन में अचानक इतना प्रचण्ड भीषण क्रोध क्यों उपज आया ? इसके पीछे प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कई कारण हो सकते हैं । प्रत्यक्ष कारण तो यहाँ स्पष्ट बताया गया है कि–पुत्री सोमा के साथ गजसुकुमाल का पाणिग्रहण होने वाला था । वासुदेव श्रीकृष्ण ने उसकी याचना करके उसे कन्याओं के अन्तःपुर में रखवाया, अब गजसुकुमाल उस कन्या को मंझधार में छोड़कर मुनि बन गये । इस कारण सोमिल को क्रोध आ गया ।

दूसरा परोक्ष कारण भी है जिसका संकेत आगम में दो वाक्यों में किया गया है–**तं वेरं सरइ** वैर का स्मरण करके तथा "**अणेग भव–सय सहस्स संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं**–लाखों भवों के संचित कर्मों की उदीरणा करते हुए। इस स्थान पर गजसुकुमाल एवं सोमिल के अतीत जन्मों की वैर परम्परा की एक कथा प्रसिद्ध है जो इस प्रकार है–

गजसुकुमाल का जीव अनेकानेक भवों के पूर्व भव में एक राजा की रानी के रूप में था । उसकी सौतेली रानी के पुत्र होने से सौतेली रानी राजा को बहुत प्रिय हो गई । इस कारण, उसे सौतेली रानी से द्वेष हो गया और चाहने लगी कि किसी भी तरह से उसका पुत्र मर जाए ।

संयोग की बात है कि पुत्र के सिर में फोड़ा–गुमड़ी हो गई और वह पीड़ा से छटपटाने लगा । विमाता ने कहा–मैं इस रोग का उपचार जानती हूँ । अभी ठीक कर देती हूँ । इस पर रानी ने अपने पुत्र को विमाता को दे दिया । उसने उड़द की जाड़ी रोटी गर्म करके बच्चे के सिर पर बांध दी। बालक को भयंकर असह्य वेदना हुई । वह छटपटाने लगा और कुछ ही क्षणों में मर गया ।

कालान्तर में बालक का जीव सोमिल और विमाता का जीव गजसुकुमाल के रूप में उत्पन्न हुए । वेराणुबंधीणि महब्भयाणि–वैर के अनुबंध भयंकर होते हैं । अतः इस पूर्व वैर का स्मरण होने पर सोमिल को तीव्र क्रोध उत्पन्न हुआ और बदला चुकाने के लिये ध्यानस्थ मुनि के सिर पर मिट्टी की पाल बांधकर खैर के धधकते अंगारे रख देने की भावना जागी । और पूर्व वैर वश इतना क्रूर पैशाचिक कृत्य कर डाला । **(अन्तकृद्दशा सूत्र–आचार्य आत्मारामजी म. कृत हिन्दी टीका पृष्ठ १८ से)**

Elucidation

Seeing monk *Gaja Sukumāla* in meditation why the mind of *Somila* filled with such a ferocious anger ? There may be many present and past causes of it. Present cause here clearly stated that his daughter *Somā* was to be wedded with him *(Gaja Sukumāla) Vāsudeva Śrīkrṣṇa* asked and preserved her *(Soma)* in harem of maidens. When *Gaja Sukumāla* accepted monkhood leaving that maiden then *Somila* raged in fury

The other past cause also pointed in *Āgama* by words–'*taṁ veraṁ saraï*– remembering the enmity' and '*anega bhava–saya sahassa saṅciyaṁ kammam udīremanenaṁ*– performing *udīraṇā* of accumulated *karmas* of million former births'. In this context a story is popular about the former birth of *Somila* and *Gaja Sukumāla* The episode is this–

The soul of *Gaja Sukumāla* was a queen of a king in his innumerous former birth That king had another queen also. That queen had given birth to a son so she became more beloved of that king So the queen (soul of *Gaja Sukumāla*) began to have feelings of detachment towards that other queen and have keen desire that her son may die anyhow.

Perchance a boil took place in son's head. Child began to flounder due to agony. Step mother (soul of *Gaja Sukumāla)* said to the mother of that child that I know the treatment of this disease The mother of child gave her son to step mother Step mother binded a hot horse-bean bread on the head of the child Due to serious agony child floundered much and died After a long-long period the soul of that child took birth as *Somila* and that of step mother as *Gaja Sukumāla.*

Verāṇubandhīni mahabbhayāni–The bondages of enmity are most ferocious. So by the remembrance of this former enmity *Somila* raged in fury, and for taking the revenge, his ill feelings aroused to take wet clay to make the raised up sides on the head of monk and to fill it with the burning coals of *khair* fuel.

He had done such cruel deed due to former enmity.

[*Antakṛd-daśā Sūtra* Hindi Commentary by *Ātmārāmajī Mahārāja p.18*]

सूत्र २९ :

तं सेयं खलु मम गयसुकुमालस्स वेरणिज्जायणं करित्तए । एवं संपेहेइ, संपेहित्ता दिसापडिलेहणं करेइ, करित्ता सरसं मट्टियं गिण्हइ । गिण्हित्ता

जेणेव गयसुकुमाले अणगारे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए मट्टियाए पालिं बंधइ ।
बंधित्ता जलंतीओ चिययाओ फुल्लिय-किंसुयसमाणे खयरंगारे कहल्लेणं गिण्हइ । गिण्हित्ता गयसुकुमालस्स अणगारस्स मत्थए पक्खिवइ । पक्खिवित्ता भीए तओ खिप्पमेव अवक्कमइ । अवक्कमित्ता जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए ।

सूत्र २९ :

इसलिये मुझे निश्चय ही गजसुकुमाल से इस वैर का बदला लेना चाहिये, सोमिल के मन में इस प्रकार का दुर्विचार उठा, उसने सोचा, सोचकर सब दिशाओं की ओर दूर-दूर तक देखा कि कहीं कोई उसे देख तो नहीं रहा है। चारों तरफ देखता हुआ पास के ही तालाब से थोड़ी गीली मिट्टी ली, गीली मिट्टी लेकर वहां आया, वहां आकर गजसुकुमाल मुनि के सिर पर उस मिट्टी से चारों तरफ पाल बांध देता है ।

पाल बांधकर पास में ही कहीं जलती हुई चिता में से फूले हुए केसू (पलाश) के समान लाल-लाल खेर के अंगारों को किसी मिट्टी के खप्पर में लेकर वह उन दहकते हुए अंगारो को गजसुकुमाल मुनि के सिर पर रख देता है । रखने के बाद (इस भय से कि कहीं कोई देख न ले) भयभीत होकर त्रस्त होकर शीघ्रता से पीछे की ओर हटा और (वहां से भागता हुआ) वह (सोमिल) जिस ओर से आया था उसी ओर चला जाता है ।

Maxim 29 :

Therefore I should definitely take revenge from *Gaja Sukumāla*–such ill-feelings occupied the mind of *Somila.* He thought and after thinking he gazed at all directions upto far distance that whether any body visualising me or not. Gazing all around he took moist clay from a nearby pond, came to the place where monk *Gaja Sukumāla* was, putting that clay on the head of monk and raised it on all sides.

After that he took burning coals from a pyre in a piece of claypitcher and put up those burning coals on the head of monk *Gaja Sukumāla*. Then being frightened (fear lest anyone may see me) sharply he stepped backward and (running from there) he (*Somila*) went to the direction from which he had come.

सूत्र ३० :

तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स सरीरयंसि वेयणा पाउब्भूया, उज्जला जाव दुरहियासा । तए णं से गयसुकुमाले अणगारे सोमिलस्स माहणस्स मणसा वि अप्पदुस्समाणे तं उज्जलं जाव अहियासेइ ।

तए णं तस्स गयसुकुमालस्स अणगारस्स तं उज्जलं जाव अहियासेमाणस्स सुभेणं परिणामेणं पसत्थ-ज्झवसाणेणं तयावरणिज्जाणं कम्माणं खएणं कम्मरय-विकिरणकरं अपुव्वकरणं अणुप्पविट्ठस्स अणंते, अणुत्तरे जाव केवलवरनाण-दंसणे समुप्पण्णे । तओ पच्छा सिद्धे जावप्पहीणे ।

तत्थ णं अहासंणिहिएहिं देवेहिं सम्मं आराहियं ति कट्टु दिव्वे सुरभिगंधोदए बुट्ठे, दसद्धवण्णे कुसुमे णिवाइए; चेलुक्खेवे कए, दिव्व य गीय-गंधव्वणिणाए कए यावि होत्था ।

सूत्र ३० :

तब, सिर पर जाज्वल्यमान अंगारों के रखे जाने से गजसुकुमाल मुनि के शरीर में महा भयंकर वेदना उत्पन्न हुई, जो अत्यन्त दाहक, कर्कश, तीव्र और दुस्सह थी ।

इतना होने पर भी वे गजसुकुमाल मुनि सोमिल ब्राह्मण पर मन से लेश मात्र भी द्वेष नहीं करते हुए उस एकान्त दुःखरूप वेदना को समभाव पूर्वक सहन करने लगे ।

उस समय उस एकान्त दुःखपूर्ण दुस्सह दाहक वेदना को समभाव पूर्वक सहन करते हुए शुभ परिणामों तथा प्रशस्त शुभ अध्यवसायों (भावनाओं) के फलस्वरूप आत्मगुणों को आच्छादित करने वाले कर्मों के क्षय से, समस्त

कर्म-रज को झाड़कर साफ कर देने वाले कर्म विनाशक अपूर्वकरण में प्रविष्ट हुए, जिससे उन गजसुकुमाल अणगार को अनंत–अन्तरहित, अनुत्तर–सर्वश्रेष्ठ, निर्व्याघात, निरावरण एवं परिपूर्ण केवलज्ञान एवं केवलदर्शन की उपलब्धि हुई । तत्पश्चात आयुष्य पूर्ण हो जाने पर वे उसी समय सिद्ध, बुद्ध, यावत् सभी दुःखों से मुक्त हो गये ।

इस प्रकार सकल कर्मों के क्षय हो जाने से वे गजसुकुमाल अणगार कृतकृत्य बनकर सिद्ध पद को प्राप्त हुए। लोकालोक के सभी पदार्थों का ज्ञान होने से बुद्ध हुए। सभी कर्मों के छूट जाने से परिनिर्वृत्त परमशान्त हुए, शारीरिक और मानसिक सभी दुःखों से रहित होने से "सर्वदुःख-प्रहीण" हुए ।

उस समय वहां समीपवर्ती देवों ने–अहो ! इन गजसुकुमाल मुनि ने श्रमण चारित्र धर्म की अत्यन्त उत्कृष्ट आराधना की है, यह जानकर अपनी वैक्रिय शक्ति के द्वारा दिव्य सुगन्धित अचित्त जल की तथा पाँच वर्णों के दिव्य अचित्त फूलों एवं वस्त्रों की वर्षा की, और दिव्य मधुर गीतों तथा गन्धर्व वाद्ययन्त्रों की ध्वनि से आकाश को गुंजा दिया ।

Maxim 30 :

As the burning embers kept on the head, most ferocious agony took place in the body of monk *Gaja Sukumāla*, that was much fiery, acute and untolerable.

Being so much trouble monk *Gaja Sukumāla* bore it with even mind, not becoming wrathful towards *brāhmaṇa Somila*, even a bit.

At that time, bearing such an acute painful fiery untolerable agony with calm and equanimous mind friar *Gaja Sukumāla* entered the eighth stage of spiritual development stage–*Apūrwakaraṇa* by his auspicious thoughts and feelings, destroying the *karmas* which envelop soul-virtues.

By it monk *Gaja Sukumāla* attained infinite knowledge and perception. Thereafter his duration completed and he became perfected (until) and free of all miseries and pains.

Thus by exhaustion (destruction) of all *karmas* houseless mendicant *Gaja Sukumāla* became emancipated (who has nothing to do) omniscient–knower of every thing in *Loka* and *Aloka*, supreme calm (*parinivritta*)–being free from all *karmas*, and becoming free from all mental and bodily pains he became miseriless (*sarvaduḥkha prahīṇa*).

At that time the nearby gods knowing that–'*monk Gaja Sukumāla* has propiliated sage-order with supremity' they rained the divine fragrant non-sensient water, showered divine non-sensient flowers of five colours and clothes and echoed the sky by celestial song and melody.

विवेचन

अपुव्वकरणं–अपूर्वकरणम्–अपूर्वकरण शब्द का अर्थ है–जिसकी पहले प्राप्ति नहीं हुई–ऐसा भाव या उत्कृष्ट स्थिति का अनुभव। यह आठवें "निवृत्तिबादर गुणस्थान" का भी परिचायक माना गया है। इस गुणस्थाने से दो श्रेणियां आरम्भ होती हैं–(१) उपशम श्रेणी और (२) क्षपक श्रेणी। उपशम श्रेणी वाला जीव मोहनीय कर्म की प्रकृतियों का उपशमन करता हुआ ग्यारहवे गुणस्थान तक जाकर रुक जाता है और नीचे गिर जाता है। क्षपक श्रेणी वाला जीव दशवें गुणस्थान से सीधा बारहवें गुणस्थान पर जाकर अप्रतिपाती हो जाता है। आठवें गुणस्थान में आरूढ़ हुआ जीव क्षपक श्रेणी से उत्तरोत्तर बढ़ता हुआ जब बारहवें गुणस्थान में पहुँच जाता है तब समस्त घातीकर्मों का क्षय करता हुआ कैवल्य ज्ञान प्राप्त कर लेता है। तत्पश्चात तेरहवें गुणस्थान में स्थिर होता है। आयु पूर्ण होने पर चौदहवाँ गुणस्थान प्राप्त करके परम कल्याण रूप मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है।

प्रस्तुत में सूत्रकार ने "अपुव्वकरण" पद देकर गजसुकुमाल के साथ अपूर्वकरण अवस्था का सम्बन्ध सूचित किया है। भाव यह है कि गजसुकुमाल मुनि ने आठवें गुणस्थान में प्रविष्ट होकर उत्तम क्षपक श्रेणी को अपना लिया था।

Elucidation

Apuvvakaraṇa–Apūrvakaraṇa–This word means–which is never attained before–realisation of the sublime feeling of this stage. It is also taken as the eighth

spirtual development stage named as *nivṛtti bādara guṇasthāna*. Two steps begin from this stage–(1) Subduative step (*upaśama śreṇī*) and (2) exhaustive step (*kṣapaka śreṇī*). The mendicant who takes subduative step he stops reaching the eleventh stage of spiritual development and falls down from that stage. The mendicant who takes exhaustive step he does not touch eleventh stage and reaches twelfth from tenth stage in a jumping way and becomes unfallible. Really the mendicant taking exhaustive step raises up one after another development stage, but not touching eleventh reaches twelfth directly. Then exhausting all *ghātī* (soul-binding) *karmas* attains infinite knowledge and perception Then crossing twelfth stage he stays himself in thirteenth stage of spiritual development and remains there till whole life but a little span of period. During this period he enters in fourteenth stage of spiritual development and within a few seconds becomes emancipated and reaching on the top of *loka* enjoys soul-bliss upto infinite time

In the present maxim scripturist giving the word *apuvvkaraṇa* pointed out the relativeness of *apūrvakaraṇa* with monk *Gaja Sukumāla*. Its inherent idea is this, that monk *Gaja Sukumāla* entering the eighth stage of spiritual development had taken the exhaustive step

सूत्र ३१ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे कल्लं पाउप्पभायाए जाव जलंते ण्हाए जाव विभूसिए, हत्थिक्खंधवरगए सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धरिज्जमाणेणं सेयवरचामराहिं उद्धुव्वमाणीहिं महया भड-चडगर-पहकरवंद-परिक्खित्ते बारवइं णयरिं मज्झं मज्झेणं जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिगच्छमाण एकं पुरिसं पासइ । जुण्णं जरा-जज्जरियं देहं, जाव किलंतं महइ-महालयाओ इट्टगरासिओ एगमेगं इट्टगं गहाय बहिया रत्थापहाओ अंतोगिहं अणुप्पविसमाणं पासइ ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे तस्स पुरिसस्स अणुकंपणट्ठाए हत्थिक्खंधवरगए चेव एगं इट्टगं गिण्हइ, गिण्हित्ता बहिया रत्थापहाओ अंतोगिहं अणुप्पवेसेइ ।

तए णं कण्हेणं वासुदेवेणं एगाए इट्टगाए गहियाए समाणीए अणेगेहिं पुरिससएहिं से महालए इट्टगस्स रासी बहिया रत्थापहाओ अंतोघरंसि अणुप्पवेसिए ।

वृद्ध की सहायता

सूत्र ३१ :

उस रात्रि के व्यतीत होने पर दूसरे दिन सूर्योदय की वेला में कृष्ण वासुदेव स्नान कर वस्त्रालंकारों से विभूषित हो, हाथी पर आरूढ़ हुए । वे कोरंट पुष्पों की माला एवं छत्र धारण किये हुए थे । श्वेत एवं उज्ज्वल चामर उनके दायें बायें ढोरे जा रहे थे । अनेक बड़े-बड़े योद्धाओं के समूह से घिरे हुए द्वारका नगरी के राजमार्ग से होते हुए जहां भगवान् अरिष्टनेमि विराजमान थे, वहां के लिये प्रस्थान किया ।

तब कृष्ण वासुदेव ने द्वारका नगरी के मध्य भाग से जाते समय एक पुरुष को देखा, जो अति वृद्ध, जरा से जर्जरित देह, दुर्बल, अति क्लान्त– कुम्हलाया हुआ एवं थका हुआ सा था । उसके घर के बाहर राजमार्ग पर ईंटों का एक विशाल ढेर लगा हुआ था, वह वृद्ध पुरुष उस ढेर में से एक-एक ईंट उठाकर अपने घर में भीतर रख रहा था ।

उस दु:खी वृद्ध पुरुष को इस तरह एक-एक ईंट उठाते देखकर कृष्ण वासुदेव ने उस पुरुष के प्रति करुणार्द्र होकर उस पर अनुकम्पा करते हुए हाथी पर बैठे-बैठे ही उस ढेर में से एक ईंट उठाई और उसे ले जाकर उसके घर के भीतर रख दी ।

कृष्ण वासुदेव को इस तरह ईंट उठाते देखकर उनके साथ के अनेकों सैंकड़ों अनुगामी पुरुषों ने भी एक-एक करके ईंटों के उस सम्पूर्ण ढेर को तुरन्त बाहर से उठाकर उसके घर के भीतर पहुँचा दिया । इस प्रकार श्रीकृष्ण के एक ईंट उठाने मात्र से उस वृद्ध जर्जर दु:खी पुरुष का बार-बार चक्कर काटने का कष्ट दूर हो गया ।

चित्रक्रम २० :

वृद्ध पुरुष की सहायता

दृश्य १—श्रीकृष्ण वासुदेव प्रात काल **भगवान्** अरिष्टनेमि के दर्शन करने राजमार्ग मे निकले । राजपथ पर एक अत्यन्त दुर्वल वृद्ध पुरुष को ईटों के विशाल ढेर मे से एक-एक ईट उठाकर ले जाते देखा, तो अनुकपा भाव मे वासुदेव ने स्वय एक ईट उठाकर उसके घर के भीतर रख दी ।

दृश्य २—श्रीकृष्ण का अनुसरण करके सभी अनुगामी व्यक्तियो ने एक एक ईट उठाकर उसके घर मे पहुँचा दी । वृद्ध का कार्य शीघ्र पूर्ण हो गया । (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 20 :

Help of an Oldman

Scene 1 *Vāsudva Śrī Krsna* went out at the morning for paying his respects to *Bhagawāna Aristanemi*, with his chamberlains and followers In the way he saw an aged, lean, weak bodied oldman Who was taking one brick from the huge accumulation (heap) of bricks, which was lying on royal road, and putting down inside his home Then due to compassion *Vāsudeva* put up one brick from the heap and kept inside the home

Scene 2 Following this activity of *Śrī Krsna* his followers also took up bricks from the heap and kept inside the house of that oldman (Sec 3/Ch 8)

Help of an Oldman

Maxim 31 :

Passing that night and at the dawn of second day *Kṛṣṇa Vāsudeva* bathed and adorned by clothes and ornaments rode on an elephant. He was wearing the garland of *Koraṇta* flowers and canopy was on his head, white and best *cāmaras* were fanned on his both sides. Surrounded by numerous strong warriors, moving on the royal road started from *Dwārakā* to go where *Bhagawāna Ariṣṭanemi* was.

While going through the middle part of *Dwārakā Kṛṣṇa Vāsudeva* saw a man, who ws too old, with body bathered by old age, weak, wearied and tired. Out of his house, on the royal road a huge heap of bricks was accumulated. That oldman was carrying bricks from that heap one by one and keeping in the inner part of his house.

Kṛṣṇa Vāsudeva seeing that grieved old man, filled with compassion. Sitting on elephant he took up one brick from that heap and put in the inner part of his house.

When the numerous followers saw *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* putting a brick from that heap then all of them put one brick in the house of that old man. Consequently heap was finished. In this way only taking one brick by *Śrīkṛṣṇa*, the turmoil of carrying brick of that old bathered bodied man came to an end.

सूत्र ३२ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिग्गच्छइ, णिग्गच्छित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागमइ, उवागमित्ता जाव वंदइ णमंसइ।

वंदित्ता णमंसित्ता गयसुकुमालं अणगारं अपासमाणे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी-कहि णं भंते ! से मम

सहोदरे कणीयसे भाया गयसुकुमाले अणगारे जण्णं अहं वंदामि नमंसामि ।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—साहिए णं कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं अप्पणो अट्ठे ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी-कहण्णं भंते ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे ?

सूत्र ३२ :

तत्पश्चात वह कृष्ण वासुदेव द्वारका नगरी के मध्य भाग से निकलते हुए जहां सहस्राम्रवन में भगवान् अरिष्टनेमि विराजमान थे, वहां आये। वहां आकर भगवान को वन्दन नमस्कार किया ।

इसके पश्चात अपने सहोदर लघु भ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल मुनि को (वन्दन नमस्कार करने के लिये) इधर-उधर देखा ।

जब उन्हें मुनि वहां नहीं दिखाई दिये तो भगवान् अरिष्टनेमि को पुनः वन्दन नमस्कार किया और वन्दन-नमस्कार करके भगवान से पूछा—प्रभो ! वे मेरे सहोदर लघुभ्राता नवदीक्षित गजसुकुमाल मुनि कहां हैं ? मैं उनको वन्दन नमस्कार करना चाहता हूँ ।

तब अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा—हे कृष्ण ! गजसुकुमाल मुनि ने जिस प्रयोजन के लिये संयम स्वीकार किया था, वह प्रयोजन, वह आत्मार्थ उन्होंने सिद्ध कर लिया है ।

यह सुनकर चकित होते हुए कृष्ण वासुदेव ने अर्हन्त प्रभु से प्रश्न किया—भगवन ! गजसुकुमाल मुनि ने अपना प्रयोजन (अपना आत्मार्थ) कैसे सिद्ध कर लिया है ?

Maxim 32 :

After that passing through the middle of *Dwārakā city Kṛṣṇa Vāsudeva* reached to *Sahasrāmravana,* where *Bhagawāna Ariṣṭanemi* was. He bowed down and worshipped *Bhagawāna*.

After that he moved his eyes to see his younger brother newly consecrated monk *Gaja Sukumāla* to bow down to him; but could not find him there. Then he bowing down to *Bhagawāna Ariṣṭanemi* asked–*Bhagawan* ! Where is my younger uterine brother and newly consecrated monk ? I want to bow down to him.

Then *Arihanta Ariṣṭanemi* replying the question of *Kṛṣṇa Vāsudeva said–Kṛṣṇa* ! For the purpose *Gaja Sukumāla* accepted restrain he has attained that.

Hearing this astonished *Kṛṣṇa Vāsudeva* asked *Arihanta Ariṣṭanemi– Bhagawan* ! How *Gaja Sukumāla* attained his end (salvation of soul) ?

सूत्र ३३ :

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–एवं खलु कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं ममं कल्लं पुव्वावरण्ह कालसमयंसि वंदइ णमंसइ । वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–इच्छामि णं जाव उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

तए णं तं गयसुकुमालं अणगारं एगे पुरिसे पासइ । पासित्ता आसुरत्ते जाव सिद्धे ।

तं एवं खलु कण्हा ! गयसुकुमालेणं अणगारेणं साहिए अप्पणो अट्ठे ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी–

केस णं भंते ! से पुरिसे अपत्थियपत्थिए जाव परिवज्जिए, जेणं ममं सहोदरं कणीयसं भायरं गयसुकुमालं अणगारं अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए ?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–मा णं कण्हा ! तुमं तस्स पुरिसस्स पओसमावज्जाहि । एवं खलु कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स साहिज्जे दिण्णे ।

सूत्र ३३ :

तब अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को उत्तर दिया–हे कृष्ण ! वस्तुतः कल के दिन अपराह्न काल के पूर्व भाग में गजसुकुमाल मुनि ने मुझे वन्दन-नमस्कार किया। वन्दन नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया– हे प्रभु ! आपकी आज्ञा हो तो मैं महाकाल श्मशान में एक रात्रि की महाभिक्षु प्रतिमा धारण करके विचरना चाहता हूँ। मेरी अनुज्ञा प्राप्त होने पर वह गजसुकुमाल मुनि महाकाल श्मशान में जाकर भिक्षु की महा-प्रतिमा धारण करके ध्यानस्थ खड़े हो गये।

इसके बाद उन गजसुकुमाल मुनि को एक पुरुष ने देखा और देखकर वह उन पर बहुत क्रुद्ध हुआ।'' इत्यादि समस्त घटनाक्रम सुनाकर भगवान ने कहा–हे कृष्ण ! उन गजसुकुमाल मुनि ने अपना प्रयोजन सिद्ध कर लिया, अपना आत्मकार्य सिद्ध कर लिया।

यह सुनकर कृष्ण वासुदेव भगवान अरिष्टनेमि से इस प्रकार पूछने लगे– हे पूज्य ! वह अप्रार्थनीय का प्रार्थी अर्थात् मृत्यु को चाहने वाला निर्लज्ज पुरुष कौन है जिसने मेरे सहोदर लघु भ्राता गजसुकुमाल मुनि का असमय में ही प्राणहरण कर लिया ?

तब अर्हत् अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोले– हे कृष्ण ! तुम उस पुरुष पर द्वेष मत करो, क्योंकि उस पुरुष ने सुनिश्चित रूप से गजसुकुमाल मुनि को अपना आत्महित एवं अपना प्रयोजन सिद्ध करने में सहायता प्रदान की है।

Maxim 33 :

Then *Arhat Ariṣṭanemi* replied *Kṛṣṇa Vāsudeva*–O *Kṛṣṇa* ! Verily *Gaja Sukumāla* bowed down to me yesterday in the first part of afternoon and then said–O Lord ! if you permit me I intend to accept and observe twelfth sage special resolution (*Bhikṣu-Mahāpratimā*) of one night in *Mahākāla* cemetry. Getting my permission *Gaja Sukumāla* went to *Mahākāla* cemetry, accepted

sage great vow-resolution, stand up and went deep into meditation.

Thereafter a man saw monk *Gaja Sukumāla* and became red in fury. Thus telling full description *Bhagawāna* said–O *Kṛṣṇa* ! thus monk *Gaja Sukumāla* obtained his end–the salvation of his soul.

Hearing all this *Kṛṣṇa* began to inquire from *Bhagawāna Ariṣṭanemi*–O Reverend sir ! Who is that shameless person, desirous of undesirable–desirous of death, who has made my younger uterine brother monk *Gaja Sukumāla* lifeless untimely.

Then *Arhat Ariṣṭanemi* spoke thus unto *Kṛṣṇa Vāsudeva*–O *Kṛṣṇa* ! Do not be invidious towards that person, because really he became helpful to monk *Gaja Sukumāla* for attaining his goal–purification of soul.

सूत्र ३४ :

कहण्णं भंते ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स साहिज्जे दिण्णे ?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–

से णूणं कण्हा ! तुमं ममं पायवंदए, हव्वमागच्छमाणे बारवईए णयरीए एगं पुरिसं पाससि जाव अणुप्पवेसिए। जहा णं कण्हा तुमं तस्स पुरिसस्स साहिज्जे दिण्णे। एवमेव कण्हा ! तेणं पुरिसेणं गयसुकुमालस्स अणगारस्स अणेगभव-सय-सहस्स-संचियं कम्मं उदीरेमाणेणं बहुकम्मणिज्जरट्ठं साहिज्जे दिण्णे।

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी–से णं भंते ! पुरिसे मए कहं जाणियव्वे ?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–जे णं कण्हा ! तुमं बारवईए णयरीए अणुप्पविसमाणं पासित्ता ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करिस्सइ तए णं तुमं जाणिज्जासि, एस णं से पुरिसे।

सूत्र ३४ :

यह सुनकर कृष्ण वासुदेव ने पुनः आश्चर्यपूर्वक प्रश्न किया–हे भगवन् ! उस पुरुष ने गजसुकुमाल मुनि को सहायता दी, यह कैसे ?

अर्हंत अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव को इस प्रकार स्पष्ट उत्तर दिया–हाँ कृष्ण ! निश्चय ही उसने सहायता की ।

यथा–मेरे चरण वन्दन हेतु शीघ्रता पूर्वक आते समय तुमने द्वारका नगरी में एक वृद्ध पुरुष को देखा और उसके घर के बाहर राजमार्ग पर पड़ी ईंटों की विशाल राशि में से तुमने एक ईंट उस वृद्ध के घर में ले जाकर रख दी। तुम्हें एक ईंट रखते देखकर तुम्हारे साथ के सब पुरुषों ने भी उन ईंटों को उठा-उठाकर उस वृद्ध पुरुष के घर में पहुँचा दिया और ईंटों की वह विशाल राशि इस तरह तत्काल राज-मार्ग से उठकर उस वृद्ध के घर में चली गई । इस तरह तुम्हारे इस सहकार से उस वृद्ध पुरुष का उस ढेर की एक-एक ईंट उठाकर ढोने का कष्ट दूर हो गया ।

हे कृष्ण ! वास्तव में जिस तरह तुमने उस पुरुष का कष्ट दूर करने में सहायता की, उसी तरह उस पुरुष ने भी अनेकानेक लाखों (शत-सहस्र) भवों के संचित कर्म की राशि की उदीरणा करने में संलग्न गजसुकुमाल मुनि को उन कर्मों की सम्पूर्ण निर्जरा करने में सहायता प्रदान की है ।

यह सुनकर कृष्ण वासुदेव ने अर्हंत अरिष्टनेमि से इस प्रकार पूछा–हे भगवन् ! मैं उस पुरुष को किस प्रकार पहचान सकूँगा ?

भगवान् अरिष्टनेमि कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार बोले–हे कृष्ण ! यहाँ से लौटते समय जब तुम द्वारका नगरी में प्रवेश करोगे, उस समय तुम्हें देखकर जो पुरुष भयभीत हो उठेगा और वहीं खड़े-खड़े ही आयुष्य पूर्ण हो जाने से मृत्यु को प्राप्त हो जायेगा। तुम समझ लेना कि निश्चयरूपेण यही वह पुरुष है ।

Maxim 34 :

Hearing this *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* astonished again and asked–O *Bhagawan* ! That person became helpful to monk *Gaja Sukumāla* (attaining his end). How it is so ?

Then Arhat Ariṣṭanemi clearly replied to *Vāsudeva Śrīkṛṣṇa* in this way–Yes *Kṛṣṇa* ! Definitely he helped.

When you were coming to bow down me then you saw an oldman carrying one brick from the heap of bricks which was accumulated before his house on the royal road. You have taken up one brick and carrying that put in his house.

Visualising you putting one brick your followers–all following persons, picking up those bricks put down in the house of that old man. Thus by your this help the turmoil of putting down those bricks one by one inside his house finished.

O *Kṛṣṇa* ! Just as you lent aid to finish that oldman's turmoil. In the same way O *Kṛṣṇa* ! that person also aided *Gaja Sukumāla* monk to completely annihilate the accumulated *karmas* of numerous previous births.

Hearing this *Śrīkṛṣṇa Vāsudeva* asked *Arhat Ariṣṭanemi* in these words–O *Bhagawan* ! How can I recognise that person ?

Bhagawāna Ariṣṭanemi spoke thus unto *Vāsudeva Śrīkṣṛṇa*–O *Kṛṣṇa* ! Returning from here when you will enter in *Dwārakā* city, at that time seeing you the person who will be frightened and standing there due to completion of age will be died. You should consider him definitely he is that person.

सूत्र ३५ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ । वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव आभिसेयं हत्थिरयणं तेणेव उवागच्छइ; उवागच्छित्ता हत्थिं दुरूहइ; दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी, जेणेव सए गिहे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

तए णं तस्स सोमिलस्स माहणस्स कल्लं जाव जलंते अयमेयारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे ।

एवं खलु कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं पायवंदए णिग्गए तं णायमेयं अरहया, विण्णायमेयं अरहया, सुयमेयं अरहया, सिट्ठमेयं अरहया भविस्सइ कण्हस्स वासुदेवस्स।

तं न णज्जइ णं कण्हे वासुदेवे ममं केण वि कु-मारेणं मारिस्सइ त्ति कट्टु भीए सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ।

पडिणिक्खमित्ता कण्हस्स वासुदेवस्स बारवइं णयरिं अणुप्पविसमाणस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसं हव्वमागए।

सूत्र ३५ :

अपने प्रश्न का समाधान पाकर कृष्ण वासुदेव अरिष्टनेमि को वन्दन नमस्कार कर जहाँ अपना प्रधान हस्तिरत्न खड़ा था, वहाँ पहुँचकर उस हाथी पर आरूढ़ हुए और अपने राजप्रासाद की ओर चल पड़े।

उधर उस सोमिल ब्राह्मण के मन में दूसरे दिन सूर्योदय होते ही इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ–

(आज) निश्चय ही कृष्ण वासुदेव अरिहंत अरिष्टनेमि के निकट वन्दन करने के लिए गये होंगे। वे तो सर्वज्ञ हैं, उनसे कोई बात छिपी नहीं है। उन्होंने गजसुकुमाल की मृत्यु और मेरे कुकृत्य सम्बन्धी सब वृत्तान्त जान लिया होगा, आद्योपान्त पूर्णतः विदित कर लिया होगा। अर्हन्त अरिष्टनेमि ने अवश्यमेव कृष्ण वासुदेव को यह सब कुछ बता दिया होगा।

तो ऐसी स्थिति में कृष्ण वासुदेव क्रोधित होकर मुझे न मालूम किस प्रकार की कुमौत से मारेंगे। ऐसा विचार कर वह डरा, भयाक्रान्त हुआ, और घर से निकला, नगर से कहीं दूर भागने का निश्चय किया।

उसने सोचा कि श्रीकृष्ण तो राजमार्ग से लौटेंगे। इसलिए मैं किसी छोटी गली के रास्ते से निकल भागूँ और उनके लौटने से पूर्व ही निकल जाऊँ। ऐसा सोचकर वह अपने घर से निकला और गली के रास्ते से भागा।

इधर कृष्ण वासुदेव भी अपने लघु-सहोदर भाई गजसुकुमाल मुनि की अकाल मृत्यु के शोक से विह्वल होने के कारण राजमार्ग छोड़कर उसी गली के रास्ते से लौट रहे थे।

Maxim 35 :

Getting clear reply of his question *Kṛṣṇa Vāsudeva* bowed down and did reverence to *Arhat Ariṣṭanemi*, went to the place where his excellent elephant was standing, rode on it and started towards his royal palace.

On the other side, as the sun shone with lustre, such thoughts arose in the mind of *Somila Brāhmaṇa*–

'Today, *Kṛṣṇa Vāsudeva* must have definitely gone to bow down *Arhat Ariṣṭanemi*. He is omniscient. Nothing is hidden from him. He must have known all details about death of *Gaja Sukumāla* and my ill-deed. *Arihanta Ariṣṭanemi* must have told everything to *Kṛṣṇa Vāsudeva*. In these conditions, becoming agitated *Kṛṣṇa Vāsudeva* will kill me by what cruel device, I do not know. Thinking thus he frightened, came out of home and decided to run far away out of the city.

He thought–*Kṛṣṇa* will return moving on royal road. Therefore I should run away through any small street and get out of the city before he returns. Thinking thus, he came out his home and ran through a small street.

Kṛṣṇa Vāsudeva was full of sorrow due to the cruel death of his younger brother monk *Gaja Sukumāla*. So he was returning through the same street.

सूत्र ३६ :

तए णं से सोमिले माहणे कण्हं वासुदेवं सहसा पासित्ता भीए, ठियए चेव ठिइभेएणं कालं करेइ । करित्ता धरणितलंसि सव्वंगेहिं धसत्ति सण्णिवडिए ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे सोमिलं माहणं पासइ, पासित्ता एवं वयासी–

एस णं भो देवाणुप्पिया ! से सोमिले माहणे अपत्थियपत्थए जाव परिवज्जिए । जेण ममं सहोदरे कणीयसे भायरे गयसुकुमाले अणगारे अकाले चेव जीवियाओ ववरोविए, त्ति कट्टु ।

सोमिलं माहणं पाणेहिं कड्ढावेइ, कड्ढावित्ता, तं भूमिं पाणिएणं अब्भुक्खावेइ, अब्भुक्खावित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए । सयं गिहं अणुप्पविट्ठे ।

एवं खलु जम्बू ! समणेणं भगवया जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अट्ठमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।

(अट्ठमं अज्झयणं समत्तं)

सूत्र ३६ :

कृष्ण वासुदेव के द्वारका नगरी में प्रवेश करते समय वह संयोगवश एकदम उनके सामने ही आ जाता है. तब उस समय वह सोमिल ब्राह्मण कृष्ण वासुदेव को अचानक सम्मुख देखकर भयभीत हुआ और जहाँ का तहाँ स्तंभित खड़ा रह गया और वहीं खड़े-खड़े ही स्थिति-भेद से–अपना आयुष्य पूर्ण हो जाने से उसका अंग अंग ढीला पड़ गया वह सोमिल "धस" शब्द करता हुआ वहीं भूमि-तल पर धड़ाम से गिर पड़ा। उसके प्राण निकल गये ।

उस समय कृष्ण वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण को (मरकर) गिरता हुआ देखा और देखकर इस प्रकार बोले–

अरे ओ देवानुप्रियो ! यही वह मृत्यु की इच्छा करने वाला तथा निर्लज्ज एवं शोभाहीन सोमिल ब्राह्मण है, जिसने मेरे सहोदर छोटे भाई गजसुकुमाल मुनि को असमय में ही मृत्यु के मुँह में धकेल दिया है ।

ऐसा कहकर श्रीकृष्ण वासुदेव ने सोमिल ब्राह्मण के उस शव को चाण्डालों द्वारा घसीटवाकर नगर के बाहर फिंकवा दिया और उस शव से स्पर्श की गई भूमि को पानी से धुलवाया। उस भूमि को पानी से धुलवाकर कृष्ण वासुदेव अपने राज प्रासाद में प्रविष्ट हुए।

आर्य सुधर्मा–इस प्रकार हे जम्बू ! मोक्ष को प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन का यह भाव प्रतिपादित किया है । **(आठवाँ अध्ययन समाप्त)**

Maxim 36 :

As *Kṛṣṇa Vāsudeva* entered *Dwārakā* city, perchance, all of a sudden he (*Somila*) came in front of him. Then that *Somila Brāhmaṇa* seeing *Kṛṣṇa Vāsudeva* frightened, stunned, remained standing as he was and due to completion of age, his limbs of body loosened and he (*Somila*) fallen down on the ground with the sound *dhaḍāma*. He became lifeless.

Kṛṣṇa Vāsudeva saw *Somila* falling down dead, so spoke–

O beloved as gods ! This is the desirous of death, shameless *Somila Brāhmaṇa* who has untimely killed my younger uterine brother monk *Gaja Sukumāla*.

Saying thus *Kṛṣṇa Vāsudeva* caused to hug and throw the corpse of *Somila* by *Cāṇḍālas* and caused to wash up the land touched by the dead body of *Somila*. And then he entered his palace.

Ārya Sudharmā–Thus O *Jambū* ! Salvated *Śramaṇa Bhgawāna Mahāvīra* expressed such subject matter of eighth chapter of third section of eighth *aṅga*.

[Eighth Chapter Consumed]

नवम अध्ययन

सूत्र ३७ :

णवमस्स उक्खेवओ ।

एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए जहा पढमए जाव विहरइ ।

तत्थ णं बारवईए बलदेवे णामं राया होत्था । वण्णओ । तस्स णं बलदेवस्स रण्णो धारिणी णामं देवी होत्था । वण्णओ ।

तए णं सा धारिणी। सीहं सुमिणे,

जहा गोयमे णवरं सुमुहे णामं कुमारे,

–पण्णासं कण्णाओ। पण्णासंओ दाओ, चोद्दसपुव्वाइं अहिज्जइ। वीसं वासाइं परियाओ। सेसं तं चेव जाव सेत्तुंजे सिद्धे।

निक्खेवओ। **(नवमं अज्झयणं समत्तं)**

सूत्र ३७ :

आर्य सुधर्मा से पुनः जम्बू स्वामी पूछते हैं कि हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने अंतकृद्दशांग सूत्र के तीसरे वर्ग के आठवें अध्ययन के जो भाव कहे वे मैंने आपसे सुने। हे भगवन ! अब आगे नवमें अध्ययन में उन्होंने क्या भाव फरमाये हैं? सो कृपा कर बतावें।

आर्य सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल, उस समय में द्वारका नाम की नगरी थी जिसका वर्णन पूर्व में किया जा चुका है। एक दिन भगवान् अरिष्टनेमि विहार करते हुए उस नगरी में पधारे।

द्वारका नगरी में बलदेव नाम के राजा थे। उनकी धारिणी नाम की रानी थी। वह अत्यन्त सुकोमल, सुन्दर एवं गुण सम्पन्न थी।

एक समय सुकोमल शय्या पर सोई हुई धारिणी देवी ने रात को सिंह का स्वप्न देखा (स्वप्न देखकर वह जाग गई। उसी समय अपने पति के पास जाकर स्वप्न का वृत्तान्त उन्हें सुनाया। यावत् स्वप्न पाठकों से स्वप्न फल पूछकर गर्भ की देखभाल करती रही। गर्भ समय पूर्ण होने पर स्वप्न के अनुसार उनके यहां एक पुण्यशाली पुत्र का जन्म हुआ) उसके जन्म, बाल्यकाल आदि का वर्णन गौतम कुमार के समान समझना चाहिए। विशेष में, उस बालक का नाम सुमुख रखा गया। युवा होने पर पचास कन्याओं से साथ उसका पाणिग्रहण संस्कार हुआ। विवाह में पचास-पचास करोड़ सोनैया आदि का प्रीतिदान उसे मिला।

भगवान अरिष्टनेमि के किसी समय वहां पधारने से उनका धर्मोपदेश सुनकर सुमुख कुमार उनके पास दीक्षित हो गया। दीक्षित होकर चौदह

पूर्व का ज्ञान पढ़ा । बीस वर्ष तक श्रमण दीक्षा पाली । अन्त में गौतम कुमार की तरह संलेखणा यावत् संथारा करके शत्रुंजय पर्वत पर सिद्ध हुए ।

हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर ने अन्तकृद्दशा के तीसरे वर्ग के नवमें अध्ययन में उपरोक्त भाव कहे हैं । (नवम अध्ययन समाप्त)

Chapter 9

Maxim 37 :

Jambū Swāmi further says to *Ārya Sudharmā* that O *Bhagawan* ! The subject matter as expressed by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* of eighth chapter of third section of *Antakṛddaśāṅga Sūtra*, I have heard from you. O *Bhagawan* ! What subject matter he expressed in the nineth chapter. Please tell me now.

Ārya Sudharmā said–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Dwārakā*. Its description has been given in previous pages. One day *Bhagwāna Ariṣṭanemi* reached there. There was a ruler named *Baladeva* in *Dwārakā* city. His queen was *Dhāriṇī*. She was very tender, beautiful and virtuous.

At any time, *Dhāriṇī* was sleeping on his comfortable bed. She saw a lion in dream. She woke up seeing this dream. At that time, she went to her husband and told about her dream (until) enquired the consequences of dream from dream-consequence-tellers.......Queen nurtured her foetus carefully.

On completion of pregnancy period, according to the dream queen gave birth to a fateful son. The description of birth, childhood etc., should be known as of *Gautama Kumāra*. Excepting; the name of this son was kept *Sumukha*. Becoming young he was married to fifty maidens.

At the time of marriage he got gift of fifty-fifty *Karoda* (five hundred millions) gold coins etc. At any time

Bhagawāna Ariṣṭanemi came there. Listening his sermon *Sumukha Kumāra* accepted consecration. Then he studied fourteen *Pūrvas*, upto twenty years he practised consecration. In the end, like *Gautama Kumāra*, he practised *saṁlekhanā* until *saṁthāra* and became emancipated from mountain *Śatruṁjaya.*

O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* expressed such subject matter of nineth chapter of third section of *Antakṛddaśā Sūtra* *[Nineth Chapter Consumed]*

अध्ययन १०-१३

सूत्र ३८ :

एवं दुम्मुहे वि । कूवदारए वि ।

दोण्हं वि बलदेवे पिया धारिणी माया ।

दारुए वि एवं चेव, णवरं वसुदेवे पिया, धारिणी माया ।

एवं अणादिट्ठी वि, वसुदेवे पिया धारिणी माया ।

एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वगस्स तेरसमस्स अज्झयणस्स अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि ।

(तृतीय वर्ग समाप्त)

सूत्र ३८ :

जिस प्रकार प्रभु ने नवमें अध्ययन का भाव फरमाया है, उसी प्रकार दसवें "दुर्मुख" और ग्यारहवें "कूवदारक" का भी वर्णन जान लेना चाहिए। अन्तर इतना है कि दोनों के पिता बलदेव महाराज और माता धारिणी थी, बाकी इनका सारा वर्णन "सुमुख" के समान ही समझना चाहिए ।

इसी तरह बारहवें में "दारुक" और तेरहवें में "अनादृष्टि कुमार" का वर्णन समझना। इसमें अन्तर केवल इतना ही है कि इनके पिता वसुदेव और धारिणी माता थी ।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—इस तरह हे जम्बू! श्रमण यावत् मोक्ष को प्राप्त भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतगडदशा सूत्र के तीसरे वर्ग के एक से लेकर तेरह अध्ययनों का यह भाव फरमाया है । (तृतीय वर्ग समाप्त)

Chapter 10-13

Maxim 38 :

As *Prabhu* (*Bhagawāna*) expressed the subject matter of nineth chapter so should be known the subject matter of tenth chapter *Durmukha* and eleventh chapter *Kūvadāruka*. Excepting, father of these both was ruler *Baladeva* and mother was *Dhāriṇī*. Remaining all description is like *Sumukha Kumāra*.

In the same way the description of twelfth chapter *Dāruka* and thirteenth chapter *Anādṛṣṭi Kumāra* should be known. Excepting; father of these both was *Vasudeva* and mother was *Dhārinī*.

Śrī Sudharmā Swamī said–O *Jambū* ! *Śramaṇa* until salvated *Bhagawāna Mahāvīra* expressed the subject matter of third section of *Antakrddaśā Sūtra*–chapters from one to thirteen. **[Third section finished]**

卐

चतुर्थ वर्ग

अध्ययन १ से १०

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं तच्चस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते । चउत्थस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जम्बू ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स अंतगडदसाणं दस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—

जालि[1] मयालि[2] उवयालि[3] पुरिससेणे[4] य वारिसेणे[5] य ।

पज्जुण्णा[6] संब[7] अणिरुद्धे[8], सच्चणेमी[9] य दढणेमी[10] ॥ १ ॥

सूत्र १ :

श्री जम्बू स्वामी ने प्रश्न किया— हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अंग अंतकृद्दशा के तीसरे वर्ग का जो वर्णन किया वह मैंने आपसे सुना है । अब अंतकृद्दशा सूत्र के चौथे वर्ग के श्रमण भगवान महावीर ने क्या भाव बताये हैं, यह भी मुझे बताने की कृपा करें ।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—हे जम्बू ! श्रमण भगवान महावीर ने अंतकृद्दशा के चौथे वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं—

१. जालिकुमार, २. मयालिकुमार, ३. उवयालिकुमार, ४. पुरुषसेन कुमार, ५. वारिसेन कुमार, ६. प्रद्युम्न कुमार, ७. शाम्ब कुमार, ८. अनिरुद्ध कुमार, ९. सत्यनेमि कुमार, १०, दृढ़नेमि कुमार ।

FOURTH SECTION

Chapters 1 to 10

Maxim 1:

Śrī Jambū Swāmī questioned–I have heard from you, the subject matter expressed by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* of third section of *Eighth Aṅga Antakṛddaśā Sūtra*. Now please tell me the subject matter of fourth section of this *Sūtra* as described by *Śramaṇa Bhagawāna. Mahāvīra.*

Śrī Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has said ten chapters of fourth section of *Antakṛddaśā Sūtra*. These are–

1. Jāli Kumāra 2. Mayāli Kumāra. 3. Uvayāli Kumāra 4. Puruṣasena Kumāra. 5. Vārisena Kumāra 6. Pradyumna Kumāra. 7. Śāmba Kumāra 8. Aniruddha Kumāra 9. Satyanemī Kumāra and 10. Dṛḍhanemi Kumāra.

सूत्र २ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं चउत्थस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता । पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जम्बू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी होत्था, जहा पढमे । कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ ।

तत्थ णं बारवईए णयरीए वसुदेवे राया, धारिणी देवी, वण्णओ ।

सूत्र २ :

श्री जम्बू स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने चौथे वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं । तो उनमें से प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ बतलाया है ?

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—हे जम्बू ! उस काल, उस समय में द्वारका नाम की नगरी थी, जिसका वर्णन प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में किया जा चुका है । श्री कृष्ण वासुदेव वहां राज्य कर रहे थे ।

उस द्वारका नगरी में महाराज वसुदेव और रानी धारिणी निवास करते थे । रानी धारिणी अत्यन्त सुकुमार सुन्दर और सुशीला थी । एक समय कोमल शय्या पर सोती हुई धारिणी रानी ने सिंह का स्वप्न देखा। उस स्वप्न का वृत्तान्त उसने अपने पतिदेव को सुनाया। यावत् स्वप्न फल आदि का वर्णन पूर्ववत् समझना चाहिए ।

Maxim 2 :

Śrī Jambū Swāmī asked–O *Bhagawan* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has told ten chapters of fourth section then what subject matter he expressed of first chapter ?

Śrī Sudharmā Swāmī said–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Dwārakā*. Its description has been given in the first chapter of first section. *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* was ruling over it.

In that *Dwārakā* city dwelt king *Vasudeva* and his queen *Dhāriṇī*. Queen *Dhariṇī* was most tender, beautiful and chaste woman. Once she was sleeping on a comfortable bed then she saw a lion in dream. She told her dream to her husband until the description of dream etc..should be known as described before (in previous pages).

सूत्र ३ :

जहा गोयमो, णवरं जालिकुमारे पण्णासओ दाओ । बारसंगी सोलस वासा-परियाओ । सेसं जहा गोयमस्स जाव सेत्तुंजे सिद्धे ।

एवं (२) मयालि (३) उवयालि, (४) पुरिससेणे, (५) वारिसेणे, य । एवं (६) पज्जुण्णे वि, णवरं कण्हे पिया, रुप्पिणी माया । एवं (७) संब वि, णवरं जंबवई माया । एवं (८) अणिरुद्धे वि, णवरं पज्जुण्णे पिया,

वेदब्भी माया । एवं (९) सच्चमणेमी णवरं समुद्दविजए पिया, सिवा माया । एवं (१०) दढणेमी वि ।

सव्वे एगगमा । चउत्थस्स वग्गस्स णिक्खेवओ ।

(चतुर्थ वर्ग समाप्त)

सूत्र ३ :

इसके बाद पूर्व में वर्णित गौतम कुमार की तरह उनके एक तेजस्वी पुत्र का जन्म हुआ, जिसका नाम "जालिकुमार" रखा गया। जब वह युवावस्था को प्राप्त हुआ तब उसका विवाह पचास कन्याओं के साथ किया गया और उन्हें पचास-पचास करोड़ सोनैया आदि का प्रीतिदान मिला। संक्षेप में वर्णन इस प्रकार समझना चाहिए–

एक समय भगवान् अरिष्टनेमि वहाँ पधारे । उनका धर्मोपदेश सुनकर जालिकुमार को संसार से विरक्ति हो गई । माता-पिता की आज्ञा लेकर उन्होंने अर्हन्त अरिष्टनेमि के पास दीक्षा अंगीकार की । बारह अंगों का अध्ययन किया और १६ वर्ष पर्यन्त श्रमण दीक्षा पर्याय पाली। फिर गौतम कुमार की तरह इन्होंने भी संलेखना आदि करके शत्रुंजय पर्वत पर एक मास का संथारा किया और सब कर्मों से मुक्त होकर सिद्ध हुए ।

जालिकुमार की तरह २. मयालिकुमार, ३. उवयालिकुमार, ४. पुरुषसेन कुमार, और ५. वारिसेन कुमार के वर्णन भी समझने चाहिये । ये सभी वसुदेव जी के पुत्र एवं धारिणी रानी के आत्मज थे ।

इसी तरह छठे प्रद्युम्न कुमार का जीवन चरित्र भी जानना चाहिए । केवल अन्तर इतना जानना चाहिए कि इनके पिता "श्रीकृष्ण" और माता रुक्मिणी थी ।

ऐसे ही सातवें शाम्बकुमार का जीवन वर्णन समझना। केवल अन्तर इतना कि इनके पिता श्रीकृष्ण एवं माता जाम्बवती थी ।

इसी प्रकार आठवें अध्ययन में अनिरुद्ध कुमार का जीवन वर्णन समझना चाहिये, इनके पिता प्रद्युम्न कुमार और माता वैदर्भी थी ।

ऐसे ही नवमें अध्ययन में सत्यनेमि कुमार और दशवें अध्ययन में दृढ़नेमि कुमार का वर्णन समझना चाहिये। इनमें विशेष यह है कि समुद्रविजय जी इनके पिता थे और शिवादेवी इनकी माता थीं (ये दोनों अर्हत् अरिष्टनेमि के छोटे भाई थे)।

ये सब अध्ययन एक समान वर्णन वाले हैं। यह चौथे वर्ग का उत्क्षेपक सारांश है।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा—इस प्रकार जम्बू! दस अध्ययनों वाले इस चौथे वर्ग का श्रमण भगवान महावीर ने जो भाव प्रतिपादित किया है, वह मैंने तुम्हें सुनाया है। (चौथा वर्ग समाप्त)

Maxim 3 :

After it, as described before, like *Gautama Kumāma*, a brilliant son took birth. It was named as *Jālı Kumāra.* When he attained young age then he was wedded with fifty young girls and he got fifty-fifty *karoḍa* (five hundred millions) gold coins etc., as wedding-gift. Further description should be known thus ın brief–

Once *Bhagawāna Ariṣṭanemı* came there. Listening his sermon *Jāli Kumāra* became apathetic from world. He accepted consecration, with permission of his parents, near *Arihanta. Ariṣṭanemi.* He studied twelve *aṅgas* (holy scriptures) and practised sage-consecration upto sixteen years. Then like *Gautama kumāra*, he accepted *saṁlekhanā* and practised *saṁthārā* of one month on mount *Śatruṅjaya* and exhausting all *karmas* beatıfied.

Like *Jāli Kumāra* the descriptions of 2. *Mayāli Kumāra* 3. *Uvayāli Kumāra* 4. *Puruṣasena Kumāra* and 5. *Vārisena Kumāra* should be known. All these were the sons of king *Vasudeva* and queen *Dhāriṇī*.

In the same way the life-character of sixth *Pradyumna Kumāra* should be known. Excepting; his father was *Śrī Kṛṣṇa* and mother was *Rukmiṇī*.

The same is the life description of seventh *Śāmba Kumāra*. Excepting; his father was *Śrī Kṛṣṇa* and mother was *Jāmbavatī*.

Such is the life-description of eighth *Aniruddha kumāra* in eighth chapter. Excepting; his father was *Pradyumna Kumāra* and mother was *Vaidarbhī*.

Such is the description of *Satyanemi* in nineth chapter and *Dṛḍhanemi* in tenth chapter. Excepting; father of these both was *Samudravijaya* and mother was *Śivādevī*. As such, these both were the younger brothers of *Bhagawāna Ariṣṭanemi*.

All these chapters are alike in description. This is the substance of fourth section.

Śrī Sudharmā Swāmī said–Thus O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has expressed the subject matter of fourth section containing ten chapters, which I have told you.

[Fourth section completed]

पंचम वर्ग

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेण चउत्थस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते । पंचमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेण के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—

पउमावई[1] य गोरी,[2] गंधारी[3] लक्खणा[4] सुसीमा[5] य ।

जंबवई[6] सच्चभामा[7] रुप्पिणी[8] मूलसिरी[9] मूलदत्ता[10] य ॥

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं पंचमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता । पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

सूत्र १ :

आर्य जम्बू—हे भगवन् ! श्रमण यावत् मुक्ति को प्राप्त प्रभु ने चौथे वर्ग का यह अर्थ वर्णन किया है, तो अन्तकृद्दशा के पंचम वर्ग का क्या भाव प्रतिपादन किया है ?

आर्य सुधर्मा—हे जम्बू ! इस प्रकार निश्चय ही श्रमण भगवान ने पंचम वर्ग के दस अध्ययन बताये हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैं— १. पद्मावती, २. गौरी, ३. गांधारी, ४. लक्ष्मणा, ५, सुसीमा देवी, ६, जाम्बवती, ७, सत्यभामा, ८. रुक्मिणी, ९. मूलश्री, १०. मूलदत्ता ।

आर्य जम्बू— हे भगवन् मोक्ष प्राप्त श्रमण भगवान महावीर ने पंचम वर्ग के दस अध्ययन कहे हैं, तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ कहा है ?

FIFTH SECTION

Maxim 1 :

Ārya Jambū asked–O *Bhagawan* ! If *Śramaṇa* until salvated *Bhagawāna* described this subject matter of fourth section then what subject matter he preached of *Antakṛddaśā's* fifth section ?

Ārya Sudharmā told–O *Jambū* ! Definitely, *Śramaṇa Bhagawāna* preached ten chapters of fifth section, the names of these chapters are–

1. Padmāvatī 2. Gaurī 3. Gāndhārī 4. Lakṣamaṇā 5. Susīmā Devī 6. Jāmbavatī 7. Satyabhāmā 8 Rukmiṇī 9. Mūlaśrī and 10 Mūladattā.

Ārya Jambū asked–O *Bhagawan* ! If salvated *Śramaṇa Bhagawāna Mahavīra* has said ten chapters of fifth section, then what subject matter he described of first chapter ?

प्रथम अध्ययन

पद्मावती

सूत्र २ :

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णामं णयरी होत्था, जहा पढमे, जाव कण्हे वासुदेवे आहेवच्चं जाव विहरइ ।

तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावई णामं देवी होत्था, वण्णओ ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे जाव विहरइ ।

कण्हे णिग्गए जाव पज्जुवासइ ।

तएणं सा पउमावई देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी हट्ठ-तुट्ठ-हिअआ जहा, देवई जाव पज्जुवासइ ।

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हस्स वासुदेवस्स पउमावईए य । जाव धम्मकहा । परिसा पडिगया ।

सूत्र २ :

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारका नाम की नगरी थी, जिसका वर्णन प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में किया जा चुका है । यावत् श्रीकृष्ण वासुदेव वहां राज्य कर रहे थे ।

श्रीकृष्ण की पद्मावती नाम की महारानी थी, जो अत्यन्त सुकुमार, सुरूपा और वर्णन करने योग्य थी ।

उस काल उस समय में अरिहंत अरिष्टनेमि संयम और तप से आत्मा को भावित करते हुए द्वारका नगरी में पधारे । श्री कृष्ण वंदन नमस्कार करने हेतु अपने राजप्रासाद से निकलकर प्रभु के पास पहुँचे यावत् प्रभु अरिष्टनेमि की पर्युपासना करने लगे ।

उस समय पद्मावती ने भगवान् के आने की खबर सुनी तो वह अत्यन्त प्रसन्न हुई । वह भी देवकी महारानी के समान धर्मरथ पर आरूढ़ होकर भगवान को वंदना करने गई । अर्हत् अरिष्टनेमि की पर्युपासना करने लगी ।

अरिहंत अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव, पद्मावती देवी और जन परिषद् को धर्मोपदेश दिया, धर्मकथा कही। धर्मोपदेश एवं धर्मकथा सुनकर परिषदा अपने-अपने घर लौट गई ।

Chapter 1

Padmāvatī

Maxim 2 :

Sudharmā Swāmī uttered–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Dwārakā*. Its description has been given in the first chapter of first section, until, *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* ruled over it.

Padmāvatī was his queen. She was very tender and of beautiful shape. So she was describable.

At that time and at that period, *Arihanta Ariṣṭanemi* reflecting his soul by penance and restrain came to *Dwārakā*. For bowing down and worshipping him *Śrī Kṛṣṇa* started from his royal palace and reaching near *Bhagawāna* began to worship him.

At that time queen *Padmāvatī* heard the auspicious news of coming of *Bhagawāna*, she became very glad. She too, like queen *Devakī*, riding on religious chariot, went to bow down to *Bhagawāna*, began to worship *Arhat Ariṣṭanemi* *Arihanta Ariṣṭanemi* preached religious sermon to *Kṛṣṇa Vāsudeva*, *Padmāvatī Devī* and whole congregation, told religious tales. Hearing religious sermon, tales and doctrines people-congregation went back to their houses.

सूत्र ३ :

तए णं कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ। वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—

इमीसे णं भंते ! बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए, णवजोयण-वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए किं मूलए विणासे भविस्सइ ?

'कण्हाइ' ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—

एवं खलु कण्हा ! इमीसे बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए णवजोयण-वित्थिण्णाए जाव पच्चक्खं देवलोगभूयाए सुर-ग्गि-दीवायण मूलाए विणासे भविस्सइ।

द्वारका-विनाश का कारण

सूत्र ३ :

तब कृष्ण वासुदेव ने भगवान् अरिष्टनेमि को वंदन नमस्कार करके उनसे इस प्रकार प्रश्न किया—

हे भगवन् ! बारह योजन लम्बी और नव योजन चौड़ी यावत् साक्षात् देवलोक के समान इस द्वारका नगरी का विनाश किस कारण से होगा ?

श्रीकृष्ण आदि को सम्बोधित करते हुए अरिहंत अरिष्टनेमि ने इस प्रकार उत्तर दिया–

हे कृष्ण ! निश्चय ही बारह योजन लम्बी और नव योजन चौड़ी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान इस द्वारका नगरी का विनाश मदिरा (सुरा), अग्नि और द्वैपायन ऋषि के कोप के कारण से होगा ।

Causes of Dwārakā-destruction

Maxim 3 :

Then bowing down and worshipping *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, *Vāsudeva Kṛṣṇa* asked him a question–

O *Bhagawan* ! Twelve *yojana* long and nine *yojana* wide this *Dwārakā* city until like heaven, by which cause it will be destructed ?

Arihanta Ariṣṭanemi thus replied unto *Kṛṣṇa Vāsudeva*– O *Kṛṣṇa* ! Definitely, twelve *yojana* long and nine *yojana* wide this *Dwārakā* city until like heaven will be destroyed by wine, fire and anger of *Dvaipāyana riṣi* (penancer); *i.e.* these three would be the causes of *Dwārakā's* destruction.

सूत्र ४ :

तए णं कण्हस्स वासुदेवस्स अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा अयमेयारूवे अज्झत्थिए समुप्पण्णे–

धण्णा णं ते जालि-मयालि-उवयालि-पुरिससेण-वारिसेण-पज्जुण्ण-संब-अणिरुद्ध-दढणेमि-सच्चणेमिप्पभिइओ कुमारा जे णं चिच्चा हिरण्णं जाव परिभाइत्ता अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतियं मुण्डा जाव पव्वइया ।

अहण्णं अधण्णे अकयपुण्णे रज्जे य जाव अंतेउरे य माणुस्सएसु य कामभोगेसु मुच्छिए । णो संचाएमि अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए जाव पव्वइत्तए ।

कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी–

से णूणं कण्हा ! तव अयं अज्झत्थिए समुप्पण्णे–'धण्णा णं ते जालि जाव पव्वइत्तए।'

से णूणं कण्हा ! अयमट्ठे समट्ठे ?

हंता अत्थि ।

सूत्र ४ :

अर्हन्त अरिष्टनेमि के श्रीमुख से द्वारका नगरी के विनाश का कारण जानकर श्रीकृष्ण वासुदेव के मन में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ कि "वे जालि, मयालि, उवयालि, पुरुषसेन, वारिसेन, प्रद्युम्न, शाम्ब, अनिरुद्ध, दृढ़नेमि और सत्यनेमि प्रभृति कुमार धन्य हैं, जो हिरण्यादि (स्वर्ण-रजत-रत्नादि) संपदा और परिजनों को छोड़कर यावत् प्रभु अरिष्टनेमि के पास मुण्डित हुए यावत् प्रव्रजित हो गये। मैं अधन्य हूँ, अकृत-पुण्य हूँ, इसलिए कि राज्य, अन्तःपुर और मनुष्य सम्बन्धी काम-भोगों में मूर्च्छित हूँ, इन्हें त्यागकर भगवान् अरिष्टनेमि के पास प्रव्रज्या लेने में समर्थ नहीं हूँ, ले नहीं पा रहा हूँ ।"

भगवान अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव के मन में आये इन विचारों को जानकर आर्त्तध्यान में डूबे हुए कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा–

"निश्चय ही हे कृष्ण ! तुम्हारे मन में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ–वे जालि मयालि आदि कुमार धन्य हैं, जिन्होंने धन, वैभव एवं स्वजनों को त्यागकर मुनिव्रत ग्रहण किया और मैं अधन्य हूँ, अकृतपुण्य हूँ जो राज्य, अन्तःपुर और मनुष्य सम्बन्धी काम-भोगों में ही गृद्ध हूँ । मैं प्रभु के पास प्रव्रज्या नहीं ले सकता ।"

हे कृष्ण ! क्या यह बात सही है ?

श्रीकृष्ण–हाँ भगवन् ! आपने जो कहा वह सभी यथार्थ है । सत्य है ।

Maxim 4 :

Hearing the causes of *Dwārakā* city's destruction from *Arihanta Ariṣṭanemi*, such thoughts aroused in the mind

of *Kṛṣṇa Vāsudeva*–"Blessed are *Jāli, Mayāli, Uvayāli, Puruṣasena, Vārisena, Pradyumna, Śāmba, Aniruddha, Dṛḍhnemi, Satyanemi* and other princes, who giving up gold, silver, jewels etc. wealth and family persons (until) near *Bhagawāna Ariṣṭanemi,* with shaven heads until accepted consecration. Unblessed and without meritorious deeds I am, because I am deep drown in kingdom, harem, and passionate pleasures of man. I am not capable to give up those pleasures and to accept consecration near *Bhagawāna Ariṣṭanemi* and could not enter the sage-order.

Bhagawāna Ariṣṭanemi being aware of the mental thoughts of *Kṛṣṇa Vāsudeva* and knowing him deep in inauspicious feelings said thus unto *Kṛṣṇa Vāsudeva*–

Definitely O *Kṛṣṇa* ! Such thoughts aroused in your mind that blessed are *Jāli, Mayāli* and other princes, who entered the sage order renouncing welath, fortune and family members. I am unblessed, without meritorious deeds who is deep drown in kingdom, harem, passionate pleasures relating to man. I cannot accept consecration near *Bhagawāna.*

O *Kṛṣṇa* ! Is it not true ?

Śrī Kṛṣṇa accepted–Yes *Bhagawan* ! What you have told, is fact and true.

सूत्र ५ :

तं णो खलु कण्हा ! एवं भूयं वा भव्वं वा भविस्सइ वा जण्णं वासुदेवा चइत्ता हिरण्णं जाव पव्वइस्संति ।

केणट्ठेणं भंते ! एवं वुच्चइ 'ण एवं भूयं वा जाव पव्वइस्संति' ?

कण्हाइ ! अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु कण्हा ! सव्वे वि य णं वासुदेवा पुव्वभवे णियाणकडा से एएणट्ठेणं कण्हा ! एवं वुच्चइ ण एवं भूयं जाव पव्वइस्संति ।

सूत्र ५ :

प्रभु ने कहा—तो हे कृष्ण ! ऐसा कभी हुआ नहीं, होता नहीं, और होगा भी नहीं कि वासुदेव (अपने इसी भव में) धन-धान्य, स्वर्ण, राज्य आदि सम्पत्ति को त्यागकर मुनिव्रत ले लें । वासुदेव दीक्षा लेते नहीं, ली नहीं, एवं भविष्य में कभी लेंगे भी नहीं ।

श्रीकृष्ण ने पूछा—भगवन् ! ऐसा क्यों, किसलिए कहा जाता है कि ऐसा कभी हुआ नहीं, होता नहीं, और होगा नहीं ।

तब अर्हत् अरिष्टनेमि ने कृष्ण-वासुदेव को इस प्रकार उत्तर दिया—हे कृष्ण ! निश्चय ही सभी वासुदेव पूर्वभव में निदान-कृत (नियाणा करने वाले) होते हैं, इसलिये मैं ऐसा कहता हूँ कि ऐसा कभी हुआ नहीं, होता नहीं और होगा भी नहीं कि वासुदेव कभी अपनी सम्पत्ति को छोड़कर प्रव्रज्या अंगीकार करें ।

Maxim 5 :

Bhagawāna said–Then O *Kṛṣṇa* ! It is never happened, nor is and never will be that any *Vāsudeva* (ruler of three regions of deccan India) in his own this or present birth, giving up cattles and agriculture, gold, kingdom etc., wealth, may accept sagehood. *Vāsudeva* never accepted consecration in past, cannot accept in present and will not accept in future.

Śrī Kṛṣṇa asked–*Bhagawan* ! Why and what for it is said that it never happened in past, nor can happen in present and never will happen in future ?

Then *Arhat Ariṣṭanemi* replied to *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* in these words–O *Kṛṣṇa* ! all the *Vāsudevas* in their previous births have made a sinful strong volition. Therefore I say that it never happened in past, can not happen in present and never will happen in future that any *Vāsudeva* may accept consecration giving up all his wealth etc.

विवेचन

जैन साहित्य में श्रीकृष्ण को कृष्ण वासुदेव कहा जाता है । वासुदेव शब्द का व्याकरण के आधार पर अर्थ होता है–"**वसुदेवस्य अपत्यं पुमान् वासुदेवः ।**" वसुदेव के पुत्र को वासुदेव कहते हैं । कृष्ण के पिता का नाम वसुदेव था, अतः इनको वासुदेव कहते हैं । वासुदेव शब्द सामान्य रूप से कृष्ण का वाचक है–कृष्ण का दूसरा नाम है ।

परन्तु वासुदेव का उक्त अर्थ प्रचलित होने पर भी यह शब्द जैन-दर्शन का पारिभाषिक शब्द बन गया है । अतएव सभी अर्धचक्रवर्तियों के लिए वासुदेव शब्द का प्रयोग किया जाता है । जैन परम्परा के अनुसार इस अवसर्पिणी में वासुदेव नौ हुए हैं–१. त्रिपृष्ठ, २. द्विपृष्ठ, ३. स्वयंभू, ४. पुरुषोत्तम, ५. पुरुषसिंह, ६. पुरुषपुण्डरीक, ७. दत्त, ८. नारायण (लक्ष्मण), ९. कृष्ण । इनमें कृष्ण अंतिम वासुदेव हैं ।

वासुदेव का पारिभाषिक अर्थ है–जो सात रत्नों, छह खण्डों में से तीन खण्डों का अधिपति हो तथा जो अनेकविध ऋद्धियों से सम्पन्न हो। जैन-दृष्टि से वासुदेव प्रतिवासुदेव को जीतकर एवं मारकर तीन खण्ड पर एकछत्र राज्य करते हैं । इसके अतिरिक्त २८ लब्धियों में से वासुदेव लब्धि भी एक लब्धि मानी गई है । इस पद का प्राप्त होना वासुदेव-लब्धि का फल है ।

वासुदेव में महान बल होता है । इस बल का उपमा द्वारा वर्णन करते हुए जैनाचार्यों ने कहा है–कुँए के किनारे बैठे हुए और भोजन करते हुए वासुदेव को जंजीरों से बाँध कर यदि चतुरंगिणी सेना सहित सोलह हजार राजा मिलकर खींचने लगें तो भी वे उन्हें खींच नहीं सकते, किन्तु उसी जंजीर को बाएँ हाथ से पकड़कर वासुदेव अपनी ओर उन्हें आसानी से खींच सकते हैं।

जैन आगमों में जिन श्री कृष्ण का उल्लेख है वे ऐसे ही वासुदेव हैं, वासुदेव-लब्धि से सम्पन्न हैं ।

● **नियाणकडा–(निदानकृत)** निदान जैन परम्परा का एक विशेष पारिभाषिक शब्द है । मोहनीय कर्म के उदय से कामभोगों की इच्छा होने पर साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका आदि का अपने चित्त में संकल्प कर लेना कि मेरी तपस्या से मुझे अमुक फल की प्राप्ति हो, उसे निदान कहते हैं । जन भाषा में इसे नियाणा कहते हैं । निदान कल्याण-साधक नहीं । जो व्यक्ति निदान करके मरता है, उसका फल प्राप्त करने पर भी उसे निर्वाण की प्राप्ति नहीं हो सकती । वासुदेव की पदवी पूर्वभव में किये गये निदान का फल होता है, अतः वासुदेव के भव में कोई जीव संसार त्यागकर साधु नहीं बन सकता ।

(निदान के विषय में विस्तृत वर्णन अन्तकृद्दशा महिमा में देखें)

Elucidation

In Jain literature *Śrī Kṛṣṇa* is called *Kṛṣṇa Vāsudeva.* According to grammatical basis the meaning of word *Vāsudeva* is–the son of *Vasudeva* (*Vasudevasya apatyaṁ pumān Vāsudevaḥ*). The name of *Kṛṣṇa's* father was *Vasudeva* So he is called *Vāsudeva. Vāsudeva* word generally denotes *Kṛṣṇa.* Really it is *Kṛṣṇa's* other name

Though this meaning of word *Vāsudeva* prevailing in vogue, yet this word became technical in Jainology. Hence *Vāsudeva* word is used for all half monarchs or half sovereings. (rulers of three deccan regions of India). According to Jain tradition, there became nine *Vāsudevas in* this *Avasarpiṇī kāla* (time era). The names of these are–1. *Triprstha,* 2 *Dwipṛṣṭha,* 3. *Swayambhū,* 4 *Puruṣottama,* 5 *Purusasingha,* 6. *Puruṣapunḍarīka* 7. *Datta,* 8. *Nārāyaṇa* (*Laxmaṇa*) and 9 *Krsna.* Among all these *Krsṇa* is the last *Vāsudeva.*

According to Jain tradition *Vāsudeva* is an appellation. As such, this technical term indicates the person who has seven gems, the ruler of three regions out of six regions (of India) and has many occult powers. According to Jain-view, *Vāsudeva,* conquering and killing *anti-Vāsudeva,* rules over three regions as only monarch.

Besides this, among twenty eight high occult powers, *Vāsudeva* is also considered as special occult power. To obtain this dignity is the fruition of *Vāsudeva* occult power.

Vāsudeva has enormous strength and power. *Jainācāryas* have described this strength and power by a simile–Sitting on the bank of a well and eating food there, the *Vāsudeva,* if binded by iron chains, sixteen thousand rulers with their fourfold army wish to pull him using their full power but cannot pull him; but if *Vāsudeva* wishes he can pull all of them towards himself easily by his only left hand, with the medium of the same iron chain.

The description of which *Śrī Krsṇa* we get in Jain holy scripture (*āgamas*) he is opulent with the same *Vāsudeva* occult power.

■ **Niyāṇa kaḍā**–*Nidānakṛta–Nidāna* is a special technical word of Jain tradition. Due to the rise of *infatuation karma* when the desire of worldly passionate passions becomes more eager then sage, nun, layman and lay woman make a sinful strong volition in heart that as the fruition of my austerity I must obtain such and such thing, it is called sinful resolution (*Nidāna*). Generally people term it in folk language as *niyāṇā.* Volition never brings bliss.

The person, who dies making a sinful resolution, even after getting the fruit according to that resolution, he cannot attain salvation. The appellation of *Vāsudeva* is the fruit of sinful strong volition made in previous birth. Hence, in the birth or existence of *Vāsudeva* no person can enter monk-order, giving up world.

For detailed study of sinful strong volition (*nidāna*) readers are suggested to see the book *Antakrddaśā Mahimā.*

सूत्र ६ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहं अरिट्ठणेमिं एवं वयासी—अहं णं भंते ! इओ कालमासे कालं किच्चा कहिं गमिस्सामि ? कहिं उववज्जिस्सामि ?

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—एवं खलु कण्हा ! तुमं बारवईए णयरीए सुर-ग्गि-दीवायण—कोवणिदड्ढाए अम्मा-पिइ-णियग-विप्पहूणे रामेण बलदेवेण सद्धिं दाहिणवेयालिं अभिमुहे जोहिट्ठिल्लपामोक्खाणं पंचण्हं पंडवाणं पंडुरायपुत्ताणं पासं पंडुमहुरं संपत्थिए कोसंबवणकाणणे णग्गोहवर-पायवस्स अहे पुढविसिलापट्टए पीयवत्थपच्छाइयसरीरे जराकुमारेणं तिक्खेणं कोदण्ड-विप्पमुक्केणं इसुणा वामे पाये विद्धे समाणे कालमासे कालं किच्चा तच्चाए वालुयप्पभाए पुढवीए जाव उववज्जिहिसि ।

सूत्र ६ :

तब कृष्ण वासुदेव अरिहन्त अरिष्टनेमि से इस प्रकार बोले—हे भगवन् ! यहाँ से काल के समय काल करके मैं कहां जाऊँगा, कहां उत्पन्न होऊँगा ?

इस पर अर्हन्त अरिष्टनेमि ने कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार कहा—हे कृष्ण ! सुरा, अग्नि और द्वैपायन के कोप के कारण इस द्वारका नगरी के जलकर नष्ट हो जाने पर और अपने माता-पिता एवं स्वजनों का वियोग हो जाने पर तुम राम-बलदेव के साथ दक्षिणी समुद्र तट की ओर पाण्डुराजा के पुत्र युधिष्ठिर प्रमुख (भीम, अर्जुन, नकुल और सहदेव) इन पांचों पाण्डवों

के समीप पाण्डु मथुरा की ओर जाओगे। रास्ते में विश्राम लेने के लिये कौशाम्ब वन उद्यान में अत्यन्त विशाल वटवृक्ष के नीचे, पृथ्वी शिलापट्ट पर, पीताम्बर ओढ़कर तुम सो जाओगे। उस समय (मृग के भ्रम में) जराकुमार द्वारा चलाया गया तीक्ष्ण तीर तुम्हारे बायें पैर में विद्ध होने से तुम पार्थिव शरीर का त्याग करोगे।

Maxim 6 :

Then *Kṛṣṇa Vāsudeva* spoke thus unto *Arihanta Ariṣṭanemi*–O *Bhagawan* ! Leaving this body at the time of death, where I ill go ? Where I will take birth ?

Arihanta Ariṣṭanemi said thus unto *Kṛṣṇa Vāsudeva*–O *Kṛṣṇa* ! *Dwārakā* city will be burnt and destroyed due to the causes–wine, fire and wrath of *Dwaipāyana* and at the same time your parents and family members will also be bereaved. Then you with *Rāma–Baladeva* will start to go towards deccan coast of sea and the city of *Pāṇḍumathurā*, in the presence of *Yudhiṣṭhira* (elder) (*Bhīma, Arjuna, Nakula, Sahadeva*). the five sons of king *Pāṇḍu*–five *Pāṇḍavas*. In the way you will reach *Kośāmbī* forest. For taking rest you will sleep under a huge banyan tree, and on a stone-rock covering your body with a yellow robe. At that time, you will be pierced in the left foot by a sharp arrow released from the bow (in the delusion of a deer) of *Jarā Kumāra*. Thus you will leave this body.

विवेचन

द्वारका विनाश एवं श्रीकृष्ण के देहत्याग का वृत्तान्त

प्रचलित कथा के अनुसार कहा जाता है कि मदिरा को द्वारका विनाश का कारण जान कर कृष्ण वासुदेव ने सम्पूर्ण द्वारका में मद्य-निषेध कर दिया तथा बची-खुची मदिरा नगर के बाहर फिंकवा दी।

एक बार कुछ यादव कुमार घोड़े लेकर घूमने गये। प्यास लगी तो उन्होंने गड्ढे में पड़ी हुई शराब पी ली। वहीं द्वैपायन ऋषि तप युक्त ध्यान कर रहे थे। मदिरा के नशे में उन्मत्त यादव कुमार उनके ऊपर घोड़े कुदाने लगे, तथा कहीं एक मरा सर्प पड़ा था, उन्होंने उसे फेंककर ऋषि के गले में डाल दिया और ऋषि को प्रताड़ित किया।

इस अभद्रतापूर्ण दुर्व्यवहार से द्वैपायन ऋषि क्रोधित हो गये। उन्होंने क्रोधावेश में निदान कर लिया कि "यदि मेरी तपस्या का कोई फल हो तो मैं द्वारका नगरी को जलाकर भस्म कर दूँगा और सभी यादवों का विनाश कर डालूँगा।"

श्रीकृष्ण वासुदेव को ज्ञात हुआ तो उन्होंने ऋषि से क्षमा मांगी और निदान त्यागने की प्रार्थना की, परन्तु ऋषि ने निदान नहीं त्यागा, केवल इतना ही कहा कि "तुम दोनों भाई बच जाओगे।"

श्रीकृष्ण वासुदेव ने इस विनाश से बचने का उपाय पूछा तो एक ज्ञानी मुनि ने बताया–जब तक द्वारका में आयम्बिल तप होता रहेगा, कोई भी देव-दानव इसका विनाश नहीं कर सकेगा।

श्रीकृष्ण वासुदेव ने पूरे नगर में ऐसी समुचित व्यवस्था कर दी कि प्रतिदिन आयम्बिल तप चलता ही रहे। निदानानुसार द्वैपायन ऋषि अग्निकुमार जाति के देव बना। वह पूर्व वैर का स्मरण करके द्वारका-दाह का अवसर देखने लगा, परन्तु प्रतिदिन की आयंबिल तपस्या के प्रभाव के सामने उसका कोई जोर नहीं चलता था। वह द्वारका नगरी को जलाने में असफल रहा, तथापि उसने प्रयत्न नहीं छोड़ा, लगातार बारह वर्षों तक उसका यह प्रयत्न चलता रहा।

बारह वर्षों के बाद द्वारका के कुछ लोग सोचने लगे–तपस्या करते-करते वर्षों व्यतीत हो गए, अब द्वैपायन (अग्निकुमार) हमारा क्या बिगाड सकता है ? इसके अतिरिक्त कुछ लोग यह भी सोच रहे थे कि द्वारका के सभी लोग तो आयंबिल कर ही रहे हैं, यदि हम लोग न भी करें तो इससे क्या अन्तर पड़ता है ?

समय की बात ही समझिए कि द्वारका में एक दिन ऐसा आ गया जब किसी ने भी आयम्बिल तप नहीं किया। व्यक्तिगत स्वार्थ एवं प्रमाद के कारण संकट-मोचक आयम्बिल तप से सभी विमुख हो गये।

अग्निकुमार द्वैपायन देव के लिये इससे बढ़कर और कौन-सा अवसर हो सकता था। उसने द्वारका में अग्नि-वर्षा प्रारम्भ कर दी। चारो ओर भयंकर शब्द होने लगे, जोर की आंधी चलने लगी, भूचाल से मकान धराशायी होने लगे, अग्नि की धधकती ज्वालाओं ने सारी द्वारका को अपनी लपेट में ले लिया। श्रीकृष्ण वासुदेव ने अग्नि शान्त करने के अनेकों प्रयत्न किए, परन्तु कर्मों का ऐसा प्रकोप चल रहा था कि आग पर डाला जाने वाला पानी तेल का काम कर रहा था। पानी डालने से आग शान्त होती है, पर उस समय ज्यों-ज्यों पानी डाला जाता था, त्यों-त्यों अग्नि और अधिक भड़कती थी। अग्नि की भीषण ज्वालाएं मानों गगन को भी भस्म करने का प्रयास कर रही थीं।

कृष्ण वासुदेव, बलराम सब निराश थे। उनके देखते-देखते द्वारका जल गई, वे उसे बचा नहीं सके।

चित्रक्रम २१ :

अग्निकुमार (द्वैपायन) द्वारा द्वारका विनाश

(भगवान अरिष्टनेमि द्वारा कथित भविष्य का दृश्य)

अग्निकुमार (द्वैपायन) ने द्वारका मे अग्निवर्षा की । राजमहल व अन्य भवन आदि धू-धू कर जल उठे । वासुदेव श्रीकृष्ण व बलराम ने माता-पिता को जलते महलो से निकालकर रथ में बैठाया। अश्वशाला जल जाने से घोडे भी नहीं मिले तो दोनों भाई स्वयं ही रथ मे जुत गए। रथ लेकर नगर के सिंहद्वार से जैसे ही बाहर निकले कि जलता हुआ द्वार टूट कर गिर पडा । तत्काल वसुदेव-देवकी की मृत्यु हो गई । यह अत्यन्त कारुणिक दृश्य देखकर दोनो भाई व्यथित हो गये ।

(अन्य ग्रन्थो के अनुसार) (वर्ग ३/अध्य. ८)

Illustration No. 21 :

Destruction of Dwārakā by fiery god (Dwaipayanā)

[The scene which was foretold by Bhagawāna Aristanemi]

Fiery god (*Dwaipāyana*) rained the flames of fire on *Dwarakā* city Royal palace and other buildings began to burn *Vāsudeva Śrī Krsna* and *Balarāma* taking out parents from burning palace, made to sit down in chariot, could not get horses then both the brothers themselves began to draw chariot like horses As soon as step forward the main gate of the city, the burning main gate fell down The same moment *Vasudeva–Devakī* died Seeing this pitiable scene both the brothers worried much.

(According to other scriptures) (Sec 3/Ch 8)

असुर
अग्नि कुमार
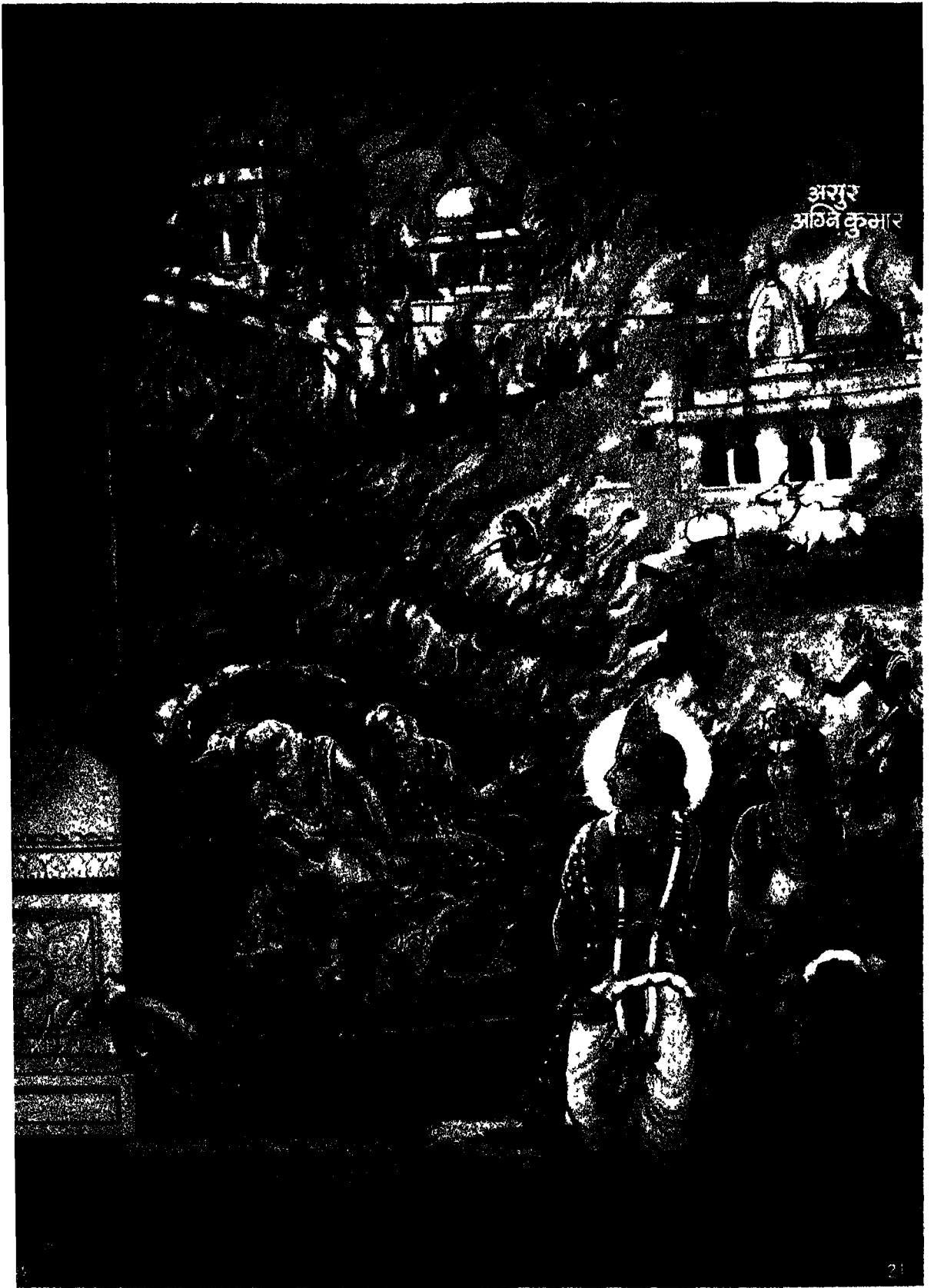
द्वारका के दग्ध हो जाने पर कृष्ण वासुदेव और बलराम वहां से जाने की तैयारी करने लगे। इसी बात को "सुर-दीवायण-कोवनिदड्ढाए" इस पद से अभिव्यक्त किया है।

आगम का दूसरा वाक्य है–"**अम्मा-पिइनियग-विप्पहूणे**"–अम्बापितृ-निजकविप्रहीण :–अर्थात् माता-पिता और अपने सम्बन्धियों से रहित। कथाकारों का कहना है कि जब द्वारका नगरी जल रही थी तब कृष्ण वासुदेव और उनके बड़े भाई बलराम दोनों आग बुझाने की चेष्टा कर रहे थे, पर जब वे सफल नहीं हुए तब अपने महलों में पहुँचे और अपने माता-पिता को बचाने का प्रयत्न करने लगे। बड़ी कठिनाई से माता-पिता को महल से निकालने में सफल हुए। इनका विचार था कि माता-पिता को रथ में बिठा कर किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दिया जाए। अपने विचार की पूर्ति के लिए श्रीकृष्ण जब अश्वशाला में पहुँचे तो देखते हैं, अश्वशाला नष्ट हो चुकी है। वे वहां से चले, रथशाला में आए। रथशाला में आग लगी हुई थी, किंतु एक रथ उन्हें सुरक्षित मिल गया। वे तत्काल उसी को बाहर ले आये, उस पर माता-पिता को बैठाया। घोडों के स्थान पर दोनों भाई स्वयं जुत गये पर जैसे ही सिंहद्वार को पार करने लगे और रथ का जुआ और दोनों भाई द्वार से बाहर निकले ही थे कि तत्काल द्वार का ऊपरी भाग टूट पड़ा और माता-पिता उसी के नीचे दब गए। उनका देहान्त हो गया। वासुदेव कृष्ण तथा बलराम से यह मार्मिक भयंकर दृश्य देखा नहीं गया। वे माता-पिता के वियोग से अधीर हो उठे। जैसे-तैसे उन्होंने अपने मन को संभाला, माता-पिता तथा अन्य सम्बन्धियों के वियोग से उत्पन्न महान् संताप को धैर्यपूर्वक सहन किया।

द्वारका नगरी के दग्ध हो जाने पर कृष्ण बड़े चिन्तित थे। उन्होंने बलराम से कहा–औरों को शरण देने वाला कृष्ण आज किस की शरण में जाये ?

इसके उत्तर में बलराम कहने लगे–पाण्डवों की आपने सदा सहायता की है, उन्हीं के पास चलना ठीक है।

उस समय पाण्डव हस्तिनापुर से निर्वासित होकर पाण्डुमथुरा में रह रहे थे। उनके निर्वासन की कथा ज्ञाताधर्मकथा से जान लेनी चाहिए।

बलराम की बात सुनकर कृष्ण बोले–जिनको सहारा दिया हो, उनसे सहारा लेना लज्जास्पद है, फिर सुभद्रा (अर्जुन की पत्नी) अपनी बहन है। बहन के घर रहना भी शोभास्पद नहीं है।

कृष्ण की तर्कसंगत बात सुनकर बलराम कहने लगे–भाई ! कुन्ती तो अपनी बुआ है, बुआ के घर जाने में अपमान की कोई बात नहीं।

अन्त में कृष्ण की अनिच्छा होने पर भी बलराम कृष्ण को साथ लेकर दक्षिण समुद्र तट पर बसी पांडवों की राजधानी पाण्डुमथुरा की ओर चल दिए।

सूत्रकार ने प्रस्तुत सूत्र में जो "**दाहिणवेयालिं अभिमुहे पंडुमहुरं संपत्थिए**" ये पद दिये हैं ये उक्त कथानक की ओर ही संकेत कर रहे हैं।

"जराकुमारेणं"—का अर्थ है जराकुमार ने। जराकुमार यादववंशीय एक राजकुमार था, जो वासुदेव श्रीकृष्ण का भाई था। भगवान् अरिष्टनेमि ने भविष्यवाणी करते हुए कहा था कि जराकुमार के बाण से वासुदेव की मृत्यु होगी। यह जानकर जराकुमार को बड़ा दुःख हुआ। उसने निश्चय किया कि मैं द्वारका छोड़कर दूर कोशाम्रवन में चला जाता हूँ, वहीं जीवन के शेष क्षण व्यतीत कर दूँगा। इससे श्रीकृष्ण की मृत्यु का कारण बनने से बच जाऊँगा।

अपने निश्चय के अनुसार वह कोशाम्रवन में रहने लगा था। पर भवितव्यता को कौन टाल सकता था ? द्वारका के जल जाने पर श्रीकृष्ण अपने बड़े भाई बलराम के साथ पाण्डुमथुरा जा रहे थे। रास्ते में कोशाम्रवन आया। श्रीकृष्ण को प्यास लगी, बलराम पानी लेने चले गये। तत्पश्चात् श्रीकृष्ण एक वृक्ष के नीचे पीत पस्त्र ओढ़कर विश्राम करने लगे। उनका एक पांव दूसरे पांव पर रखा हुआ था।

वासुदेव के पांव में पद्म-मणि होती है। दूर से जैसे मृग की आँख चमकती है ठीक उसी प्रकार श्रीकृष्ण के पांव में पद्म-मणि चमक रही थी।

उधर जराकुमार उसी वन में भ्रमण कर रहा था। उसे किसी शिकार की खोज थी। जब वह वट वृक्ष के निकट आया तो उसे दूर से ऐसा लगा जैसे कोई मृग बैठा है। उसने तत्काल धनुष पर बाण चढ़ाया, और छोड दिया। बाण लगते ही श्रीकृष्ण छटपटा उठे। उनके मुख से एक चीत्कार निकली। उन्हें ध्यान आया कि बाण कहीं जराकुमार का तो नहीं ? उधर चीत्कार सुनते ही जराकुमार भी दौड़कर आया, देखा, फूट-फूटकर रोने लगा। जराकुमार को सामने देखकर श्रीकृष्ण ने कहा—

"जराकुमार ! तुम्हारा इसमें क्या दोष है ? भवितव्यता ही ऐसी थी। भगवान् अरिष्टनेमि की भविष्यवाणी अन्यथा कैसे हो सकती थी ? बलराम के आने का समय हो चुका है, अतः तुम यहा से भाग जाओ, अन्यथा बलराम के हाथों से तुम बच नहीं सकोगे।"

जिस अधम कार्य से जराकुमार बचना चाहता था, जिस पाप से बचने के लिए उसने द्वारका नगरी को छोड़कर कोशाम्रवन का वास अंगीकार किया था, उसी पाप को अपने हाथों से होते देखकर उसका हृदय रो पड़ा। पर क्या कर सकता था?

बलराम के आने तक श्रीकृष्ण देह त्याग कर चुके थे।

Elucidation

Description of Dwārakā-Destruction and Body-releasement by Śrī Kṛṣṇa

According to prevailing narrative, it is said that knowing wine as the cause of *Dwārakā*-destruction *Śrī Kṛṣṇa* announced wine-prohibition in whole

कोशाम्रवन में श्री कृष्ण

जराकुमार

बाण बेध

चित्रक्रम २२ :

कोशाम्र वन में श्रीकृष्ण (श्रीकृष्ण अवसान का दृश्य)

दृश्य १—द्वारका दग्ध हो जाने पर अत्यन्त खिन्न हुए बलराम-श्रीकृष्ण दक्षिण समुद्रतट पर बसी पॉडु मथुरा की ओर जाते हुए मार्ग मे कोशाम्र वन मे पहुँचे। विशाल वट वृक्ष के नीचे विश्राम करने लगे । तीव्र प्यास से गला सूखने पर श्रीकृष्ण ने बलराम को हाथ का सकेत कर पानी के लिए कहा । बलराम ने कहा—मै अभी कही से जल लेकर आता हूँ । श्रीकृष्ण एक पॉव पर दूसरा पाँव रखे लेटे हुए है । उनके पॉव मे पद्म मणि चमक रही है।

दृश्य २—जराकुमार वन मे शिकार की खोज करता हुआ उसी वन मे आता है । श्रीकृष्ण के पॉव मे चमकती पद्म मणि देखकर उसे मृग की चमकती आँख की भ्रान्ति हो गई, उसने धनुष पर बाण चढाकर निशाना लगाया । तीक्ष्ण बाण वासुदेव श्रीकृष्ण के पैर मे लगते ही वे एक तीखी चीत्कार के साथ भूमि पर गिर पडे । (वर्ग ३/अध्य ८)

Illustration No. 22 :
Śrī Krṣna in Kośāmra Forest

(Scene of body bereavement by Śrī Krsna)

Scene 1 After burning *Dwārakā*, *Śrī Krsna* and *Balarāma*, became more disappointed and going towards the city *Pāndu-mathurā*, situated at the deccan coast of sea reached *Kośāmra* forest For taking rest *Śrī Krsna* lie down on a rock under a huge banyan tree covering his body with yellow cloth By the indication of hand he told *Balarāma* that I am keenly thirsty, *Balarāma* went to take water, *Śrī Krsna* is lying down keeping his one leg over the knee of other leg *Padma* is shining in his foot

Scene 2 *Jarākumāra* searching prey comes to the same forest Looking the shining *Padma* in the foot of *Śrī Krsna*, he take it the eye of a deer, thus delusioned He shot an arrow taking the aim Pierced by sharp arrow a cry came out the mouth of *Śrī Krsna* and he left his body (Sec 3/Ch 8)

Dwārakā city and remaining quantity of wine he ordered to throw away out of the city. So the wine has been thrown away in hills surrounding *Dwārakā* city. That wine accumulated in ditches of mountain

Once some princes riding on horses went out of city for a walk Being thirsty princes drank up that wine. Nearby *Dwaipāyana* penancer was sitting in deep meditation. *Yādava* princes became fanatic due to intoxication of wine. As they saw penancer *Dwaipāyana*, they filled with anger bearing in mind that this penancer will destroy our beautiful city so he should be murdered just now. They cause their horses to jump over penancer, corpse of a snake was lying down there, the princes put it round the neck of penancer and began to beat him cruelly and when penancer became like half-dead, those princes returned to the city, thinking that now the penancer will die

Due to cruel beating, and even without any cause the anger of *Dwaipāyana* penancer raised to highest degree He made a firm sinful volition–If there is any consequence of my penance, then I must kill all the *Yādavas* and burn this *Dwārakā* city to ashes.

As soon as, *Śrī Krsna* became aware of this painful event, he quickly reached to penancer, with his elder brother *Balarāma Śrī Krsna* begged pardon for the offence of princes and requested that he should vomit his volition. Being satisfied by the courtesy of *Śrī Kṛṣṇa*, penancer *Dwaipāyana* assured him that you and your elder brother–both will go sefely out of city; but I (*Dwaipāyana*) will not vomit my volition. Thus saying penancer *Dwaipāyana* died and took birth in the class of fiery gods (*Agnikumāra* god) Both the brothers, being disappointed returned from there

Śrī Kṛṣna asked a wise sage, the device to save *Dwārakā* then the sage said–Until *Āyambila* penance will be regularly practised in *Dwārakā* city by its inhabitants, no god or demon can destroy it.

Accordingly *Śrī Krsṇa* made an announcement in the city that *Āyambila* penance should remain continue. Citizens followed the announcement of ruler.

Dwaipāyana penancer becoming fiery god, remembering his previous birth's enmity came to *Dwārakā* to burn it, but he cannot fulfil his evil desire due to the mighty force of *Āyambila* penance.

Although *Dwaipāyana* fiery god could not burn *Dwārakā* at that time but he did not quit his efforts. He continually waited for twelve years to avail any opportunity to fulfil his desire.

Time of twelve years was very long. Citizens of *Dwārakā* began to think otherwise—A long period of twelve years has been passed practising *Āyambila* penance continually. Now that fiery god *Dwaipāyana* can how hazard us ? He must have been disappointed and gone elsewhere.

Thinking of some other citizens was like this—All the other citizens are practising *Āyambila* penance. If we some persons do not practise the penance what difference will it make ?

Lo, such a day arrived that all the citizens of *Dwārakā* became disinclined to obstacle remover *Āyambila* penance.

This was the best opportunity for fiery god *Dwaipāyana.* He availed this fully

Fire began to pour from sky, frightful voices echoed all directions, stormy winds blowed up, houses began to fall due to earth quack, very soon the tremendous flames of fire galloped the whole city *Dwārakā.*

Vāsudeva Kṛṣṇa did many efforts to extinguish fire, but the agitation of *karmas* was so forceful and hazardous that water thrown on fire was proving as oil. Though water quenches fire, but at that time as much as water was poured so much more fire went on increasing. It seemed that high raising flames of fire trying to burn the sky. *Kṛṣṇa Vāsudeva* and *Balarāma*—both brothers were disappointed *Dwārakā* burnt to ashes before their eyes, but they could not save it.

After burning *Dwārakā* to *ashes Krsṇa* and *Balarāma* made preparations to go from there. This has been elaborated by these words (*Sura Dīwāyana* kova *ṇidaḍdhāye*)

Ammā - pi 'i' - ṇiyaga- Vippahūne— (*Ambāpitra- Nijaka- Viprahīṇah*)— meaning bereaved from mother-father and relatives. Folklorists assert—When *Dwārakā* city was burning, then *Krsṇa Vāsudeva* and his elder brother *Balarāma*—both were trying to quench fire, but they could not succeed in their efforts, then they reached to their palace and began to save their parents. With very difficulty they could take out their parents from palace. Their idea was that riding on a chariot the parents may be taken to a safe place. For fulfilling this purpose *Śrī Kṛṣṇa* reached to his stable (*aśwaśālā*). There he saw stable has been burnt up Sooner he started from there and reached to chariot-shelter. It was also burning: but one chariot was safe. Quickly he took out that chariot. Making parents sit in it both brothers began to draw it like horses. As soon as they cross the main gate, the upper part of the gate fell down. Parents died under it. Both brothers could not see

such a painful scene. They became very much restless due to bereavement of parents. Anyhow they hold up themselves and tolerated the great distress caused by the death of parents and relations.

Śrī Kṛṣṇa was too much worried by burning *Dwārakā* city. He said to *Balarāma*–Patron (shelter-giver) of others, take whose shelter today ?

Balarāma suggested–You have always helped *Pāṇḍavas*. It would be proper to go there.

At that time *Pāṇḍavas*, exiled from *Hastināpura*, were residing at *Pāṇḍumathurā*.

The episode of *Pandavas'* exilement from *Hastināpura* should be known from *Jñātādharmakathā Sūtra*

Hearing the suggestion of *Balarāma*, *Śrī Kṛṣṇa* spoke thus unto him–It is shameful to seek shelter from those, to whom I have given shelter, *Subhadrā* (wife of *Arjuna*) is our sister. To live in sister's house is not praiseworthy.

Hearing the proper clue of *Śrī Kṛṣṇa*, *Balarāma* said–Dear brother ! *Kuntī* is our father's sister (aunt–*Bhuvā–Phūphī*). There is nothing disgraceful to go and live in aunt's home.

Though *Śrī Kṛṣna* was unwilling but *Balarāma* proceeded towards the capital city of *Pāndavas*, *Pāndumathurā*, which was situated at the deccan coast of the sea, taking *Śrī Krsna* with him.

The scripturist has given the words–'*dāhinaveyālie abhimuhe panḍumahuraṁ sampatthiye* These words are indicating towards this very episode.

■ The word *Jarākumārenaṁ* means *Jarā Kumāra* himself or by *Jarākumāra*. *Jarākumāras* was a prince in *Yādava* tradition or lineage, who was brother of *Śrī Kṛṣṇa*. *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, told in his forecast that the death of *Śrī Kṛṣṇa* will happen by the arrow of *Jarākumāra*. Knowing this *Jarākumāra* grieved much. He decided–I will go to *Kośāmravana* (forest) leaving *Dwārakā* and there I will reside till death and thus I will not be the cause of death of *Śrī Kṛṣṇa*.

According to his decision *Jarākumāra* began to live in *Kośāmra* forest. But who can challenge the destined destiny ?

After burning *Dwārakā*, *Śrī Kṛṣṇa* was going to *Pāṇḍumathura*. On the way there was *Kośāmba* forest. *Kṛṣna* felt eager thirst. *Balarāma* went to bring

water. *Kṛṣṇa* began to take rest under a huge banyan tree lying down on a slab of stone and covering his body by an yellow robe. He had put his one leg on the other leg. Every *Vāsudeva* has *padma-mani* in his foot. From far as eye of deer shines such was the shining of the *padma-mani* in the foot of *Śrī Kṛṣṇa*. *Jarākumāra* was wandering in the same forest. He was in the search of prey. When he came near that huge banyan tree, then from far, it seemed to him that a deer is sitting under the tree. At once he put a sharp arrow on the bow and released it with his full strength. As the arrow pierced the foot of *Śrī Krsna* he lossed and trembled about A painful cry came out of his mouth. He thought lest this arrow may be of *Jarākumāra*. Hearing that painful human cry *Jarākumāra* also came there almost running and began to weep bitterly. Seeing *Jarākumāra* in front, *Śrī Krsṇa* said to him–

Jarākumāra ! What is your fault in it ? It was such destined. How could be otherwise the forecast of *Bhagawāna Arisṭanemi*. *Balarāma* is about to reach here You quickly run away from here, otherwise you cannot remain alive. *Balarāma* will definitely kill you.

Jarākumāra wanted to escape from the meanest deed and for this he left *Dwārakā* and accepted to live in *Kośāmra* forest, the same sin occurred by his own hands He began to weep bitterly But what can be done now ? Done cannot be undone.

Śrī Krsna has released his body, before *Balarāma* returned

सूत्र ७ :

तए णं कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म ओहय जाव झियाइ ।

कण्हाए ! अरहा अरिट्ठनेमी कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—मा णं तुमं देवाणुप्पिया ! ओहय जाव झियाहि ।

एवं खलु तुमं देवाणुप्पिया ! तच्चाओ पुढवीओ उज्जलियाओ अणंतरं उव्वट्टित्ता इहेव जंबुद्दीवे-दीवे भारहे वासे आगमिस्साए उस्सप्पिणीए पण्डेसु जणवएसु सयदुवारे बारसमे अममे णामं अरहा भविस्ससि । तत्थ तुमं बहूइं वासाइं केवलपरियायं पाउणित्ता सिज्झिहिसि ।

सूत्र ७ :

अर्हत् अरिष्टनेमि के श्रीमुख से यह वृत्तान्त सुनकर कृष्ण वासुदेव खिन्न मन होकर आर्तध्यान करने लगे ।

तब अरिष्टनेमि ने पुनः इस प्रकार कहा—हे देवानुप्रिय ! तुम (खिन्न मन होकर) आर्त्तध्यान मत करो । निश्चय ही हे देवानुप्रिय ! कालान्तर में तुम इसी जंबूद्वीप के भरत क्षेत्र में आने वाले उत्सर्पिणी काल में पुण्ड्र जनपद के शतद्वार नाम के नगर में "अमम" नाम के बारहवें तीर्थंकर बनोगे। वहां बहुत वर्षों तक केवली पर्याय का पालन कर तुम सिद्ध-बुद्ध-मुक्त हो जाओगे ।

Maxim 7 :

Then *Kṛṣṇa Vāsudeva* having heard and listened to this whole matter from *Arhat Ariṣṭanemi*, with his all hopes laid low, drowned deep in ill-thoughts-considerations.

Then *Arhat Ariṣṭanemi* said again–O beloved as gods ! Do not brood with all hopes laid low. Definitely O beloved as gods ! after a definite period of time in this *Jambūdvīpa* this *Bharataksetra*, in forthcoming *Utsarpiṇī* time era, in *Śatadwāra* city of *Pundra* area you would be twelfth *tīrthaṁkara* named *Amama*. There you will wander as omniscient (*kevalin*) and then will be beatified, attain salvation.

सूत्र ८ :

तए णं से कण्हे वासुदेवे अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ अप्फोडेइ; अप्फोडित्ता वग्गइ; वग्गित्ता तिवइं छिंदइ; छिंदित्ता सीहणायं करेइ; करित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ नमंसइ; वंदित्ता नमंसित्ता तमेव अभिसेक्कं हत्थिरयणं दुरूहइ; दुरूहित्ता जेणेव बारवई णयरी जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए ।

अभिसेयहत्थिरयणाओ पच्चोरुहइ । पच्चोरुहित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सए सीहासणे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे णिसीयइ; णिसीइत्ता कोडुंबियपुरिसे सद्दावेई; सद्दावित्ता एवं वयासी—गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए सिंघाडग जाव उग्घोसेमाणा एवं वयह—

एवं खलु देवाणुप्पिया ! बारवईए णयरीए दुवालसजोयणआयामाए जाव पच्चक्खं देवलोग-भूयाए सुरग्गि-दीवायणमूले विणासे भविस्सइ; तं जो णं देवाणुप्पिया इच्छइ बारवईए णयरीए राया वा, जुवराया वा, ईसरे, तलवरे, माडंबिए, कोडुंबिए, इब्भे, सेट्ठी वा, देवी वा, कुमारो वा, कुमारी वा, अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुण्डे जाव पव्वइत्तए, तं णं कण्हे वासुदेवे विसज्जेइ ।

पच्छाउरस्स वि य से अहापवित्तं वित्तिं अणुजाणइ । महया इड्ढी-सक्कार-समुदएण य से णिक्खमणं करेइ । दोच्चं पि तच्चं पि घोसणयं घोसेह, घोसित्ता मम एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह ।

तए णं ते कोडुंबिय पुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ।

सूत्र ८ :

अर्हन्त प्रभु के मुख से अपने उज्ज्वल भविष्य का यह वृत्तान्त सुनकर कृष्ण वासुदेव आनन्द विभोर हो उठे और हर्षावेश में अपनी भुजा पर ताल ठोकने लगे । फिर जयनाद किया । उसके बाद त्रिपदी का छेदन अर्थात् तीन कदम पीछे हटकर सिंहनाद किया । फिर भगवान अरिष्टनेमि को वंदन नमस्कार करके अपने अभिषेक योग्य (उत्सव के समय जिसका अभिषेक-तिलक किया जाय) प्रधान हस्तिरत्न पर बैठे तथा द्वारका नगरी के मध्य होते हुए अपने राजप्रासाद में आ गये ।

हाथी से नीचे उतरे, और फिर जहां बाहर की उपस्थानशाला (राजसभा) थी, जहां अपना सिंहासन था, वहां आये । वे सिंहासन पर पूर्वाभिमुख

विराजमान हुए, फिर अपने आज्ञाकारी पुरुषों. राजसेवकों को बुलाकर इस प्रकार बोले–

हे देवानुप्रियो ! तुम द्वारका नगरी में शृंगाटक यावत् चौराहों आदि सभी राजमार्गों पर जाकर मेरी इस आज्ञा की घोषणा (प्रचारित) करो कि–

"(हे द्वारकावासी नगरजनो) इस बारह योजन लम्बी यावत् प्रत्यक्ष देवलोक के समान द्वारका नगरी का सुरा, अग्नि एवं द्वैपायन के कारण एक दिन विनाश होगा, इसलिये हे देवानुप्रियो ! द्वारका नगरी में जिसकी भी इच्छा हो, राजा हो, युवराज हो, ईश्वर (स्वामी या मंत्री) हो, तलवर (राजा का प्रिय अथवा राजा के समान) हो, माडम्बिक (छोटे गांव का स्वामी) हो, कौटुम्बिक (दो या तीन कुटुम्बों का स्वामी) हो, इभ्य सेठ हो, रानी हो, कुमार हो, या कुमारी हो, राजरानी हो या राजपुत्री हो, इनमें से जो भी भगवान अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर यावत् दीक्षा लेना चाहता हो, उसको कृष्ण वासुदेव ऐसा करने की सहर्ष आज्ञा देते हैं ।

दीक्षार्थी के पीछे उनके आश्रित सभी कुटुम्बीजनों की भी श्रीकृष्ण वासुदेव यथायोग्य व्यवस्था करेंगे और ऋद्धि सत्कार के साथ उसका दीक्षा महोत्सव भी वे ही सम्पन्न करेंगे ।" इस प्रकार दो-तीन बार घोषणा कर मुझे वापिस सूचित करो ।

कृष्ण वासुदेव का आदेश पाकर उन आज्ञाकारी राजपुरुषों ने वैसी ही घोषणा दो तीन-बार करके लौट कर इसकी सूचना कृष्ण को दी ।

Maxim 8 :

Having heard and listened to this matter of his own most brilliant future *Kṛṣṇa Vāsudeva* became very much glad. In the emotion of happiness he clapped his arms, broke into a three step and roared like a lion, and then bowing down and praising–woshipping *Arhat Ariṣṭanemi*, rode up on his own excellent, worthy for royal emblem elephant and moving through the middle of *Dwārakā* came to his own palace.

Then he got down from his excellent elephant, went to the outer audience chamber, came to and sat on his throne with face in eastern direction and then calling his chamberlains and state-servants spoke thus–

O beloved as gods ! you go and declare my proclamation at the open places, fourways, three ways etc; of *Dwārakā* city, that–

O the citizens of *Dwārakā* ! This twelve *yojana* long and nine *yojana* broad, like heaven *Dwārakā* city will be destroyed any day due to wine, fire and *Dwaipāyana* penancer. Therefore, O beloved as gods ! if any person whether he may be a king, heir apperant, minister or lord (*Īśwara*), dear to king or like a king (*talawara*) baron (lord of a small village), head of two or three families (*Koṭumbika*), banker–too much wealthy person, queen, prince, maiden, princess, queen of a king, daughter of a king–among these any body intends to enter the sage order of *Bhagawāṇa Ariṣtanemi* being shaven head and consecrated, *Śrī Kṛṣna* gladly allows to such persons to do so. *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* will himself celebrate his consecration with great splendour and gathering *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* also holds responsibility of the protectionless family members of the consecrated persons He will provide all necessities and comforts to those family members.

O beloved as gods (chamberlains) ! Proclaim this proclamation twice and thrice at all the places and report me.

Hearing the order of *Kṛṣṇa Vāsudeva* the chamberlains twice and thrice proclaimed this proclamation and reported him.

सूत्र ९ :

तए णं सा पउमावई देवी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियया अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ; वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी–

'सद्दहामि णं भंते ! णिग्गंथं पावयणं से जहेयं तुब्भे वयह, जं णवरं देवाणुप्पिया ! कण्हं वासुदेवं आपुच्छामि, तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए मुण्डा जाव पव्वयामि ।'

'अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ।'

सूत्र ९ :

इसके बाद उधर पद्मावती महारानी भगवान् अरिष्टनेमि का धर्मोपदेश सुनकर एवं उसे धारण करके बड़ी प्रसन्न हुई, उसका हृदय प्रफुल्लित हो उठा यावत् वह अर्हन्त अरिष्टनेमि को वंदना नमस्कार कर इस प्रकार बोली–

हे भगवन् ! निर्ग्रन्थ प्रवचन पर मैं श्रद्धा करती हूँ। आप जैसा कहते हैं वह तत्व वैसा ही है । (आपका धर्मोपदेश यथार्थ है) हे भगवन् ! मैं कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर देवानुप्रिय के पास मुण्डित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ ।

भगवान ने कहा–हे देवानुप्रिये ! धर्म-कार्य में विलम्ब मत करो । जैसा तुम्हारी आत्मा को सुख हो वैसा करो ।

Maxim 9 :

On the other hand, queen *Padmāvatī* became much more glad and satisfied and took to her heart the sermon of *Bhagawāna Ariṣṭanemi*. Her heart filled with happiness, Bowng down and worshipping *Arihanta Ariṣṭanemi*, she spoke thus–

O *Bhagawan* ! I have faith in the *Nirgrantha pravacana* (doctrine). As you say, the fact is so. Your sermon is true to the fact. I intend to accept consecration with my shaven head in presence of you, by the permission of *Kṛṣṇa Vāsudeva*.

Bhagawāna said–O beloved as gods ! Do, as your soul feel happy. But do not delay in religious deed.

सूत्र १० :

तए णं सा पउमावई देवी धम्मियं जाणप्पवरं दुरूहइ । दुरूहित्ता जेणेव सए गिहे तेणेव उवागच्छइ उवागच्छित्ता धम्मियाओ जाणप्पवराओ पच्चोरुहइ; पच्चोरुहित्ता जेणेव कण्हे वासुदेवे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयल जाव कट्टु कण्हं वासुदेवं एवं वयासी—

इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अरहओ अरिट्ठणेमिस्स अंतिए मुंडा जाव पव्वयामि ।

(कण्हे-) अहासुहं देवाणुप्पिया !

तए णं से कण्हे वासुदेवे कोडुंबिए पुरिसे सद्दावेइ; सद्दावित्ता एवं वयासी—

खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! पउमावईए देवीए महत्थं णिक्खमणाभिसेयं उवट्ठवेह; उवट्ठवित्ता एयं आणत्तियं पच्चप्पिणह ।

तए णं ते कोडुंबिया जाव पच्चप्पिणंति ।

सूत्र १० :

उसके बाद पद्मावती देवी धार्मिक श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ होकर द्वारका नगरी में अपने भवन पर आई, धार्मिक रथ से नीचे उतरी और जहां कृष्ण वासुदेव थे वहां आकर दोनों हाथ जोड़कर कृष्ण वासुदेव से इस प्रकार निवेदन किया—

हे देवानुप्रिय ! अर्हत् अरिष्टनेमि का उपदेश सुनकर मेरा मन संसार से विरक्त हो गया है, अतः आपकी आज्ञा हो तो मैं अर्हत् अरिष्टनेमि के पास मुण्डित होकर दीक्षा ग्रहण करना चाहती हूँ ।

कृष्ण ने कहा—हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो ।

तब कृष्ण वासुदेव ने अपने आज्ञाकारी पुरुषों को बुलाकर इस प्रकार आदेश दिया—

हे देवानुप्रियो ! शीघ्र ही महारानी पद्मावती के लिये दीक्षा महोत्सव की विशाल तैयारी करो, और तैयारी हो जाने की मुझे वापस सूचना दो।

तब आज्ञाकारी पुरुषों ने वैसा ही किया और दीक्षा महोत्सव की तैयारी की सूचना उनको दी।

Maxim 10 :

After that riding on an excellent religious chariot *Padmāvatī Devī* came in *Dwārakā* city and in her palace. Riding off from chariot she came before *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* and folding her both hands spoke thus unto him–

O beloved as gods ! Having heard and listened to the sermon (religious discourse) of *Arhat Ariṣṭanemi* my mind became disinclined from world and worldly pleasures. Hence, if you permit me, I intend to tonsure my head and accept consecration in presence of *Arhat Ariṣṭanemi.*

Kṛṣṇa allowed her–Do, as you feel happy.

Then *Vāsudeva Kṛṣṇa* called his chamberlains and ordered them–

O beloved as gods ! Quickly make the enormous preparations of consecration ceremony of queen *Padmāvatī* and report me.

Chamberlains obeyed the order of *Vāsudeva,* made preparations according to his wishes and reported him.

सूत्र ११ :

तएणं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पट्टयं दुरूहइ, दुरूहित्ता अट्ठसएणं सोवण्णकलसेणं जाव णिक्खमणाभिसेणं अभिसिंचइ, अभिसिंचित्ता, सव्वालंकारविभूसियं करेइ; करित्ता पुरिससहस्सवाहिणीं सिवियं दुरूहावेइ; दुरूहावित्ता बारवईए णयरीए मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ, णिगच्छित्ता जेणेव रेवयए पव्वयए जेणेव सहस्संबवणे उज्जाणे तेणेव

उवागच्छइ, उवागच्छित्ता सिवियं ठवेइ ठवेत्ता, पउमावई देवी सिवियाओ पच्चोरुहइ ।

तए णं से कण्हे वासुदेवे पउमावइं देविं पुरओ कट्टु जेणेव अरहा अरिट्ठणेमी तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता, अरहं अरिट्ठणेमिं आयाहिणं पयाहिणं करेइ करित्ता, वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—

एस णं भंते ! मम अग्गमहिसी पउमावई णामं देवी इट्ठा, कंता, पिया, मणुण्णा, मणामा, अभिरामा, जीवियऊसासा, हिययाणंदजणिया उंबरपुप्फंविव दुल्लहा, सवणयाए किमंग ! पुण पासणयाए । तए णं अहं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणीभिक्खं दलयामि, पडिच्छंतु णं देवाणुप्पिया ! सिस्सिणीभिक्खं ।

अहासुहं !

तए णं सा पउमावई देवी उत्तरपुरच्छिमदिसिभागं अवक्कमइ अवक्कमित्ता सयमेव आभरणालंकारं ओमुयइ ओमुइत्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ, करित्ता जेणेव अरहा अरिट्ठणेमि तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अरहं अरिट्ठणेमिं वंदइ णमंसइ वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—आलित्ते णं भंते ! पलित्ते णं भन्ते ! लोए । जाव धम्ममाइक्खिउं ।

दीक्षा महोत्सव

सूत्र ११ :

इसके बाद कृष्ण वासुदेव ने पद्मावती को एक विशेष पट्ट पर बिठाया और एक सौ आठ सुवर्ण आदि कलशों से स्नान कराया यावत् दीक्षा—सम्बन्धी अभिषेक किया । फिर सभी प्रकार के अलंकारों से उसे विभूषित करके हजार पुरुषों द्वारा उठायी जाने वाली शिविका (पालकी) में बिठाकर द्वारका नगरी के मध्य होते हुए निकले और जहां रैवतक पर्वत और सहस्राम्र उद्यान था वहां आकर पालकी नीचे रखी। पद्मावती देवी पालकी से नीचे उतरी ।

चित्रक्रम २३ :

पद्मावती रानी का वैराग्य

भगवान अरिष्टनेमि की वाणी से प्रबुद्ध होकर श्रीकृष्ण की पटरानी पदमावती ने सयम लेने का निश्चय किया । आभरण अलकार त्याग कर स्वय मस्तक का लोच करके श्रमणी वेश धारण किया और प्रभु चरणो मे उपस्थित हो बोली–भन्ते ! जैसे कोई गृहस्थ अग्नि ज्वाला मे जलते हुए घर में से अपना बहुमूल्य रत्न करण्ड सुरक्षित निकालना चाहता है । उसी प्रकार मैं भी इस जन्म-मरण की ज्वाला मे जलते ससार से अपनी आत्मा को निकालना चाहती हूँ। आप मुझे दीक्षा प्रदान करे। श्रीकृष्ण वासुदेव दीक्षा की आज्ञा प्रदान कर रहे है। (वर्ग ५/अध्य १)

Illustration No. 23 :

Apathy of Queen Padmāvatī

Enlightened, hearing the sermon of *Bhagawana Aristanemi*, *Padmāvatī*, queen of *Śrī Krsna*, decided to accept consecration Putting off ornaments etc , she tonsured her head by her own hands, put on the nun-cloths and coming to the lotus feet of *Prabhu* spoke thus unto him–*Bhagawan* ! As any householder desires to take out his gem-box safely from the burning house So I wish to take out my own soul safely from the world which is burning by flames of births and deaths Please consecrate me *Śrī Krsna* is permitting her for consecration (Sec 5/Ch 1)
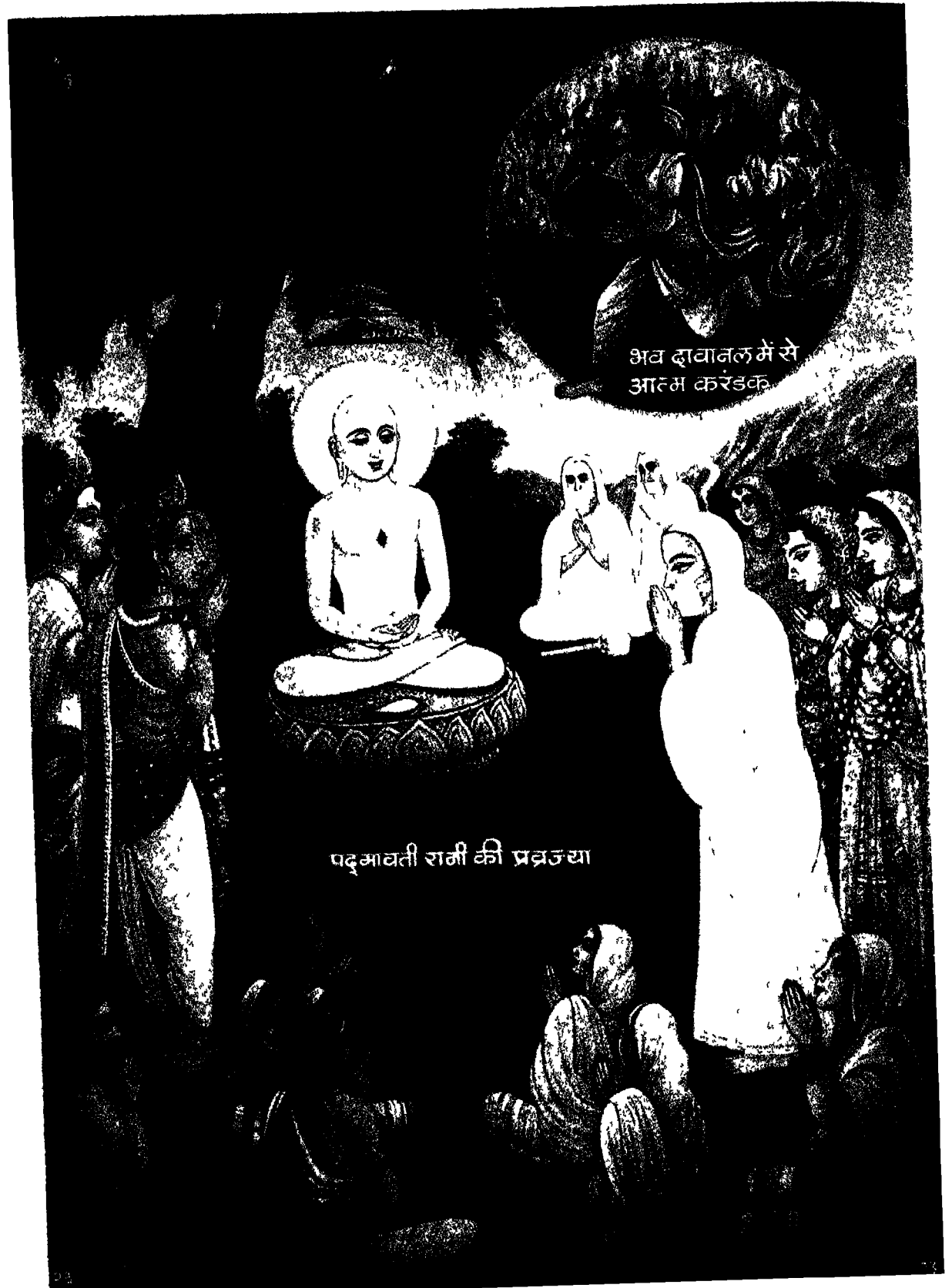
भव दावानल में से
आत्म करंडक

पद्मावती रानी की प्रव्रज्या

फिर कृष्ण वासुदेव पद्मावती महारानी को आगे करके भगवान अरिष्टनेमि के पास आये और तीन बार प्रदक्षिणा करके वंदन नमस्कार किया । वंदन नमस्कार करके इस प्रकार बोले–

हे भगवन् ! यह पद्मावती देवी मेरी पटरानी है, यह मेरे लिए इष्ट, कान्त, प्रिय एवं मनोज्ञ है, और मन के अनुकूल चलने वाली है, अभिराम (सुन्दर) है । हे भगवन् ! यह मेरे जीवन में श्वासोच्छ्वास के समान मुझे प्रिय है, मेरे हृदय को आनन्द देने वाली है । इस प्रकार की स्त्री-रत्न उदुम्बर (गूलर) के पुष्प के समान सुनने के लिये भी दुर्लभ है, तब देखने की तो बात ही क्या है ! हे देवानुप्रिय ! मैं ऐसी अपनी प्रिय पत्नी की भिक्षा शिष्यणी के रूप में आपको देता हूँ । आप इसे स्वीकार करें ।

कृष्ण वासुदेव की प्रार्थना सुनकर भगवान अरिष्टनेमि बोले–"देवानुप्रिय ! तुम्हें जिस प्रकार सुख हो वैसा करो ।"

तब उस पद्मावती देवी ने ईशान कोण में जाकर स्वयं अपने हाथों से अपने शरीर पर धारण किये हुए सभी आभूषण एवं अलंकार उतारे और स्वयं ने ही अपने केशों का पंचमुष्टिक लोच किया । फिर भगवान अरिष्टनेमि के पास आकर वंदना की । वंदन नमस्कार करके इस प्रकार बोली–हे भगवन् ! यह संसार जन्म, जरा, मरण आदि दुःख रूपी आग में जल रहा है, प्रदीप्त हो रहा है, अतः इन दुःखों की आग से छुटकारा पाने और जलती हुई आग से अपनी आत्मा को बचाने के लिए आप से संयम धर्म की दीक्षा अंगीकार करना चाहती हूँ । अतः कृपा करके मुझे प्रव्रजित कीजिये यावत् चारित्र धर्म की शिक्षा प्रदान कीजिए ।

Consecration Ceremony

Maxim 11 :

Then *Kṛṣṇa Vāsudeva* sat *Padmāvatī Devī* on a special seat (throne) and she was bathed by the water of one hundred eight pitchers of gold until conronated relating to consecration. Then decorated her with all kinds of ornaments, sat her in the palanquin, to be carried by one

thousand men, moving through the central part of *Dwārakā* city, went out of it, reached in *Sahasrāmravana*, which was situated on mount *Raivataka*. There *Padmāvatī Devī* got down from palanquin.

Keeping fore queen *Padmāvatī*, *Śrī Kṛṣṇa* came to *Bhagawāna Ariṣṭanemi* circumambulated him three times, bowed down and worshipped, then said thus–

O *Bhagawan* ! This *Padmāvatī Devī* is my chief queen. She is pleasing, charming, beloved, beautiful and enchanting to me. She is dear to me in life like inhaling exhaling, pleasing to my heart. This excellent woman is like a flower of wild fig tree (*gūlara*) which is such a rare object that is very difficult to hear about then what even for seeing. O beloved as gods ! I offer unto you my such beloved wife, as a gift of woman disciple. Please, accept it.

Having heard the request of *Kṛṣṇa Vāsudeva* spoke thus *Bhagawāna Ariṣṭanemi*–O belved as gods ! Do, as you feel happy.

Then *Padmāvatī Devī* went to North-East direction, put off with her own hands her all ornaments and also with her own hands tonsured her hairs by five fists, then came to *Bhagawāna Ariṣṭanemi*, bowing down and worshipping him spoke–

O *Bhagawan* ! This world is burning by the fire of birth, death, oldage etc. Hence for escapement from the fire of all these miseries and for saving my soul from the burning, I intend to accept consecration. Therefore kindly take me into monk order until teach me the rules of right conduct–sagehood.

विवेचन

गूलर का फूल–गूलर बरगद की जाति का एक वृक्ष है इसका फूल अनेक वर्षों में किसी चांदनी रात में कभी-कभार वृक्ष पर खिलता है। इसलिए इसे दुर्लभ माना गया है।

Elucidation

Flower of *wild fig tree*-Really wild fig tree is a tree of banyan tree class. After many years its flower blooms in any full moon night on the tree. So it is supposed very difficult to see and obtain.

सूत्र १२ :

तए णं अरहा अरिट्ठणेमी पउमावइं देविं सयमेव पव्वावेइ सयमेव जक्खिणीए अज्जाए सिस्सिणीं दलयइ ।

तत्थ णं सा जक्खिणी अज्जा पउमावइं देविं सयं पव्वावेइ, जाव संजमियव्वं, तए णं सा पउमावई जाव संजमइ ।

तए णं सा पउमावई अज्जा जाया ईरियासमिया जाव गुत्तबम्भचारिणी ।

सूत्र १२ :

पद्मावती देवी द्वारा ऐसी प्रार्थना करने पर भगवान् अरिष्टनेमि ने स्वयमेव पद्मावती को प्रव्रजित करके, यक्षिणी आर्या को शिष्या के रूप में सौंप दिया ।

तब यक्षिणी आर्या ने पद्मावती देवी को स्वयं प्रव्रजित किया, और संयम में यत्न करने की शिक्षा दी । श्रमणी-धर्म की दीक्षा दी और संयम क्रिया में सावधानीपूर्वक यत्न करते रहने की हित शिक्षा देते हुए कहा—हे पद्मावती ! तुम संयम में सदा सावधान रहना ।

पद्मावती भी यक्षिणी गुरुणी की शिक्षा को स्वीकार करते हुए सावधानी-पूर्वक संयम पथ पर चलने का यत्न करने लगी । एवं ईर्या समिति आदि पांचों समिति से युक्त होकर यावत् गुप्त ब्रह्मचारिणी आर्या बन गई ।

Maxim 12 :

On such request of *Padmāvatī Devī*, *Bhagawāna Ariṣṭanemi* himself took her into sage order or made her a nun and gave her to chief nun (*āryā*) *Yakṣiṇī* as a woman disciple.

Then chief nun *Yakṣiṇī* herself took *Padmāvatī Devī* in nun-order and taught her to practise restrain, consecrated her as a nun and inspiring to ever remain to be careful in restrain activities, she said–O *Padmāvatī* ! You should always remain careful in practising restrain.

Padmāvatī nun also accepting the instructions of her teacher *Yakṣiṇī* began to go ahead on restrain path. She became circumspect with five circumspections like circumspection of movement etc., until guarded celibate.

सूत्र १३ :

तए णं सा पउमावई अज्जा जक्खिणीए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ । बहूहिं चउत्थ-छट्ठ-ट्ठम-दसम-दुवालसेहिं मासद्ध-मासखमणेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणा विहरइ ।

तए णं सा पउमावई अज्जा बहुपडिपुण्णाइं वीसं वासाइं सामण्णपरियायं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झोसेइ । झोसित्ता सट्ठिंभत्ताइं अणसणाइं छेदेइ, छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे जाव तमट्ठं आरोहेइ । चरिमुस्सासेहिं सिद्धा । (पढमं अज्झयणं समत्तं)

सूत्र १३ :

तत्पश्चात् उस पद्मावती आर्या ने अपनी यक्षिणी गुरुणी के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । साथ ही उपवास-बेले-तेले-चौले-पचोले-पन्द्रह दिन और महीने तक की विविध प्रकार की तपस्या से वह अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ।

इस तरह पद्मावती आर्या ने पूरे बीस वर्ष तक चारित्र-धर्म का पालन किया । अन्त में एक मास की संलेखना की और साठ भक्त का अनशन पूर्ण करके जिस कार्य (मोक्ष-प्राप्ति) के लिए संयम स्वीकार किया था, उसकी आराधना करते हुए अन्तिम श्वासोच्छ्वास के बाद (देह त्यागकर) सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हो गई । **(प्रथम अध्ययन समाप्त)**
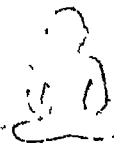
निर्वाण

चित्रक्रम २४ :

पदूमावती की चारित्र आराधना

आर्या पद्मावती ने दीक्षा लेकर गुरुणी यक्षा आर्या के पाम्र सामायिक आदि ग्यारह अगो का अध्ययन किया। वृद्ध-ग्लान तपस्विनी श्रमणियो की अग्लान भाव से सेवा-शुश्रूषा की। अनेक प्रकार की कठोर तपस्या एव ध्यान आदि करके अन्त मे मासिक सलेखना सथारा पूर्वक शरीर छोडकर निर्वाण प्राप्त किया। (वर्ग ५/अध्य १)

Illustration No. 24 :

Conduct propiliation of Padmāvati

Becoming consecrated *Āryā Padmāvati* learnt eleven holy scripture from teacher and chief nun *Ārya Yakṣa* Served old and penancer-nuns cordially Practising several types of penances and meditation, in the end accepted one month s *samlekhana samthārā*, left the body and became beatified

(Sec 5/Ch 1)

Maxim 13 :

Thereafter that *Padmāvatī* nun (*śramaṇī*) studied *Sāmāyika* etc., eleven scriptures (*aṅga*) from her teacher chief nun *Yakṣiṇī*. Along with she practised fast penance of one, two, three, four, five days', fifteen days', one month's, and various types of austerities.

Thus nun *Padmāvatī* practised full vow conduct upto complete twenty years. In the ending period of her life she observed *saṁlekhanā* of one month and fast of sixty diets i.e., one month's fast, for the aim (obtaining salvation) she had accepted restrain, propiliating that, after her last exhale-inhale relinquishing body, she became beatified and salvated. **[First chapter consumed]**

अध्ययन २—८

सूत्र १४ :

उक्खेवओ य अज्झयणस्स ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवई णयरी, रेवयए पव्वए, णंदणवण उज्जाणे । तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हे वासुदेवे राया होत्था, तस्स णं कण्हस्स वासुदेवस्स गोरी देवी, वण्णओ ।

अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे । कण्हे णिग्गए । गोरी जहा पउमावई तहा णिग्गया, धम्मकहा, परिसा पडिगया, कण्हे वि पडिगए । तए णं सा गोरी जहा पउमावई तहा णिक्खंता जाव सिद्धा ।

एवं गन्धारी,[३] लक्खणा,[४] सुसीमा,[५] जम्बवई,[६] सच्चभामा,[७] रुप्पिणी,[८] अट्ठ वि पउमावई सरिसयाओ अट्ठ अज्झयणा ।

(इति २-८ अध्ययनानि)

सूत्र १४ :

आर्य जम्बू ने पूछा—हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने प्रथम अध्ययन के जो भाव कहे वे आपके श्रीमुख से मैंने सुने । अब दूसरे एवं

आगे के अध्ययनों में क्या भाव कहे हैं ? कृपा करके इस अध्ययन का उत्क्षेपक–भाव बताइये ।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारका नगरी थी, उसके समीप एक रैवतक नाम का पर्वत था । उस पर्वत पर नन्दनवन नाम एक मनोहारी एवं विशाल उद्यान था । इस द्वारका नगरी में श्रीकृष्ण वासुदेव राज्य करते थे । उन कृष्ण वासुदेव की "गौरी" नाम की महारानी थी, जो वर्णन करने योग्य थी ।

एक समय उस नन्दनवन उद्यान में भगवान् अरिष्टनेमि पधारे । कृष्ण वासुदेव भगवान के दर्शन करने के लिए गये । जन परिषद भी धर्म सुनने के लिए गई । गौरी रानी भी पद्मावती रानी के समान प्रभुदर्शन के लिये गई । भगवान ने धर्मोपदेश दिया । धर्मोपदेश सुनकर जन परिषद् अपने-अपने घर गई । कृष्ण वासुदेव भी अपने राजभवन में लौट गये । तत्पश्चात् "गौरी" देवी पद्मावती रानी की भांति विरक्त होकर दीक्षित हुई यावत् सिद्ध हो गई ।

इसी तरह अन्य ३. गांधारी, ४. लक्ष्मणा, ५. सुसीमा, ६. जाम्बवती, ७. सत्यभामा, एवं ८. रुक्मिणी के भी छः अध्ययन पद्मावती के समान समझना चाहिए । ये सभी एक समान प्रव्रजित होकर सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हुईं । ये सभी श्रीकृष्ण वासुदेव की पटरानियाँ थीं ।

(२-८ अध्ययन समाप्त)

Chapters 2-8

Maxim 14 :

Ārya Jambū asked *Sudharmā Swāmī*–O *Bhagawan* ! I have heard attentively from you, the subject matter expressed by *Bhagawāna Mahāvīra* of the first chapter of fifth section. Now please tell me the subject matter of second and further chapters as described by *Bhagawāna Mahāvīra*.

Śrī Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Dwārakā*, near it was mountain *Raivataka*. At that mountain there was a vast garden named *Nandanavana*. *Kṛṣṇa Vāsudeva* was ruling over that *Dwārakā* city. That *Kṛṣṇa Vāsudeva* had a queen named *Gaurī*. She was describable.

Once *Bhagawāna Ariṣṭanemi* came to that *Nandanavana* garden. *Kṛṣṇa Vāsudeva* went to bow down and worship him. General public also went to listen to religious descourse. Queen *Gaurī* also went to praise and worship like queen *Padmāvatī*. *Bhagawāna* bestowed sermon. General congregation returned hearing sermon. *Kṛṣṇa Vāsudeva* also went back to his palace. Thereafter, like queen *Padmāvatī*, *Gaurī Devī* also accepted consecration being disinclined to worldly enjoyments and beatified–emancipated.

In the same way further six chapters–3. *Gāndhārī*, 4. *Lakṣmaṇā* 5. *Susīmā*, 6. *Jāmbavatī* 7. *Satyabhāmā* and 8. *Rukmiṇī* should be known like *Padmāvatī*.

The description of all these eight chapters should be known like that of *Padmāvatī*. All these consecrated and salvated alike and all these were the chief queens of *Kṛṣṇa Vāsudeva*.

[2-8 chapters consumed]

नवम अध्ययन

मूलश्री

सूत्र १५ :

उक्खेवओ य णवमस्स ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं बारवईए णयरीए रेवयए पव्वए, णंदणवण उज्जाणे, कण्हे राया । तत्थ णं बारवईए णयरीए कण्हस्स वासुदेवस्स

पुत्ते जंबवईए देवीए अत्तए संबे णामं कुमारे होत्था । अहीण पडिपुण्ण पंचिंदियाणि ।

तस्स णं संबस्स कुमारस्स मूलसिरी णामं भारिया होत्था, वण्णओ ।

अरहा अरिट्ठणेमी समोसढे ।

कण्हे णिग्गए । मूलसिरी वि णिग्गया । जहा पउमावई । जं णवरं देवाणुप्पिया ! कण्हं वासुदेवं आपुच्छइ जाव सिद्धा ।

सूत्र १५ :

श्री जम्बू स्वामी ने कहा–हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने आठवें अध्ययन के जो भाव कहे, वे मैंने आपके श्रीमुख से सुने । आगे श्रमण भगवान महावीर ने नवमें अध्ययन का क्या अर्थ कहा है? यह कृपाकर बतलाइये ।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल उस समय में द्वारका नगरी के पास रैवतक नाम का पर्वत था । जहां एक नन्दनवन उद्यान था । वहां कृष्ण वासुदेव राज्य करते थे । उन कृष्ण वासुदेव के पुत्र और रानी जाम्बवती देवी के आत्मज शाम्ब नाम के कुमार थे, जो पांचों इन्द्रियों से परिपूर्ण सर्वांग सुन्दर शरीर वाले थे । उन शाम्ब कुमार के मूलश्री नाम की भार्या थी, जो वर्णन करने योग्य थी (अत्यन्त सुन्दर एवं कोमलांगी थी) ।

एक समय अर्हत् अरिष्टनेमि वहां पधारे । कृष्ण वासुदेव उनके दर्शनार्थ गये । मूलश्री देवी भी "पद्मावती" के पूर्व वर्णन के समान प्रभु के दर्शनार्थ गई । भगवान ने धर्मोपदेश दिया, धर्मकथा कही । जिसे सुनकर जन-परिषद एवं श्रीकृष्ण तो अपने-अपने घर लौट गये । मूलश्री ने वहीं रुककर भगवान से प्रार्थना की, हे भगवन् ! मैं कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर आपके पास श्रमण धर्म में दीक्षित होना चाहती हूँ ।

भगवान ने कहा–हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो ।

इसके बाद "मूलश्री" अपने भवन को लौटी । मूलश्री के पति श्री शाम्बकुमार पहले ही प्रभुचरणों में दीक्षित हो चुके थे, अतः मूलश्री अपने श्वसुर श्री कृष्ण वासुदेव की आज्ञा लेकर पद्मावती के समान दीक्षित हुई । एवं उन्हीं के समान तप-संयम की आराधना करके सिद्ध पद को प्राप्त हुई । (नवम अध्ययन समाप्त)

Chapter 9

Mūlaśrī

Maxim 15 :

Jambū Swāmī asked with reverence-O *Bhahgawan* ! *Bhagawāna Mahāvīra* described which subject matter of eighth chapter that I have heard from you. Now please tell me the subject matter of nineth chapter as expressed by *Bhagawāna Mahāvīra.*

Śrī Sudharmā Swāmī uttered–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Dwārakā*, near *Raivataka* mountain and at that mountain was *Nandanavana* garden. *Kṛṣṇa Vāsudeva* was the ruler of that zone.

Śāṁbakumāra was the son of *Kṛṣṇa Vāsudeva* and offspring of his queen *Jāmbavatī*. That prince *Śāmbakumāra* had full-fledged five senses, and his body was beautiful. That *Śāmba Kumāra* had a wife named *Mūlaśrī*. She was tender and beautiful so was describable.

Once *Arhat Ariṣṭanemi* came there. *Kṛṣṇa Vāsudeva* went to bow down and worship him. *Mūlaśrī* also went to *Bhagawāna* like *Padmāvatī*. *Bhagawāna* bestowed sermon and religious dicourse. Hearing that *Kṛṣṇa Vāsudva* and general people went back to their places. *Mūlaśrī* stayed their and requested–O *Bhagawan* ! Getting permission from *Kṛṣṇa Vāsudeva*, I intend to enter sage (nun) order in presence of you.

Bhagawāna said–O beloved as gods ! Do as you feel happy.

After that *Mūlaśri* returned to her house. *Śāmba Kumāra*, husband of *Mūlaśrī*, had been consecrated in presence of *Bhagawāna*, so she asked permission from her father-in-law, *Śrī Kṛṣṇa Vāsudeva* and getting his permission accepted consecration like *Padmāvatī* and even like *Padmāvatī* she also beatified by propiliating restrain and austerity.

[Chapter nine consumed]

अध्ययन १0

एवं मूलदत्ता वि ।

(दस अज्झयणा) (इति पंचम वर्ग समाप्त)

"मूलश्री" के ही समान "मूलदत्ता" का भी सारा वृतान्त जानना चाहिये ।

(दस अध्ययन समाप्त)

(पंचम वर्ग समाप्त)

Chapter 10

The whole description of *Mūladattā*–should be known like that of *Mūlaśrī*.

[Chapter ten consumed]

[Section five completed]

卐

षष्ठम वर्ग

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! छट्ठमस्स उक्खेवओ । णवरं सोलस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा—

मंकाई किंकमे चेव मोग्गरपाणी य कासवे ।

खेमए धितिधरे चेव केलासे हरिचन्दणे ॥१॥

वारत्त सुदंसण पुण्णभद्दे सुमणभद्दे सुपइट्ठे मेहे ।

अइमुत्ते य अलक्खे अज्झयणाणं तु सोलसयं ॥२॥

सूत्र १ :

आर्य जम्बू—हे भगवन् ! मैंने पांचवें वर्ग का भाव सुना, अब कृपया बताएँ कि छठे वर्ग में श्रमण भगवान् महावीर ने क्या भाव कहे हैं ?

श्री सुधर्मा स्वामी—हे जम्बू ! श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने छठे वर्ग के सोलह अध्ययन कहे हैं, जो इस प्रकार हैं—

१. मंकाई, २. किंकम, ३. मुद्गरपाणि, ४. काश्यप, ५. क्षेमक, ६. धृतिधर, ७. कैलाश, ८. हरिचन्दन, ९. वारत्त, १०. सुदर्शन, ११. पूर्णभद्र, १२. सुमनभद्र, १३. सुप्रतिष्ठ, १४. मेघ गाथापति, १५. अतिमुक्त कुमार एवं १६. अलक्ष्य कुमार ।

आर्य जम्बू—हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर ने छठे वर्ग के १६ अध्ययन कहे हैं तो प्रथम अध्ययन का क्या अर्थ बताया है ?

SIXTH SECTION

Maxim 1 :

Ārya Jambū humbly said to *Śrī Sudharmā Swāmī*–O *Bhagawan* ! I have heard the subject matter of fifth section. Now please tell me what subject matter of sixth section preached by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* ?

Śrī Sudharmā Swāmī–O *Jambū* ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has expressed sixteen chapters of sixth section. The names of these sixteen chapters are as follows–

1. Maṅkāī, 2. Kiṅkama, 3. Mudgarapāṇi, 4 Kāśyapa, 5. Kṣemaka, 6. Dhṛtidhara, 7. Kailāśa, 8. Haricandana, 9. Wāratta, 10. Sudarśana 11. Pūrṇabhadra, 12 Sumanabhadra, 13. Supratiṣṭha, 14. Megha trader 15. Atimuktakumāra and, 16. Alakṣyakumāra.

प्रथम अध्ययन : मंकाई

सूत्र २ :

जइ णं भंते ! सोलस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स अज्झयणस्स के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए-चेइए, सेणिए राया। तत्थ णं मंकाई णामं गाहावई परिवसइ; अड्ढे जाव अपरिभूए।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे आइगरे गुणसिलए जाव विहरइ। परिसा णिग्गया।

तए णं से मंकाई गाहावई इमीसे कहाए लद्धट्ठे जहा पण्णत्तीए गंगदत्ते, तहेव इमो वि जेट्ठपुत्तं कुडुंबे ठवित्ता पुरिससहस्स-वाहिणीए सीयाए णिक्खंते।

जाव अणगारे जाए ईरियासमिए जाव गुत्तबंभयारी ।

तए णं से मंकाई अणगारे समणस्स भगवओ महावीरस्स तहारूवाणं थेराणं अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारस अंगाइं अहिज्जइ ।

सेसं जहा खंदयस्स । गुणरयणं तवोकम्मं सोलसवासाइं परियाओ तहेव विपुले सिद्धे । **(पढमं अज्झयणं)**

सूत्र २ :

आर्य सुधर्मा स्वामी–हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नामक नगर था। वहां गुणशीलक नाम का चैत्य (उद्यान) था । उस नगर में श्रेणिक राजा राज्य करते थे ।

वहां मंकाई नाम का एक गाथापति रहता था। जो अत्यन्त समृद्ध और सबको आधारभूत यावत् अपरिभूत अर्थात् समाज में, जाति में जिसका कोई अपमान या तिरस्कार नहीं कर सके, ऐसा था ।

उस काल उस समय में धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान महावीर गुणशीलक नामक उद्यान में पधारे ।

प्रभु का आगमन सुनकर जन परिषद् दर्शनार्थ एवं धर्मोपदेश श्रवणार्थ आई ।

मंकाई गाथापति ने भगवान के आगमन का वृत्तान्त सुना तो उनके दर्शन करने एवं धर्मोपदेश सुनने के लिये अपने घर से निकला । भगवान ने धर्मोपदेश दिया, जिसे सुनकर मंकाई गाथापति को संसार से वैराग्य हो गया। इसका सभी वर्णन भगवती सूत्र में वर्णित गंगदत्त श्रावक की तरह जानना चाहिए । अर्थात्–उसने अपने घर आकर अपने ज्येष्ठ पुत्र को घर का भार सौंपा और शिविका (पालकी) में बैठकर श्रमण दीक्षा अंगीकार करने हेतु भगवान की सेवा में आया ।

यावत् वह अणगार हो गया। ईर्या समिति आदि पांच समितियों से युक्त एवं गुप्तियों से गुप्त ब्रह्मचारी बन गया ।

इसके बाद मंकाई मुनि ने श्रमण भगवान महावीर के गुण सम्पन्न तथारूप स्थविरों के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया और स्कंदक के समान गुणरत्न संवत्सर तप का आराधन किया। (गुणरत्न संवत्सर तप का वर्णन गौतम अणगार के प्रकरण प्रथम वर्ग के प्रथम अध्ययन में देखें।)

सोलह वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली और अन्त में विपुल गिरि पर स्कन्दक जी के समान ही संथारादि करके यावत् सिद्ध हो गये।

(प्रथम अध्ययन समाप्त)

Chapter 1 : Mankāī

Maxim 2 :

Ārya Jambū asked *Śrī Sudharmā Swāmī*–O *Bhagawan* ! If *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has preached sixteen chapters of sixth section then what subject matter he told of first chapter ?

Ārya Sudharmā Swāmī began to narrate–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Rājagṛha.* In that city was *Guṇaśīlaka* garden. King *Śreṇika* was ruling over that city.

In that city *Maṅkāī* trader (*gāthāpati*) inhabited He was too much rich, like support to all and was such that in society and clan none can disregard and dishonour him.

At that time and at that period, beginner (promoter) of religion, *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* came and stayed in *Guṇaśīlaka* garden.

Having heard coming of *Prabhu* public congregation came and gathered for seeing and hearing his sermon.

When *Maṅkāī* trader heard about coming of *Bhagawāna* then he came out of his house to see and hear the sermon of *Prabhu. Bhagawāna* preached religious doctrines, hearing which *Maṅkāī* became disinclined to world and worldy pleasures. Its full description should be known like

Gaṅgadatta śrāvaka (householder) which has been described in *Bhagawatī Sūtra* (16 – 5)–meaning–coming home he bestowed the full responsibility of home (family, trade etc.) to his eldest son and riding on a palanquin came in service (presence) of *Bhagawāna* for accepting consecration until he became houseless mendicant, circumspect by five circumspections viz., circumspection of movement etc., and practising three incognitoes of mind, speech and body, he became guarded celibate.

After that *Maṅkāī* monk studied *Sāmāyika* etc., eleven holy scriptures (*aṅgas*) from the elder sages of *Bhagawāna Mahāvīra* and practised *Guṇaratna saṁvatsara* penance. The description of this austerity should be known from first chapter of first section in the episode of *Gautama* houseless mendicant

He practised consecration upto sixteen years, in the end of life accepted *saṁthārā* and beatified at *Vipula* mountain, like *Skandakajī*. **[First chapter consumed]**

द्वितीय अध्ययन

सूत्र ३ :

दोच्चस्स उक्खेवओ, किंकमे वि एवं चेव जाव विपुले सिद्धे ।

सूत्र ३ :

दूसरे अध्ययन में "किंकम" गाथापति का वर्णन है । वे भी मंकाई गाथापति के समान ही प्रभु महावीर के पास प्रव्रजित होकर विपुल गिरि पर सिद्ध, बुद्ध और सर्व दुःखों से मुक्त हो गये ।

Chapter 2

Maxim 3 :

In the second chapter there is the description of *Kiṁkama* trader. He also accepted consectration near (in presence of)

Bhagawāna Mahāvīra, like trader *Maṅkāī* and salvated át mountain *Vipula* until became free from all miseries.

[Second chapter consumed

तृतीय अध्ययन

अर्जन मालाकार मुद्गरपाणि

सूत्र ४ :

तच्चस्स उक्खेवओ। एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए, सेणिए राया। चेल्लणा देवी।

तत्थ णं रायगिहे णयरे अज्जुणए णामं मालागारे परिवसइ। अड्ढे जाव अपरिभूए। तस्स णं अज्जुणयस्स बंधुमई णामं भारिया होत्था सुकुमाल पाणि-पाया।

तस्स णं अज्जुणयस्स मालागारस्स रायगिहस्स णयरस्स बहिया एत्थ णं महं एगे पुप्फारामे होत्था। कण्हे जाव णिकुरंबभूए दसद्धवण्ण कुसुमकुसुमिए, पासाइए।

तस्स णं पुप्फारामस्स अदूरसामंते तत्थ णं अज्जुणयस्स मालागारस्स अज्जय-पज्जय-पिइपज्जयागए अणेगकुलपुरिस-परंपरागए मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खायणे होत्था।

पोराणे दिव्वे, सच्चे जहा पुण्णभद्दे।

तत्थ णं मोग्गरपाणिस्स पडिमा एगं महं पलसहस्स-णिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय चिट्ठइ।

सूत्र ४ :

आर्य जम्बू–हे भगवन ! श्रमण भगवान महावीर ने छठे वर्ग के दूसरे अध्ययन का जो भाव कहा है वह मैंने सुना। अब तीसरे अध्ययन का प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ? कृपाकर वह भी बताइये।

श्री सुधर्मा स्वामी–हे जम्बू ! उस काल में राजगृह नाम का नगर था, वहां गुणशीलक नामक उद्यान था. उस नगर में राजा श्रेणिक राज्य करते थे, उनकी रानी का नाम चेलना था ।

उस राजगृह नगर में अर्जुन नाम का एक माली था । वह धनी (आढ्य) तथा अपराभूत था । उसकी पत्नी का नाम बन्धुमती था, जो अत्यन्त सुन्दर और कोमल थी ।

उस अर्जुनमाली का राजगृह नगर के बाहर एक बड़ा पुष्पाराम (फूलों का बगीचा) था । वह बगीचा नीले एवं सघन पत्तों से आच्छादित होने के कारण आकाश में चढ़ी घनघोर घटाओ के समान श्यामकान्ति से युक्त प्रतीत होता था । उसमें पाँचों वर्णों के फूल खिले हुए थे । वह बगीचा हृदय को प्रसन्न एवं प्रफुल्लित करने वाला एवं बड़ा दर्शनीय था ।

उस पुष्पाराम यानी फुलवाड़ी के समीप ही मुद्गरपाणि नामक यक्ष का यक्षायतन (मन्दिर) था, जो उस अर्जुनमाली के पिता, पितामह आदि पूर्वजों से चली आई कुल परम्परा से सम्बन्धित था । वह पूर्णभद्र चैत्य के समान पुराना, दिव्य एवं सत्य प्रभाव वाला था ।

उसमें "मुद्गरपाणि" नामक यक्ष की एक प्रतिमा थी, जिसके हाथ में एक हजार पल-परिमाण (वर्तमान तोल के अनुसार लगभग ६२.५० सेर तदनुसार लगभग ५७ किलो) भार वाला लोहे का एंक मुद्गर था ।

Chapter 3

ARJUNA Mudgarapāṇi

Maxim 4 :

Ārya Jambū said politely to *Ārya Sudharmā Swāmī*–O *Bhagawaa* ! I have heard the subject matter of second chapter from you, as described by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*. Now please tell me the subject matter of third chapter–what he has said ?

Śrī Sudharmā Swāmī began to narrate–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Rājagṛha*. In that city was *Guṇaśīlaka* garden. King *Śreṇêka* was ruler of that city. Name of his chief queen was *Celaṇā*.

A gardener or garland maker, named *Arjuna* was the resident of that city. He was rich and unsurpasable. The name of his wife was *Bandhumatī*. She was tender and much beautiful.

That *Arjuna* garland-maker had a big flower-garden outside the city *Rājagṛha*. That garden was covered by dense blue leaves. So it seemed as the dense clouds in the sky. Flowers of five colours bloomed in it. So that garden was heart-pleasing eye-capturing and worth seen

Near that garden was a sanctuary of deity (god) *Yakṣa Mudgarapāṇi*. That deity had devolved upon him from a line of many ancestors of the family from father, grand father etc. Ancient, divine and true influensive, like the sanctuary of *Pūrṇabhadra* deity

In that sanctuary there was an idol of deity (*Yakṣa*) *Mudgarapāṇi* stood having held the iron mace weighing one thousand *palas* (according to modern weights about 57 kilogram heavy) in his hand.

सूत्र ५ :

तए णं से अज्जुणए मालागारे बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणि-जक्खस्स भत्ते यावि होत्था । कल्लाकल्लिं पच्छिपिडगाइं गिण्हइ, गिण्हित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ; पडिणिक्खमित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ; उवागच्छित्ता पुप्फच्चयं करेइ,

करित्ता; अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स महरिहं

पुप्फच्चयणं करेइ; करित्ता जाणुपायपडिए पणामं करेइ, करित्ता तओ पच्छा रायमग्गंसि वित्तिं कप्पेमाणे विहरइ ।

सूत्र ५ :

अर्जुनमाली बचपन से ही उस मुद्‌गरपाणि यक्ष का पक्का भक्त (अनन्य उपासक) था । प्रतिदिन बांस की छबड़ी (डलिया) लेकर वह राजगृह नगर से बाहर स्थित अपनी उस फुलवाड़ी में जाता और फूलों को चुन-चुनकर एकत्रित करता था।

फिर उन चुने हुए फूलों में से उत्तम-उत्तम फूलों से उस मुद्‌गरपाणि यक्ष की भक्ति भावपूर्वक अर्चना करता था और भूमि पर दोनों घुटने टेककर उसे प्रणाम करता था । इसके बाद राजमार्ग के किनारे बाजार में बैठकर उन फूलों को बेचकर अपनी आजीविका उपार्जन करता हुआ सुखपूर्वक वह अपना जीवन बिता रहा था ।

Maxim 5 :

Arjuna garland-maker from his childhood was fervent devotee of that deity. Every morning, he took bamboo basket, went out of the city *Rājagṛha*, arrived at his flower-garden, plucked and made collection of flowers.

Then he took the foremost and best flowers approached the sanctuary of deity *Mudgarapāṇi*, devotedly worshipped him, made the flower-offering of best quality, bowed falling over his knees and afterwards would go on highway and sitting there on a side, he would sale his flowers. Thus he was passing his life happily.

सूत्र ६ :

तत्थ णं रायगिहे णयरे ललिया णामं गोट्ठी परिवसइ, अड्ढा जाव अपरिभूया, जं कय-सुकया यावि होत्था ।

तए णं रायगिहे णयरे अण्णया कयाइं पमोए घुट्ठे यावि होत्था । तए णं से अज्जुणए मालागारे 'कल्लं पभूयतरएहिं पुप्फेहिं कज्ज' इति कट्टु

पच्चूसकालसमयंसि बंधुमईए भारियाए सद्धिं पच्छिपिडगाइं गिण्हइ गिण्हित्ता, सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ, पडिणिक्खमित्ता रायगिहं णयरं मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ, णिगच्छित्ता जेणेव पुप्फारामे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फच्चयं करेइ ।

गोष्ठिक पुरुषों का अनाचरण

सूत्र ६ :

उस राजगृह नगर में ''ललिता'' नाम की एक गोष्ठी (मित्र मण्डली) रहती थी जो अत्यन्त समृद्ध तथा अपराभूत–किसी से हार मानने वाली नहीं थी और जो वह कर दे वो ही ठीक है ऐसी आज्ञा भी उसे प्राप्त थी ।

(किसी समय नगर के राजा का कोई हित कार्य सम्पादन करने के कारण राजा ने उस मित्र मण्डली पर प्रसन्न होकर अभयदान दे दिया कि वे अपनी इच्छानुसार कोई भी कार्य करने में स्वतंत्र हैं । राज्य की ओर से उन्हें संरक्षण था, इस कारण यह गोष्ठी बहुत उच्छृंखल और स्वच्छन्द बन गई थी ।)

एक दिन राजगृह में एक प्रमोद=हर्ष उत्सव मनाने की घोषणा हुई । इस पर अर्जुनमाली ने अनुमान लगाया कि 'कल इस उत्सव के अवसर पर फूलों की बहुत भारी मांग होगी' इसलिये उस दिन वह प्रातःकाल जल्दी उठा और बांस की डलिया लेकर अपनी पत्नी बंधुमती के साथ जल्दी घर से निकलकर नगर में होता हुआ फुलवाड़ी में पहुँचा और अपनी पत्नी के साथ फूलों को चुन-चुनकर एकत्रित करने लगा ।

Maxim 6 :

Here in *Rājagṛha* city dwelt a gang of friends, named *Lalitā*, which was very rich until unsurpassed *i.e.*, none can defeat that gang. That gang also possessed the royal mandate that 'what ever do the members of this gang is quite correct.'

(Perhaps this gang had done any good of the ruler of the city. So pleasing he has passed such mandate that 'these gangsters are free to do as they like.' They had the patronage of ruler. So this gang (members of gang) became quite free, mischievous and wicked.)

One day, in the city announcement made to celebrate a pleasure fastival–ceremony. Then that garland-maker–gardener *Arjuna* thought that tomorrow the demand of flowers would be very much. Under this idea he awoke early in the morning that day and taking his bamboo-baskets, went out from house early with his wife *Bandhumatī*, moving through the city reached his flower-garden. There, with his wife, he began to collect flowers, plucking from plants.

सूत्र ७ :

तए णं तीसे ललियाए गोट्ठिए छ गोठिल्ला पुरिसा जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागया अभिरममाणा चिट्ठंति ।

तए णं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं पुप्फच्चयं करेइ; करित्ता अग्गाइं वराइं पुप्फाइं गहाय जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ ।

तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा अज्जुणयं मालागारं बंधुमईए भारियाए सद्धिं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अण्णमण्णं एवं वयासी—एस खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं इहं हव्वमागच्छइ; तं सेयं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणयं मालागारं अवओडय-बंधणयं करित्ता बंधुमईए भारियाए सद्धिं विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणाणं विहरित्तए ।

त्ति कट्टु एयमट्ठं अण्णमण्णस्स पडिसुणेंति, पडिसुणित्ता कवाडंतरेसु णिलुक्कंति, णिच्चला, णिप्फंदा, तुसिणीया पच्छण्णा चिट्ठंति ।

सूत्र ७ :

उस समय पूर्वोक्त "ललिता" गोष्ठी के छः पुरुष मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन में आकर आमोद-प्रमोद एवं परस्पर खेल-कूद, हंसी-मजाक करने लगे ।

उधर अर्जुनमाली अपनी पत्नी बन्धुमती के साथ फूल संग्रह करके उनमें से उत्तम फूलों को लेकर मुद्गरपाणि यक्ष की पूजा करने के लिये यक्षायतन की ओर बढ़ा ।

उन छः गोष्ठिक पुरुषों ने अर्जुनमाली को बंधुमती भार्या के साथ यक्षायतन की ओर आते हुए देखा, देखकर परस्पर विचार विमर्श करके निश्चय किया–हे मित्रो ! यह अर्जुनमाली अपनी बंधुमती भार्या के साथ इधर ही आ रहा है। हम लोगों के लिए यह अच्छा अवसर है, कि ऐसे मौके पर इस अर्जुनमाली को तो औंधी मश्कियों (दोनों हाथों को पीठ पीछे) से बलपूर्वक बांधकर एक ओर पटक दें, और फिर इसकी इस सुन्दर स्त्री बंधुमती के साथ खूब मन इच्छित काम-क्रीड़ा करें ।

इस प्रकार परस्पर यह निश्चय करके वे छहों उस यक्षायतन के किवाड़ों के पीछे छिपकर खड़े हो गये और उन दोनों के यक्षायतन के भीतर प्रविष्ट होने की श्वास रोककर चुपचाप प्रतीक्षा करने लगे ।

Maxim 7 :

At that time the six members of *Lalitā* gang came to the shrine (sanctuary) of *Mudgarapāṇi* deity and began to enjoy rejoicings and merriments.

On other side, garland-maker *Arjuna* gathered flowers, taking best flowers moved towards the shrine with his wife *Bandhumatī*.

Six gangsters saw *Arjuna* coming to the shrine with his wife *Bandhumatī*. Seeing them, gangsters discussed with one-another and decided–Friends ! this garland-maker *Arjuna* is coming here with his wife *Bandhumatī*. It is a

चित्रक्रम २५ :

अर्जुनमालाकार उद्यान में

राजगृह के वाहर उद्यान मे अर्जुन मालाकार अपनी पत्नी वन्धुमती के साथ सुवह-सुवह ही फूल चुनता है । तव वहाँ वैठे छह गोष्ठिक पुरुषो वदमाशो की नजर उसकी सुन्दर पत्नी पर पडी । वे वृक्षो की ओट मे छिप गये और अपनी मनोकामना पूरी करने का मौका देखने लगे ।

(वर्ग ६/अध्य ३)

Illustration No. 25 :

Arjuna, the garland maker in his garden

Arjuna, garland maker plucks flowers with his wife *Bandhumatī*, in his garden situated outside the city *Rajagraha*, early in the morning Then the six rascals (*gosthika* persons) saw her beautiful wife They hidden themselves behind trees and wished to seek chance to accomplish their evil desire (Sec 6/Ch 3)

good opportunity for us, we must bind *Arjuna* fast–by twisting the arms and head and tying them to the back, fall him aside and then enjoy sexual pleasures according to our desire with his beautiful and tender wife *Bandhumatī*.

Thus deciding, all the six gangsters hid behind the doors of shrine, stood hidden and waited silently for coming them.

सूत्र ८ :

तए णं से अज्जुणए मालागारे बंधुमईए भारियाए सद्धिं जेणेव मोग्गरपाणिस्स जक्खाययणे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता आलोए पणामं करेइ, करित्ता महरिहं पुप्फच्चयणं करेइ; करित्ता, जाणुपायपडिए पणामं करेइ ।

तए णं ते छ गोट्ठिल्ला पुरिसा दवदवस्स कवाडंतरेहिंतो णिग्गच्छंति, णिग्गच्छित्ता, अज्जुणयं मालागारं गिण्हित्ता अवओडय बंधणं करेंति, करित्ता बंधुमईए मालागारीए सद्धि विउलाइं भोगभोगाइं भुंजमाणा विहरंति ।

तए णं तस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमज्झत्थिए समुप्पण्णे–एवं खलु अहं बालप्पभिइं चेव मोग्गरपाणिस्स भगवओ कल्लाकल्लिं जाव वित्तिं कप्पेमाणे विहरामि ।

तं जइ णं मोग्गरपाणिजक्खे इह सण्णिहिए होंते से णं किं ममं एयारूवं आवत्तिं पावेज्जमाणं पासंते ? तं णत्थि णं मोग्गरपाणिजक्खे इह सण्णिहिए सुव्वत्तंणं एस कट्ठे ।

सूत्र ८ :

इधर अर्जुनमाली अपनी बंधुमती भार्या के साथ यक्षायतन में प्रविष्ट हुआ और भक्तिपूर्वक प्रफुल्लित नेत्रों से मुद्‌गरपाणि यक्ष की ओर देखा प्रणाम किया। फिर चुने हुए उत्तमोत्तम फूल उस पर चढ़ाकर दोनों घुटने भूमि पर टेककर साष्टांग प्रणाम करने लगा ।

उसी समय मौका देखकर शीघ्रता से उन छह गोष्ठिक पुरुषों ने किवाड़ों के पीछे से निकलकर अर्जुनमाली को पकड़ लिया और उसकी औंधी मुश्कें बांधकर उसे एक ओर पटक दिया। फिर उसकी पत्नी बंधुमती मालिन के साथ विविध प्रकार से काम-क्रीड़ा करने लगे ।

अपनी आँखों के सामने यह घोर दुराचार देखकर अर्जुनमाली के मन में यह विचार आया–देखो, मैं अपने बचपन से ही इस मुद्गरपाणि को अपना इष्टदेव मानकर इसकी प्रतिदिन भक्तिपूर्वक पूजा करता आ रहा हूँ । इसकी पूजा करने के बाद ही इन फूलों को बेचकर अपना जीवन-निर्वाह करता आ रहा हूँ ।

तो यदि मुद्गरपाणि यक्ष देव यहां वास्तव में ही होता तो क्या मुझे इस प्रकार विपत्ति में पड़ा देखकर चुप रहता ? इसलिए निश्चय ही मुद्गरपाणि यक्ष यहां नहीं है । यह तो मात्र काष्ठ का पुतला है ।

Maxim 8 :

Arjuna garland-maker entered the shrine of *Mudgarapāni* deity with his wife *Bandhumatī*, reverred and bowed down on seeing it, made flower-offerings and bowed down falling upon his knees.

In the meanwhile seeing best opportunity, all of a sudden, those six fellows came out from behind the doors, caught *Arjuna* garland-maker, bind him fast and make him fall aside. Then began to enjoy sexual pleasures to the fullest and by various postures and methods with *BandhumatĪ*, the wife of *Arjuna* garland-maker.

Seeing such a meanest misdeed (license) before his own eyes, such thoughts aroused in the mind of garland-maker *Arjuna*–Thus indeed, from my childhood, I go on reverring to *Mudgarapāṇi* deity, considering as my favourite god. After its reverence, carry on my business. Had here been deity *Mudgarapāṇi* really present, would he remain silent seeing me in such a tyranny ? Therefore

गुणशीलक उद्यान में अर्जुन मालाकार
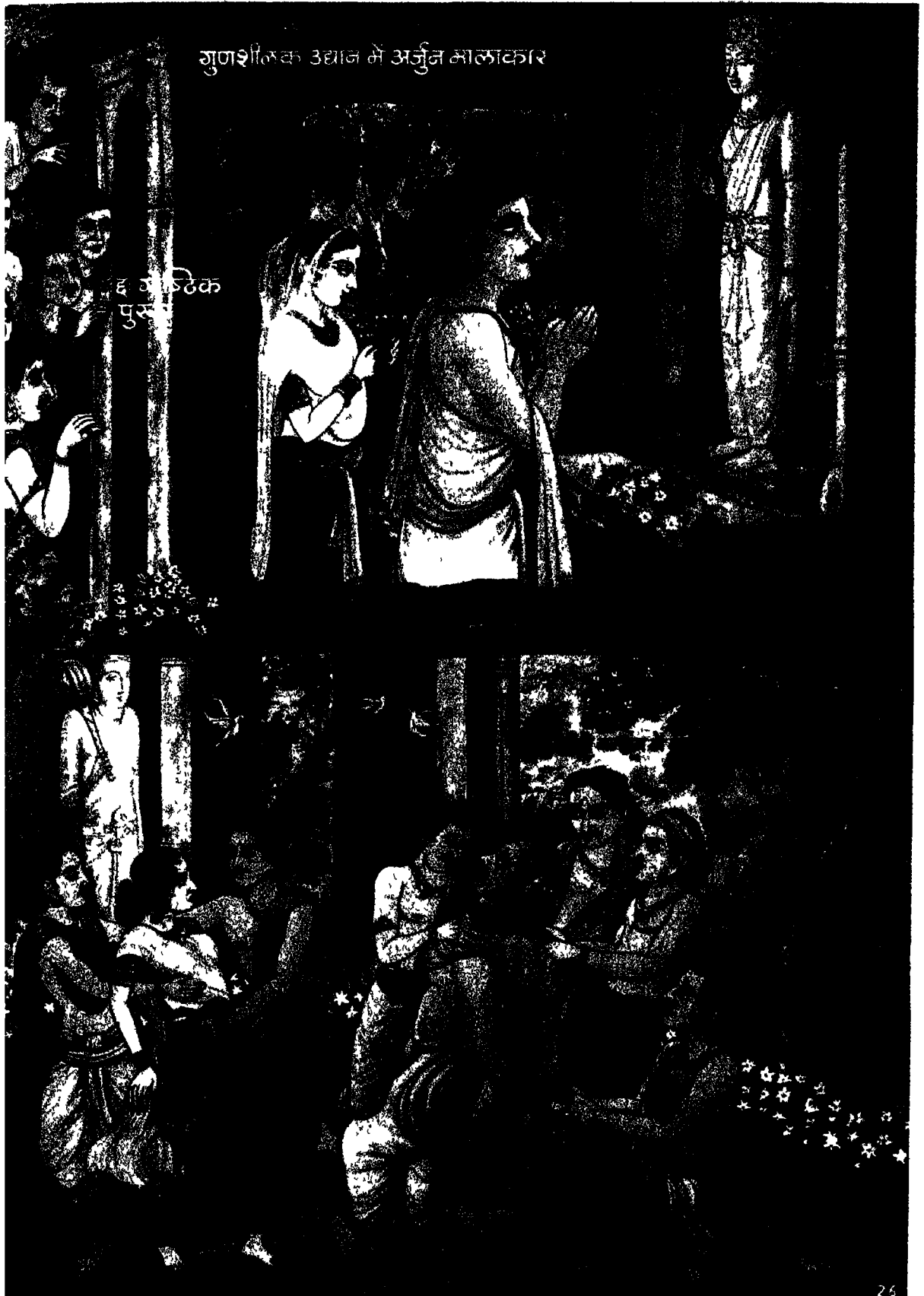
चित्रक्रम २६ :

गोष्ठिक पुरुषों द्वारा उपद्रव

दृश्य १–अर्जुन और उसकी पत्नी अपने कुलदेवता मुद्‌गरपाणि यक्ष की फूलों से अर्चना पूजा करने लगे तब वे छहों बदमाश किवाडो की ओट में छिप गये । मौका देखने लगे ।

दृश्य २–मौका पाकर वदमाशो ने अर्जुन को पकड लिया, उसकी उल्टी मुश्के बांध दीं और लगे पत्नी के साथ दुराचार करने ।

(वर्ग ६/अध्य. ३)

Illustration No. 26 :

Misdeed by six rascals

Scene 1. When *Arjuna and* his wife began to worship their tutelary deitty–*Mudgarapāni Yaksa* (deity) and offering him flowers, then all the six rascals hid behind the door-leafs

Scene 2. Getting chance rascals bound *Arjuna* and began to take sexual enjoyment with *Bandhumatī* (Sec 6/Ch 3)

deity *Mudgarapāṇi* is not present here. It is only a puppet of wood.

सूत्र ९ :

तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे अज्जुणयस्स मालागारस्स अयमेयारूवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता, अज्जुणयस्स मालागारस्स सरीरयं अणुप्पविसइ, अणुप्पविसित्ता तडतडस्स बंधाइं छिंदइ, छिंदित्ता तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गिण्हइ, गिण्हित्ता ते इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएइ ।

तए णं से अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अणाइट्ठे समाणे रायगिहस्स णयरस्स परिपेरंतेणं कल्लाकल्लिं इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएमाणे विहरइ ।

सूत्र ९ :

तब मुद्गरपाणि यक्ष ने अर्जुनमाली के इस प्रकार के मनोभावों को जानकर उसके शरीर में प्रवेश किया और उसके बन्धनों को तड़ातड़ तोड़ डाला ।

अब उस मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट उस अर्जुनमाली ने उस हजार पल भार वाले लोहमय मुद्गर को हाथ में लेकर घुमाया और अपनी बंधुमती भार्या सहित उन छहों गोष्ठिक पुरुषों को उस मुद्गर प्रहार से मार डाला ।

इस प्रकार इन सातों प्राणियों को मारकर मुद्गरपाणि यक्ष से आविष्ट (वशीभूत) वह अर्जुनमाली राजगृह नगर की बाहरी सीमा के पास चारों ओर ६ पुरुष और १ स्त्री–कुल मिलाकर ७ प्राणियों की प्रतिदिन हत्या करते हुए घूमने लगा ।

Maxim 9 :

Knowing such types of mental thoughts of *Arjuna* garland-maker deity *Mudgarapāṇi* entered in his body and shattered off his bonds.

Then *Arjuna* garland-maker, possessed by deity *Mudgarapāṇi* took hold of that iron mace weighing one thousand *palas* (about 57 kilogram heavy) holding in his hand moved round and killed those six gangsters, with his wife *Bandhumatī* by its strokes.

Thus killing those seven persons, that *Arjuna* garland-maker possessed by deity *Mudgarapāṇi*, began to move round about external boundry of *Rājagrha* city killing six men and one woman everyday.

सूत्र १० :

तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ–एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं अणाइट्ठे समाणे रायगिहे बहिया इत्थिसत्तमे छ पुरिसे घाएमाणे विहरइ ।

तए णं से सेणिए राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे कोडुंबिय पुरिसं सद्दावेइ, सद्दावित्ता एवं वयासी–

एवं खलु देवाणुप्पिया ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ । तं मा णं तुब्भे केइ तणस्स वा कट्ठस्स वा पाणियस्स वा, पुप्फफलाणं वा अट्ठाए सइरं णिगच्छउ । मा णं तस्स सरीरस्स वावत्ती भविस्सइ ।

त्ति कट्टु दोच्चं पि तच्चं पि घोसणं घोसेह; घोसित्ता खिप्पामेव ममेयं पच्चप्पिणह ।

तए णं ते कोडुंबियपुरिसा जाव पच्चप्पिणंति ।

अर्जुन का आतंक

सूत्र १० :

उस समय राजगृह नगर के शृंगाटकों में, राजमार्गों आदि सभी स्थानों में, बहुत से लोग परस्पर इस प्रकार बोलने लगे–हे देवानुप्रियो ! अर्जुनमाली

मुद्गरपाणि यक्ष के वशीभूत होकर राजगृह नगर के बाहर एक स्त्री और छह पुरुष, इस प्रकार सात व्यक्तियों को प्रतिदिन मारता हुआ घूम रहा है।

जब श्रेणिक राजा ने यह बात सुनी तो उन्होंने अपने सेवक पुरुषों को बुलाया और उनसे इस प्रकार कहा–

हे देवानुप्रियो ! राजगृह नगर के बाहर अर्जुनमाली यावत् छह पुरुषों और एक स्त्री इस प्रकार सात व्यक्तियों को प्रतिदिन मारता हुआ घूम रहा है। इसलिये तुम सारे नगर में मेरी आज्ञा को इस प्रकार प्रसारित करो कि कोई घास के लिये, काष्ठ, लकड़ी, पानी अथवा फल-फूल के लिये राजगृह नगर से बाहर न निकले। (यदि वे कहीं बाहर निकले तो ऐसा न हो कि) उनके शरीर का विनाश हो जाए।

हे देवानुप्रियो ! इस प्रकार दो-तीन बार घोषणा करके मुझे सूचित करो।

इस प्रकार राजाज्ञा पाकर राज्याधिकारियों ने राजगृह नगर में घूम-घूम कर उपर्युक्त राजाज्ञा की घोषणा की और घोषणा करके राजा को पुनः सूचित कर दिया।

Horror of Arjuna

Maxim 10 :

At that time, at the triangular paths, highways and all other open places of *Rājagṛha* city many people used to say to one another–O beloved as gods ! garland-maker *Arjuna*, being possessed by deity *Mudgarapāṇi*, murdering six men and one woman–thus seven persons daily, moving outside the city *Rājagṛha*.

When king *Śreṇika* came to know about this, then he called his chamberlains and ordered them–

O beloved as gods ! *Arjuna* garland-maker, wandering outside *Rājagṛha* city murdering 7 persons–six men and one woman everyday. Therefore you announce my order by these words–that no one must go out of city for taking

grass, wood, fuel, water and flowers, fruits etc. If any body goes out of the city, it is possible that his body may be destroyed *i.e.*, he may be murdered.

O beloved as gods ! Thus announce this declaration twice and thrice in whole city and report me soon.

Then those chamberlains announced the royal mandate twice and thrice wandering in the whole city and reported the king that his order has been carried out.

सूत्र ११ :

तत्थ णं रायगिहे णयरे सुदंसणे णामं सेट्ठी परिवसइ; अड्ढे जाव अपरिभूए । तए णं से सुदंसणे समणोवासए यावि होत्था । अभिगयजीवाजीवे जाव विहरइ ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे समोसढे जाव विहरइ ।

तए णं रायगिहे णयरे सिंघाडग जाव महापहेसु बहुजणो अण्णमण्णस्स एवमाइक्खइ—जाव किमंग पुण विउलस्स अट्ठस्स गहणयाए ?

सूत्र ११ :

उस राजगृह नगर में सुदर्शन नाम के एक सेठ रहते थे जो बहुत धनाढ्य यावत् अपराभूत थे । वे श्रमणोपासक थे और जीव-अजीव आदि नव तत्वों के ज्ञाता, यावत् श्रमणों को निर्दोष आहार आदि का प्रतिलाभ देने वाले थे ।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर स्वामी विहार करते हुए राजगृह नगर में पधारे और बाहर उद्यान में ठहरे ।

भगवान के आगमन का समाचार सुनकर राजगृह नगर के शृंगाटक, राजमार्ग आदि स्थानों में बहुत से नागरिक लोग परस्पर इस प्रकार वार्तालाप करने लगे—(हे देवानुप्रियो) श्रमण भगवान महावीर स्वामी यहां पधारे हैं, जिनके नाम गोत्र के सुनने मात्र से भी महान पुण्य फल होता

है, तो उनके दर्शन करने, वाणी सुनने तथा उनके द्वारा प्ररूपित धर्म का विपुल अर्थ ग्रहण करने से जो फल होता है, उसका तो कहना ही क्या? (वह तो अवर्णनीय है)।

Maxim 11 :

In that city *Rājagṛha* lived a richman named *Sudarśana.* He was too much wealthy and could not be surpassed by any one. He was worshipper of sages and well-versed in elements like soul and non-soul etc., until giver of pure food-water etc., to monks.

At that time and at that period *Bhagawāna Mahāvīra*, wandering village to village, arrived the city *Rājagṛha* and stayed in the garden situated outside of the city.

Having heard the information about arrival of *Bhagawāna*, the numerous citizens of *Rājagṛha* city gathering at triangualar ways and highways said thus to one another–(O beloveds as gods) *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has arrived here By hearing his name only one gets the fruits of great merit, then by seeing him, hearing his discourse and accepting the doctrines preached by him the fruit one gets, what to say about that ? (that cannot be described).

विवेचन

सुदर्शन सेठ के परिचय में–**अभिगय जीवाजीवे जाव विहरइ**–पाठ से, भगवती सूत्र २/५ में वर्णित श्रावकों के वर्णन अनुसार समझना चाहिए, यह सूचना दी गई है। उक्त स्थान पर श्रावक की धार्मिक विशेषताएं मनन करने योग्य हैं, जो इस प्रकार हैं–

"वे श्रमणोपासक–श्रावक थे और जीव-अजीव के अतिरिक्त पुण्य और पाप के स्वरूप को भी जानते थे। इसी प्रकार आस्रव, संवर, निर्जरा, क्रिया (कर्मबंध की कारणभूत पच्चीस प्रकार की क्रियाओं), अधिकरण (कर्मबंध का साधन–शस्त्र) तथा बंध और मोक्ष के स्वरूप के भी ज्ञाता थे। किसी भी कार्य में वे दूसरों की सहायता की अपेक्षा नहीं रखते थे। निर्ग्रन्थ प्रवचन में इतने दृढ़ थे

कि देव, असुर, यक्ष, राक्षस आदि भी उन्हें निर्ग्रन्थ प्रवचन से विचलित नहीं कर सकते थे। उन्हें निर्ग्रन्थ प्रवचन में शंका, कांक्षा, विचिकित्सा (फल में सन्देह) नहीं थी । उन्होंने शास्त्र के परमार्थ को समझ लिया था । वे शास्त्र का अर्थ-रहस्य निश्चित रूप से धारण किए हुए थे। उन्होंने शास्त्र के सन्देहजनक स्थलों को ज्ञानियों से पूछकर उनका विशेष रूप से निर्णय कर लिया था । उनकी हड्डियाँ और मज्जा सर्वज्ञ देव के धर्म-अनुराग से अनुरक्त हो रही थीं । निर्ग्रन्थ प्रवचन पर उनका अटूट प्रेम था । उनकी ऐसी श्रद्धा थी कि-आयुष्मन् ! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन ही सत्य है, परमार्थ है, परम सत्य है, अन्य सब अनर्थ (असत्यरूप) हैं। उनकी उदारता के कारण उनके भवन के दरवाजे की अर्गला ऊँची रहती थी, अर्थात् द्वार सबके लिये खुला रहता था । वे जिसके घर में या अन्तःपुर में जाते उसमें प्रीति एवं विश्वास उत्पन्न किया करते थे । वे शीलव्रत (पाँचों अणुव्रत), गुणव्रत, विरमण (रागादि से निवृत्ति), प्रत्याख्यान, पौषध, उपवास आदि का पालन करते तथा चतुर्दशी, अष्टमी, अमावस्या और पूर्णिमा के दिन परिपूर्ण पौषधव्रत किया करते थे । श्रमणों निर्ग्रन्थों को निर्दोष अशन, पान, खादिम और स्वादिम आहार, वस्त्र, पात्र, कम्बल, रजोहरण, पीठ, फलक, शय्या, संस्तारक, औषध और भेषज आदि का दान करते हुए महान् लाभ प्राप्त करते थे, तथा स्वीकार किये तप-कर्म के द्वारा अपनी आत्मा को भावित-वासित करते हुए विचरण कर रहे थे ।

Elucidation

In the introduction of *Śudarśana* words are given in original text *abhigaye jīvājīve java viharaī*. By these words should be understood the life and conduct of house-holders as described in *Bhagawatī Sūtra* (2/5). The special religious faculties are to be considered deeply. These are as follows and *Sudarśana Śresthī* was opulent with all these qualities.

He was worshipper of sages and religious, virtuous house-holder Beside the knower of soul and non-soul he was also well versed in conception of merits and demerits. In the same way, he was conversant about influx of *karmas*, checking of *karmas*, shedding off *karmas*, activities (causes of bondage of *karmas*–twentyfive types of activities), supports (means of *karma*-bondage) and the concept of bondage of *karmas* and salvation He did not seek assistance of any other in any work. He was so firmly steady in Jain doctrines (*Nirgrantha pravacana*–preachings of *tīrthaṁkaras)* that even gods, semigods, deities, demons etc., could not distract him. He had neither doubt nor desire and no suspense about the fruits of religion and religious activities. He had grasped the ultimte meaning of holy scriptures. He had retained the secret meanings of scriptures in a definite way. He had specially decided the suspicious points of

scriptures, enquiring from wise persons. His veins and bones were engrossed with the religious affection of omniscient's preachings. He had unbreakable love toward preachings of *tirthaṁkara*. He had such faith that the preachings of *Arihanta* are true, ultimate truth, out-topping and all others are without base (*untrue*). On account of his generosity the door-bolt of his house remained always high meaning his door was always remained open for all. Whenever he enter in any body's house and even in his seraglio, he generated love and trust in him. He observed householder's five small vows, virtuous vows and disinclination to attachment, refutation (*pratyākhyāna*), *pausadha*, fast penance etc., and full *pauṣadha* on the eighth, fourteenth, and fifteenth days of the lunar month. He ever took great advantage by giving faultless food, water, eatables, tasty things, cloths, utensils, blanket, duster (*rajoharana*), *pītha*, *phalaka*, bed, *samsatāraka*, medicine etc., to sages. He used to purify his soul by practising the accepted penanaces etc.

Life of *Sudarśan* was opulent with these ideal virtues of a religious householder

सूत्र १२ :

तए णं तस्स सुदंसणस्स बहुजणस्स अंतिए एयमट्ठं सोच्चा णिसम्म अयं अज्झत्थिए जाव समुप्पण्णे ।

एवं खलु समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ । तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि, णमंसामि ।

एवं संपेहेइ संपेहित्ता जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता करयलपरिग्गहियं जाव एवं वयासी—एवं खलु अम्मयाओ ! समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ । तं गच्छामि णं समणं भगवं महावीरं वंदामि णमंसामि जाव पज्जुवासामि ।

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो एवं वयासी—एवं खलु पुत्ता ! अज्जुणए मालागारे जाव घाएमाणे विहरइ, तं मा णं तुमं पुत्ता ! समणं भगवं महावीरं वंदए णिगच्छाहि, मा णं तव सरीरयस्स वावत्ती भविस्सइ ।

तुमं णं इहगए चेव समणं भगवं महावीरं वंदाहि णमंसाहि ।

तए णं सुदंसणे सेट्ठी अम्मापियरं एवं वयासी--

किण्णं अहं अम्मयाओ ! समणं भगवं महावीरं इहमागयं इह पत्तं इह समोसढं इह गए चेव वंदिस्सामि णमंसिस्सामि ? तं गच्छामि णं अहं अम्मयाओ !

तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए समाणे समणं भगवं महावीरं वंदामि जाव पज्जुवासामि ।

सूत्र १२ :

उस दिन बहुत से नागरिकों के मुख से राजगृह में भगवान् के पधारने का समाचार सुनकर उस सुदर्शन सेठ के मन में इस प्रकार का विचार उत्पन्न हुआ--

निश्चय ही, श्रमण भगवान महावीर नगर में पधारे हैं, और बाहर गुणशीलक उद्यान में विराजमान हैं, इसलिये मैं जाऊँ और उन श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार करूँ ।

ऐसा सोचकर सुदर्शन अपने माता-पिता के पास आये और हाथ जोडकर इस प्रकार बोले--हे माता-पिता ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी नगर के बाहर उद्यान में विराज रहे हैं, अतः मैं चाहता हूँ कि उनकी सेवा में जाऊँ और उन्हें वन्दन नमस्कार करूँ ।

सुदर्शन के मुख से यह बात सुनकर माता-पिता ने इस प्रकार कहा--हे पुत्र ! इस नगर के बाहर अर्जुनमाली छह पुरुष और एक स्त्री इस तरह सात व्यक्तियों को नित्य प्रति मारता हुआ घूम रहा है । इसलिए हे पुत्र ! तुम श्रमण भगवान महावीर को वंदन करने के लिए नगर के बाहर मत निकलो । नगर के बाहर निकलने से संभव है, तुम्हारे शरीर को कोई हानि हो जाये इसलिये यही अच्छा है कि तुम यहीं से श्रमण भगवान महावीर को वन्दन नमस्कार कर लो ।

तब सुदर्शन सेठ अपने माता-पिता से इस प्रकार बोले--

हे माता-पिता ! जब श्रमण भगवान महावीर यहां नगर में पधारे हैं। बाहर उद्यान में विराजे हैं, धर्म सभा में समवसृत हुए हैं तो मैं उनको यहीं से वंदना नमस्कार करूँ, यह कैसे हो सकता है ?

इसलिये माता-पिता ! आप मुझे आज्ञा दीजिए कि मैं वहीं जाकर श्रमण भगवान महावीर को वन्दना करूँ, नमस्कार करूँ, यावत् उनकी पर्युपासना करूँ ।

Maxim 12 :

Thus having heard the news of arrival of *Bhagawāna* outside *Rājagṛha* city, from many persons, such thoughts aroused in the mind of *Sudarśana Śreṣṭhī.*

Definitely, *Śramana Bhagawāna Mahāvīra* has come to *Rājagrha* and staying in *Guṇaśīlaka* garden, which is situated out of city Therefore I should go and bow down and worship him.

Thinking such, *Sudarśana* came to his parents and with folded hands spoke thus unto them–O parents ! *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has been staying in the garden, outside of city Hence I intend to go in his service and should bow down and worship him.

Hearing this, parents said to *Sudarśana*–O beloved son ! out of the city *Arjuna* garland-maker murdering seven persons–six men and one woman everyday, wandering. So our beloved son ! You must not go out of city for bowing down and worshipping *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra.* If you go out of city, it is possible that your body may be injured. Therefore it is better that you bow down and worship *Bhagawāna* from here.

Then *Sudarśana* said to his parents–When *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has come here and staying in the garden outside of city. Then how it is possible that I bow down and worship him from here ? So, O parents ! Please allow me that I go there and bow down, worship and serve him.

सूत्र १३ :

तए णं तं सुदंसणं सेट्ठिं अम्मापियरो जाहे णो संचायंति, बहूहिं आघवणाहिं जाव परूवेत्तए ।

तए णं से अम्मापियरो ताहे अकामया चेव सुदंसणं सेट्ठिं एवं वयासी--

अहासुहं देवाणुप्पिया !

तए णं से सुदंसणे सेट्ठी अम्मापिईहिं अब्भणुण्णाए समाणे ण्हाए सुद्धप्पावेसाइं जाव सरीरे, सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता, पायविहारचारेणं रायगिहं णयरं मज्झं मज्झेणं णिगच्छइ, णिगच्छित्ता मोग्गरपाणिस्स जक्खस्स जक्खाययणस्स अदूरसामंतेणं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे सुदंसणं समणोवासयं अदूरसामन्तेणं वीईवयमाणं पासइ, पासित्ता आसुरत्ते तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव पहारेत्थ गमणाए ।

सूत्र १३ :

उस सुदर्शन सेठ को माता-पिता जब अनेक प्रकार की युक्तियों से भी नहीं समझा सके, तब माता-पिता ने अनिच्छापूर्वक इस प्रकार कहा--

हे पुत्र ! फिर जिस प्रकार तुम्हें सुख उपजे वैसा करो !

इस प्रकार सुदर्शन सेठ ने माता-पिता से आज्ञा प्राप्त करके स्नान किया और धर्मसभा में जाने योग्य शुद्ध वस्त्र धारण किये । फिर अपने घर से निकला और पैदल ही राजगृह नगर से चलकर मुद्गरपाणि यक्ष के यक्षायतन से न अति दूर और न अति निकट से होते हुए गुणशीलक उद्यान की ओर, जहां श्रमण भगवान महावीर विराजते थे, उधर बढ़ने लगे ।

सुदर्शन सेठ को अपने यक्षायतन के पास से निकलते देखकर वह मुद्गरपाणि यक्ष (यक्षाविष्ट अर्जुन मालाकार) बड़ा क्रुद्ध हुआ । वह अपने

हजार पल के वजन वाले लोह मुद्गर को घुमाते हुए उसकी ओर आने लगा।

Maxim 13 :

When parents could not prevail upon and could not stop *Sudarśana*, by many devices and declarations then unwillingly they said--O son ! Do, as you feel happy.

Thus getting permission of parents, *Sudarśana Sreṣṭhī* bathed and put on clean clothes fit for religious assembly. Then went out from his house. Walking on-foot he went out of *Rājagrha* city. Passing not too far nor too near from sanctuary of *Mudgarapāni* deity he began to go to *Guṇasīlaka* garden, where *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* was staying.

Visualising *Sudarśana Śreṣṭhī* passing nearby his sanctuary that *Mudgarapāni* deity (garland-maker *Arjuna* possessed by deity) became very much angry. Brandishing his iron mace weighing one thousand *palas* (57 kilogram) walked forward towards him.

सूत्र १४ :

तए णं से सुदंसणे समणोवासए मोग्गरपाणिं जक्खं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता अभीए, अतत्थे, अणुव्विग्गे, अक्खुभिए, अचलिए, असंभंते, वत्थंतेणं भूमिं पमज्जइ, पमज्जित्ता करयल परिग्गहियं सिरसावत्तं दसनहं अंजलिं मत्थए कट्टु वयासी--णमोत्थु णं अरिहंताणं भगवंताणं जाव संपत्ताणं।

णमोत्थुणं समणस्स जाव संपाविउकामस्स।

पुव्वि च णं मए भगवओ महावीरस्स अंतिए थूलए पाणाइवाए पच्चक्खाए जावज्जीवाए-थूलए मुसावाए, थूलए अदिण्णादाणे, सदारसंतोसे कए जावज्जीवाए, इच्छा परिमाणे कए जावज्जीवाए तं इयाणिं पि णं तस्सेव अंतियं सव्वं पाणाइवायं पच्चक्खामि जावज्जीवाए, सव्वं मुसावायं, सव्वं

अदिण्णादाणं, सव्वं मेहुणं, सव्वं परिग्गहं पच्चक्खामि जावज्जीवाए । सव्वं कोहं जाव मिच्छादंसणसल्लं पच्चक्खामि जावज्जीवाए । सव्वं असणं, पाणं, खाइमं, साइमं चउव्विहं पि आहारं पच्चक्खामि जावज्जीवाए ।

जइ णं एत्तो उवसग्गाओ मुच्चिस्सामि तो मे कप्पइ पारेत्तए । अह णो एत्तो उवसग्गाओ न मुच्चिस्सामि तओ मे तहा पच्चक्खाए चेव त्ति कट्टु सागारं पडिमं पडिवज्जइ ।

सुदर्शन का सागारी प्रतिमा ग्रहण

सूत्र १४ :

उस समय उस क्रुद्ध मुद्‌गरपाणि यक्ष को अपनी ओर आता देखकर सुदर्शन श्रमणोपासक वहीं ठहर गये । मृत्यु की संभावना को जानकर भी किंचित् भी--भय, त्रास, उद्वेग अथवा क्षोभ को प्राप्त नहीं हुए । उनका हृदय तनिक भी विचलित अथवा भयाक्रान्त नहीं हुआ । उन्होंने निर्भय होकर अपने वस्त्र के अंचल से भूमि का प्रमार्जन किया । फिर पूर्व दिशा की ओर मुँह करके बैठे । बैठकर बाएं घुटने को ऊँचा किया और दोनों हाथ जोड़कर मस्तक पर अंजलि पुट रखा । इसके बाद इस प्रकार बोले--नमस्कार हो अरिहन्त भगवान यावत् मोक्ष प्राप्त सिद्धों को ।

नमस्कार हो श्रमण यावत् भविष्य में मुक्ति पाने वाले प्रभु महावीर को ।

मैंने पहले श्रमण भगवान महावीर के पास स्थूल प्राणातिपात का आजीवन त्याग (प्रत्याख्यान) किया, स्थूल मृषावाद का त्याग किया, स्थूल अदत्तादान का त्याग किया, स्वदार-सन्तोष और इच्छा-परिमाण रूप स्थूल परिग्रह विरमण व्रत जीवन-भर के लिये ग्रहण किया, अब उन्हीं भगवान महावीर स्वामी की साक्षी से संपूर्ण प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन और सम्पूर्ण परिग्रह का सर्वथा आजीवन त्याग करता हूँ । क्रोध, मान, माया, लोभ यावत् मिथ्यादर्शन शल्य तक १८ पापस्थानों का भी सर्वथा आजीवन त्याग करता हूँ । सब प्रकार का अशन, पान, खादिम और स्वादिम इन चारों प्रकार के आहार का त्याग करता हूँ !

सुदर्शन श्रावक
अर्जुन
स्तम्भित

चित्रक्रम २७ :

सुदर्शन पर आक्रमण

दृश्य १—सुनसान वीरान मार्ग पर सुदर्शन को अकेला आता देखकर मुद्‌गरपाणियक्षावेष्ठित अर्जुन मुद्‌गर घुमाता हुआ उसे मारने के लिए दौडा ।

दृश्य २—उस मुद्‌गरपाणि का उपसर्ग देखकर सुदर्शन ने भूमि साफ करके, एक घुटना टेककर भ. महावीर का स्मरण किया, वन्दना की और सागारी संथारा ग्रहण कर लिया । सुदर्शन के तेज प्रभाव के समक्ष अर्जुन स्तंभित-सा रह गया । मुद्‌गर ऊपर उठा रह गया । (वर्ग ६/अध्य ३)

Illustration No. 27 :

Aggression against Sudrsāna

Scene 1 Looking *Sudarśana* coming on barren path, murderer *Arjuna*, possessed by deity *Mudagarapāni* embalishing his mace ran to kill him

Scene 2 Looking *Arjuna* coming towards him, *Sudarśana*, sitting down on ground remembered *Bhagawāna Mahāvīra*, vowed down him and accepted *Sāgārī Samthārā* Due to the influence of *Sudarśana*, *Arjuna* stunned Upward mace remained upward (Sec 6/Ch 3)

यदि मैं इस घोर उपसर्ग से बच गया तो मुझे इस त्याग का पारणा करना कल्पता है। पर यदि इस उपसर्ग से न बच सकूँ तो मुझे इस प्रकार का सम्पूर्ण त्याग यावज्जीवन के लिए है।

ऐसा निश्चय करके उन सुदर्शन सेठ ने उपर्युक्त प्रकार से सागारी-पडिमा अनशन व्रत धारण कर लिया।

Acceptance of Sāgāri Pratimā by Sudarśana

Maxim 14 :

As *Sudarśana* householder saw that angry *Mudgarapāṇi* deity coming to him, he stopped at the place, he was. Though death was in front of him but he felt no fear neither sorrow. His heart not frightened a bit but remained unafraid, unterrified, unalarmed, undisturbed, unmoved and unperturbed. He fearlessly cleansed the ground by the flap of his garment and sat down facing east direction, made his left knee upward, folding both the hands put on his forehead, After that spoke thus–

Homage to *Arihanta Bhagawāna* until emancipateds. *Homage to Śramaṇa until to be emancipated in future to Mahāvīra.*

Even before, in presence of *Śramaṇa Bhagwāna Mahāvīra* I have accepted the vows of gross non-violence, truth, non-stealing, satisfaction in my own wife and limiting the desire of possessions–for my whole life. Now even, considering the presence of the same *Bhagawāna Mahāvīra*, I accept the full (great) vows of non-violence, truth, non-stealing, celibacy and non-possession. I also completely renounce anger, pride, deceit, greed, until false belief–eighteen types of sins for whole life. I also renounce all the four kinds of meals–food, water, eatables and nutrients (dainties)–for whole life.

If I be delivered from this calamity, it behoves me to follow it up; if I be not delivered from this calamity, I have already renounced all these.

Decided such, *Sudarśana Śreṣṭhī*, accepted *Sāgārī Paḍimā*, fast penance in aforesaid manner.

सूत्र १५ :

तए णं ते मोग्गरपाणि जक्खे तं पलसहस्स-णिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं उल्लालेमाणे उल्लालेमाणे जेणेव सुदंसणे समणोवासए तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता नो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए।

तए णं से मोग्गरपाणिजक्खे सुदंसणं समणोवासयं सव्वओ समंताओ परिघोलेमाणे परिघोलेमाणे जाहे नो चेव णं संचाएइ सुदंसणं समणोवासयं तेयसा समभिपडित्तए।

ताहे सुदंसणस्स समणोवासयस्स पुरओ सपक्खिं सपडिदिसिं ठिच्चा सुदंसणस्स समणोवासयं अणिमिसाए दिट्ठीए सुचिरं णिरिक्खइ।

णिरिक्खित्ता अज्जुणयस्समालागारस्स सरीरं विप्पजहाइ; विप्पज्जहित्ता तं पलसहस्सणिप्फण्णं अयोमयं मोग्गरं गहाय जामेव दिसं पाउब्भूए तामेव दिसं पडिगए।

उपसर्ग निवारण

सूत्र १५ :

इधर वह मुद्गरपाणि यक्ष उस हजार पल के लोहमय मुद्गर को घुमाता-उछालता हुआ जहां सुदर्शन श्रमणोपासक था, वहां आया। परन्तु सुदर्शन श्रमणोपासक को अपने तेज से अभिभूत नहीं कर सका अर्थात् उसे किसी प्रकार से कष्ट नहीं पहुँचा सका।

मुद्गरपाणि यक्ष सुदर्शन श्रावक के चारों ओर घूमता रहा और जब उसको अपने तेज से पराजित नहीं कर सका, उस पर मुद्गर नहीं उठा सका,

तब सुदर्शन श्रमणोपासक के बिल्कुल सामने खड़ा हो गया और अनिमेष दृष्टि से बहुत देर तक उन्हें देखता रहा।

इसके बाद उस मुद्गरपाणि यक्ष ने सुदर्शन के तेज से पराजित होकर अर्जुनमाली के शरीर को छोड़ दिया और उस हजार पल वाले लौहमय मुद्गर को लेकर जिस दिशा से आया था, उसी दिशा की ओर चला गया।

End of Trouble

Maxim 15 :

That *Mudgarapāṇi* deity came to the sage-worshipper *Sudarśana* brandishing his iron mace weighing one thousand *palas*. But could not overpower him, meaning could not hurt him.

Mudgarapāṇi deity moved oft and on round about *Sudarśana* sage-worshipper and when could not overpower him by his strength, could not even raise his mace upon him, then he stood in front of *Sudarśana* sage-worshipper and began to gaze him with unwinking eyes for a long time.

Thereafter overpowered by the spiritual strength of *Sudarśana*, that *Mudgarapāṇi* deity, left the body of *Arjuna* garland-maker and taking his iron mace weighing one thousand *palas* returned to the direction from which he had come.

सूत्र १६ :

तए णं से अज्जुणएमालागारे मोग्गरपाणिणा जक्खेणं विप्पमुक्के समाणे धस त्ति धरणियलंसि सव्वंगेहिं णिवडिए।

तए णं से सुदंसणे समणोवासए णिरुवसग्गमिति कट्टु पडिमं पारेइ।

तए णं से अज्जुणए मालागारे तओ मुहुत्तंतरेणं आसत्थे समाणे उट्ठेइ; उट्ठित्ता सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी—

"तुम्भे णं देवाणुप्पिया ! के ? कहिं या संपत्थिया ?"

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणयं मालागारं एवं वयासी–

एवं खलु देवाणुप्पिया ! अहं सुदंसणे णामं समणोवासए, अभिगयजीवाजीवे गुणसिलए चेइए समणं भगवं महावीरं वंदिउं संपत्थिए ।

सूत्र १६ :

मुद्गरपाणि यक्ष से मुक्त होते ही वह अर्जुन मालाकार "धस" इस प्रकार के शब्द के साथ धड़ाम से भूमि पर गिर पड़ा ।

तब सुदर्शन श्रमणोपासक ने स्वयं को उपसर्ग मुक्त हुआ जानकर सागारी त्याग-प्रत्याख्यान रूपी अपनी प्रतिज्ञा को पाला (और अपना ध्यान खोला)। इधर वह अर्जुन मालाकार मुहूर्त भर (कुछ समय) के पश्चात् आश्वस्त एवं स्वस्थ होकर उठा और सुदर्शन श्रमणोपासक को सामने देखकर इस प्रकार बोला–हे देवानुप्रिय ! आप कौन हो, तथा कहां जा रहे हो ?

यह सुनकर सुदर्शन श्रमणोपामक अर्जुनमाली से इस प्रकार बोला–हे देवानुप्रिय ! मैं जीवादि नौ तत्वों का ज्ञाता सुदर्शन नाम का श्रमणोपासक हूँ और गुणशीलक उद्यान में श्रमण भगवान महावीर को वंदन नमस्कार करने जा रहा हूँ ।

Maxim 16 :

Abandoned by *Mudgarapāṇi* deity the garland-maker *Arjuna* fell on the ground with the sound of '*dhus*' with all his limbs.

Then *Sudarśana* sage-worshipper, knowing himself free from calamity, completed his resolve of *Sāgārī* renouncements and refutals. He also completed his meditation.

Then that *Arjuna* garland-maker, on coming back to senses after awhile got up and seeing *Sudarśana* in front he spoke thus to him–O beloved as gods ! Who are you and where are you going ?

मुदगर पाणि
यक्ष का पलायन

चित्रक्रम २८ :

यक्ष पराभूत और अर्जुन को उद्‍बोधन

दृश्य १–सुदर्शन के तेज प्रभाव से परास्त हुआ मुद्‍गरपाणि यक्ष अर्जुन की देह से निकलकर भाग गया। अर्जुन भूमि पर धडाम से गिर पडा। तब सुदर्शन ने मधुर वचनों से पुकारते हुए उसे उठाया और सान्त्वना दी।

दृश्य २–अर्जुन के पूछने पर सुदर्शन ने बताया–मै अपने धर्मगुरु भगवान महावीर की वन्दना करने जा रहा हूँ। अर्जुन ने कहा–मै भी इन महापुरुष की वन्दना करके अपने घोर पापो का प्रायश्चित्त करना चाहता हूँ। (वर्ग ६/अध्य ३)

Illustration No. 28 :

Deity defeated and awakening of Arjuna

Scene 1 Defeated by the spiritual influence of *Sudarśana*, deity *Mudgarapāṇi* left the body of *Arjuna* and went away *Arjuna* fell down on earth with all limbs Then *Sudarśana* get him up and with sweet words consolated him

Scene 2. When *Arjuna* asked *Sudarśana* told–I am going to bow down my religious preacher *Bhagawāna Mahavīra* *Arjuna* also expressed his wish that I also want bowing down *Bhagawāna* and repent for my severe sins (Sec 6/Ch 3)

Hearing these words *Sudarśana* spoke thus to *Arjuna* garland-maker–O beloved as gods ! I am, knower of nine elements, *Sudarśana* sage-worshipper. I am going to garden *Guṇaśīlaka*, to offer my respects to *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*.

सूत्र १७ :

तए णं से अज्जुणए मालागारे सुदंसणं समणोवासयं एवं वयासी–तं इच्छामि णं देवाणुप्पिया ! अहमवि तुमए सद्धिं समणं भगवं महावीरं वंदित्तए जाव पज्जुवासित्तए ।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह !

तए णं से सुदंसणे समणोवासए अज्जुणएणं मालागारेणं सद्धिं जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ; उवागच्छित्ता अज्जुणए णं मालागारेणं सद्धिं समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो जाव पज्जुवासइ ।

तए णं समणे भगवं महावीरे सुदंसणस्स समणोवासयस्स अज्जुणयस्स मालागारस्स तीसे य धम्मकहा । सुदंसणे पडिगए ।

अर्जुन भगवद् शरण में

सूत्र १७ :

यह सुनकर अर्जुनमाली सुदर्शन श्रमणोपासक से इस प्रकार बोला–हे देवानुप्रिय ! मैं भी तुम्हारे साथ श्रमण भगवान महावीर की वन्दना नमस्कार करना यावत् सेवा करना चाहता हूँ ।

श्रेष्ठी सुदर्शन ने कहा–हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो वैसा करो । विलम्ब मत करो !

इसके बाद वह सुदर्शन श्रमणोपासक अर्जुनमाली के साथ जहां गुणशीलक उद्यान में श्रमण भगवान् महावीर विराजमान थे, वहां आया और अर्जुनमाली के साथ श्रमण भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा पूर्वक वन्दन-नमस्कार कर उनकी सेवा करने लगा ।

उस समय श्रमण भगवान् महावीर स्वामी ने सुदर्शन श्रमणोपासक, अर्जुनमाली (और उस विशाल सभा के सम्मुख) धर्म देशना दी। सुदर्शन धर्म देशना सुनकर अपने घर लौट गया।

Arjuna under the refuge of Bhagawāna

Maxim 17 :

Hearing this *Arjuna* garland-maker said to *Sudarśana* sage-worshipper–O beloved as gods ! I too want to accompany you and bow down and worship *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra.*

Sudarśana accorded–Do as you feel happy. But do not delay.

Thereafter *Arjuna* with *Sudarśana* reached to *Guṇaśīlaka* garden. There he thrice bowed down and worshipped *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra.*

Then *Bhagawāna Mahāvīra* bestowed sermon to *Arjuna, Sudarśana* and huge public congregation. Listening sermon, *Sudarśana* returned to his home.

सूत्र १८ :

तए णं से अज्जुणए मालागारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ एवं वयासी—सद्दहामि णं भंते ! निग्गंथं पावयणं जाव अब्भुट्ठेमि।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह !

तए णं से अज्जुणए मालागारे उत्तर पुरच्छिमे दिसिभाए अवक्कमइ; अवक्कमित्ता सयमेव पंचमुट्ठियं लोयं करेइ; करित्ता जाव अणगारे जाए जाव विहरइ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे जं चेव दिवसं मुण्डे जाय पव्वइए तं चेव दिवसं समणं भगवं महावीरं वंदइ णमंसइ; वंदित्ता णमंसित्ता इमं एयारूवं अभिग्गहं उग्गिण्हइ—

चित्रक्रम २९ :

भगवान महावीर की शरण में अर्जुन

दृश्य १—सुदर्शन के साथ अर्जुन मालाकार भी भगवान महावीर के समवसरण मे आया। धर्म उपदेश सुना। अपने दुष्कर्मो पर पश्चात्ताप करते हुए उसने भगवान से प्रार्थना की—"भन्ते! मेरे उद्धार और कल्याण का मार्ग बताइए।"

दृश्य २—भगवान महावीर द्वारा बताये हुए क्षमा एव तप मार्ग को स्वीकार कर हत्यारा अर्जुन अब अणगार अर्जुन बन गया। भगवान के समक्ष हाथ जोडकर उसने जीवन भर बेले-बेले (दो-दो दिन का उपवास) तप का सकल्प लिया और अपने कृत पापो का प्रक्षालन करने मे जुट गया। (वर्ग ६/अध्य. ३)

Illustration No. 29 :

Arjuna in the patronage of Bhagawāna Mahāvīra

Scene 1 *Arjuna* also went to the religious congregation of *Bhagawāna Mahāvīra* with *Sudarśana* Religious discourse listened Repenting for his sins *Arjuna* prayed to *Bhagawāna–Bhante* ! Tell me the path of my reformation and deliverance

Scene 2 Accepting the path of forgiveness and peace, as told by *Bhagawāna Mahāvīra,* murderer *Arjuna* became a houseless mendicant Folding his hands to *Bhagawāna*, he accepted the *Bele-Bele* (two days' fast, third day to take food) penance for whole life, and began to shed off all his misdeeds (Sec 6/Ch. 3)
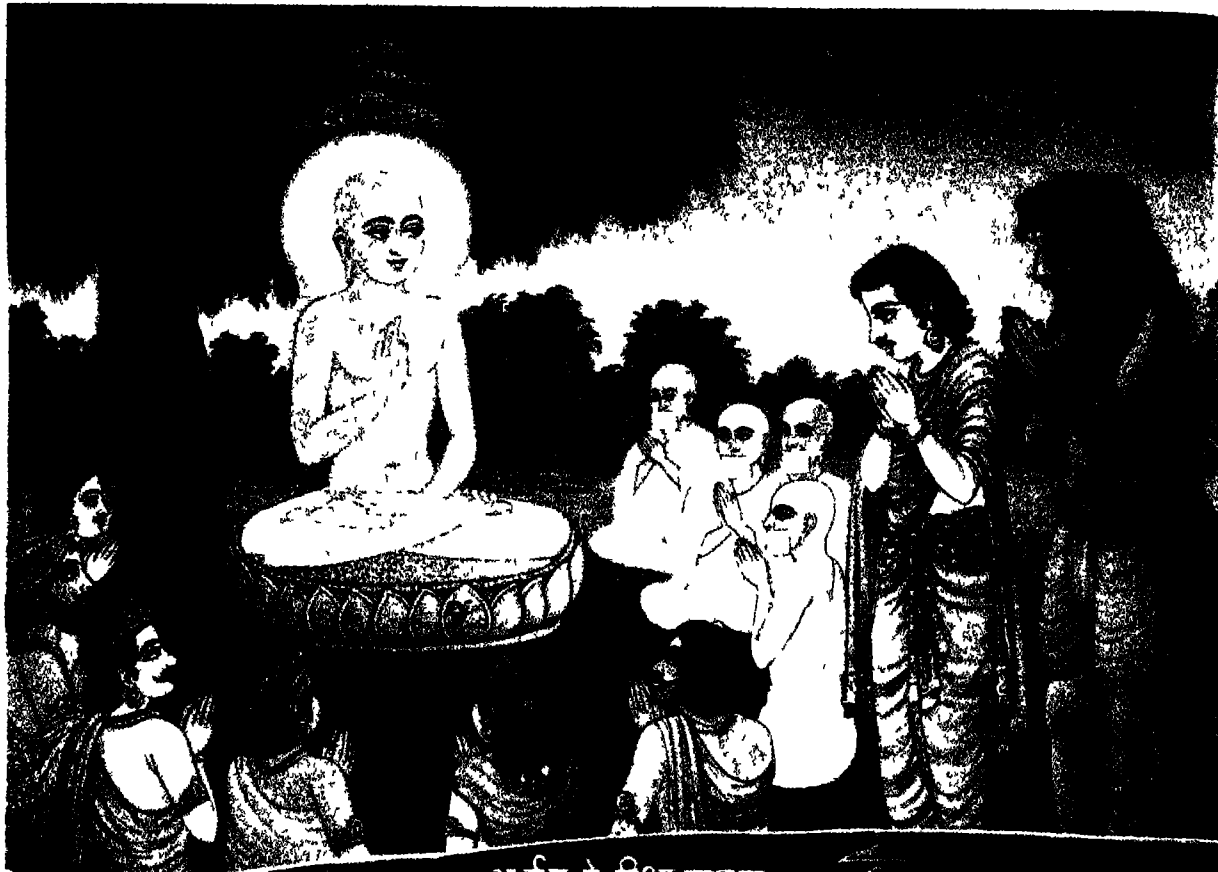
अर्जुन ने दीक्षा ग्रहण
कर बेले बेले
तप स्वीकारा

कप्पइ मे जावज्जीवाए छट्ठं छट्ठेणं अणिक्खित्तेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणस्स विहरित्तए ।

त्ति कट्टु अयमेयारूवं अभिग्गहं उग्गिण्हइ; उग्गिण्हित्ता जावज्जीवाए जाव विहरइ ।

सूत्र १८ :

तब अर्जुनमाली श्रमण भगवान महावीर के पास धर्मोपदेश सुनकर एवं हृदय में धारण कर बड़ा प्रसन्न हुआ, संतुष्ट हुआ। प्रभु महावीर से इस प्रकार निवेदन करने लगा–हे भगवन् ! मैं आप द्वारा कहे हुए निर्ग्रन्थ प्रवचन पर श्रद्धा करता हूँ, रुचि करता हूँ, यावत् आपके चरणों में दीक्षा धारण कर अपने कृत पापों से मुक्त होना चाहता हूँ ।

प्रभु महावीर ने कहा–हे देवानुप्रिय ! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो ।

विलम्ब मत करो !

तब उस अर्जुनमाली ने ईशान कोण में जाकर स्वयं ही पंचमौष्टिक लुंचन किया, लुंचन करके वे अनगार हो गये, और संयम व तप पूर्वक विचरने लगे। अर्जुनमाली अब अर्जुन मुनि हो गये ।

इसके पश्चात् अर्जुन मुनि ने जिस दिन मुण्डित होकर प्रव्रज्या ग्रहण की, उसी दिन श्रमण भगवान महावीर के चरणों में उपस्थित होकर वंदना नमस्कार करके, इस प्रकार का अभिग्रह–दृढ़ संकल्प धारण किया–"आज से मैं निरन्तर बेले-बेले की तपस्या से जीवन पर्यन्त आत्मा को भावित करते हुए विचरूँगा ।"

ऐसा अभिग्रह जीवन भर के लिये स्वीकार कर अर्जुन अणगार राजगृह नगर में विचरने लगे ।

Maxim 18 :

Then *Arjuna* garland-maker, hearing and taking to heart the sermon of *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* became very much glad and satisfied, and politely said to *Bhagawāna*–O *Bhagawan* ! I have faith, interest and belief in *Nirgrantha Pravacana*– the doctrines as

preached by you until I intend to accept consecration in your lotus feet so that I can be free from the sins done by me.

Prabhu said–Do, as you feel happy. Do not delay.

Then *Arjuna* garland-maker went to east-north direction, tonsured his hairs by his own five fists and became homeless mendicant. Now garland-maker *Arjuna* became *Arjuna* monk. He began to practise restrain and austerity.

Thereafter the day on which *Arjuna* monk accepted consecration with shaven head, he went to *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*, bowed down and worshipped him and then accepted firm resolution of the sort–I will practise two days' fast penance (and third day to take meal) constantly till life.

Accepting such firm resolution *Arjuna* monk began to wander in *Rājagṛha* city.

सूत्र १९ :

तए णं से अज्जुणए अणगारे छट्ठक्खमणपारणयंसि पढमपोरिसीए सज्झायं करेइ, जहा गोयमसामी जाव अडइ।

तए णं तं अज्जुणयं अणगारं रायगिहे णयरे उच्च-णीय जाव अडमाणं बहवे इत्थियाओ य पुरिसा य डहरा य महल्ला य जुयाणा य एवं वयासी– "इमेणं मे पिया मारिए, इमेणं मे माया मारिया, भाया, भगिणी, भज्जा, पुत्ते, धूया, सुण्हा मारिया, इमेणं मे अण्णयरे सयण-संबंधि-परियण मारिए" त्ति कट्टु अप्पेगइया अक्कोसंति अप्पेगइया हीलंति, णिंदंति, खिंसंति, गरिहंति, तज्जेंति, तालेंति।

परीषह सहन : मोक्ष गमन

सूत्र १९ :

इसके पश्चात् अर्जुन अणगार बेले की तपस्या के पारणे के दिन प्रथम प्रहर मं म्वाध्याय करते हुए यावत् (इनकी चर्या गौतम स्वामी की तरह

चित्रक्रम ३० :

महामुनि अर्जुन का अपूर्व तितिक्षा भाव

दृश्य १–अर्जुन अणगार पारणे के लिए जब राजगृह नगर मे भिक्षा के लिए निकलते तो कोई कहता–इसने मेरे पिता की हत्या की है, कोई भाई, बहन, पत्नी, पुत्र आदि का हत्यारा बताकर उन पर पत्थर फेंकते, लाठी और बेतों से पीटते, गालियाँ देते, दुर्वचन कहते । परन्तु अर्जुन अणगार सोचते–यह मेरे कृत कर्मो का ही फल है, क्षमा करना परमधर्म है । और वे शान्त रहते ।

दृश्य २–छह मास तक कठोर तप करते हुए अपने पाप कर्मो का नाश करके अर्जुन अणगार ने विपुलाचल पर्वत पर मासिक सथारा पूर्वक मोक्ष प्राप्त किया । (वर्ग ६/अध्य. ३)

Illustration No. 30 :

Matchless tolerance of sage Arjuna

Scene 1 When *Arjuna* monk go to *Rajagrha* city for seeking food and water then some persons say–he has killed my father, some others say–he has killed my brother, sister, wife, son etc , and throw stones on him, beat him by canes and sticks, rebuke him But monk *Arjuna* think–this is the fruition of my ill-deeds Forgiveness is the highest virtue And he remain calm

Scene 2 By the penance of six months he exhausted all his *karmas*, and emancipated at *Vīpulācala* mount with the *samthārā* of one month (Sec 6/Ch 3)
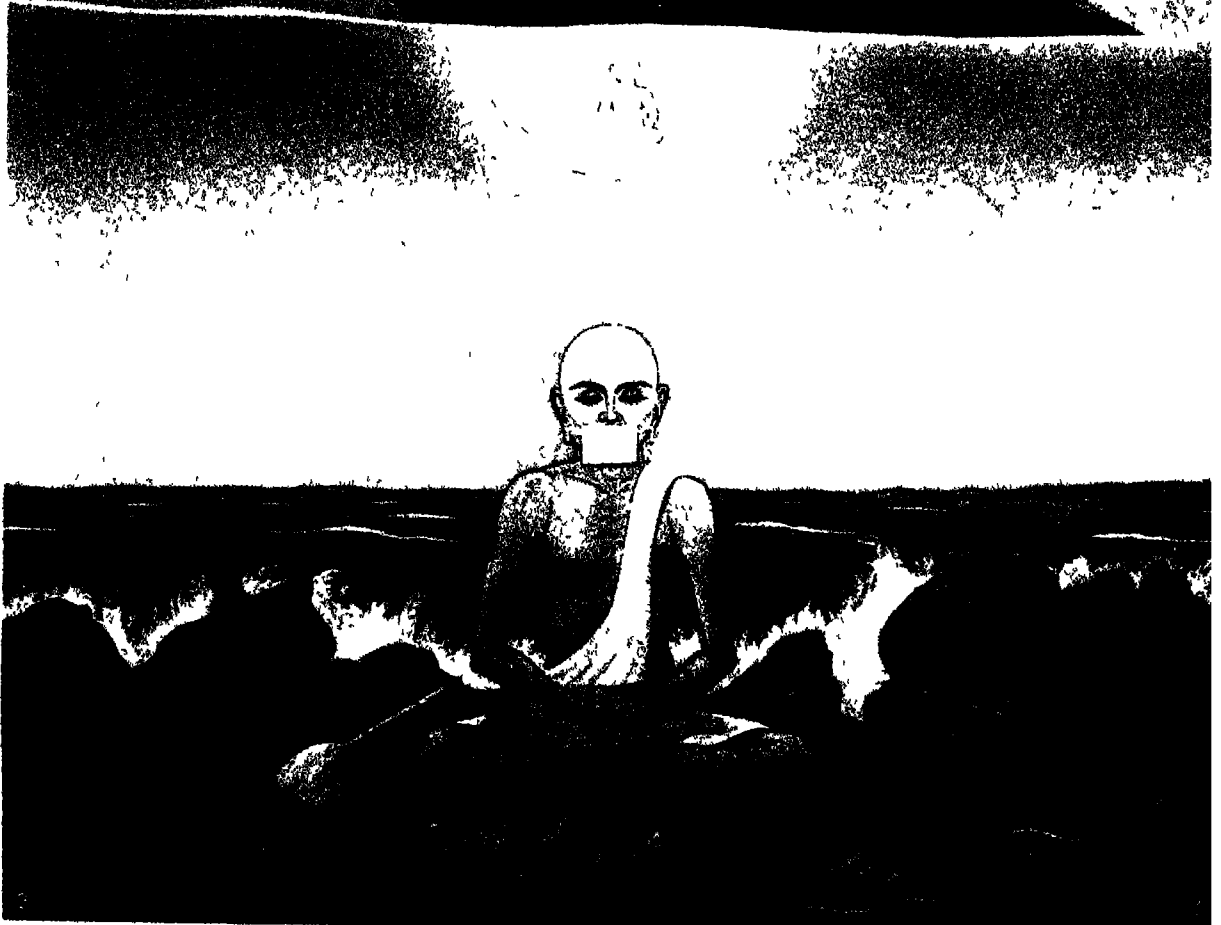
जानना चाहिए) अर्थात् दूसरे प्रहर में ध्यान करके तीसरे प्रहर में राजगृह नगर में भिक्षार्थ भ्रमण करने लगे ।

उस समय उस अर्जुन मुनि को राजगृह नगर में उच्च-नीच-मध्यम कुलों में भिक्षार्थ घूमते हुए देखकर नगर के अनेक नागरिक स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध इस प्रकार कहते थे–

"इसने मेरे पिता को मारा है, इसने मेरी माता को मारा है, भाई को मारा है, बहन को मारा है, भार्या को मारा है, पुत्र को मारा है, कन्या को मारा है, पुत्रवधु को मारा है एवं इसने मेरे अमुक स्वजन सम्बन्धी परिजन को मारा है ।"

ऐसा कहकर कोई उन्हें गाली देता, कोई हीलना करता, अनादर करता, निन्दा करता, कोई जाति आदि का दोष बताकर झुंझला उठता, गर्हा करता, कोई भय बताकर तर्जना करता, और कोई थप्पड़, ईंट, पत्थर, लाठी आदि से भी मारता था ।

Troubles Conquered : Salvation Attained

Maxim 19 :

Thereafter *Arjuna* monk on the fast breaking day in the first *prahara* study the scriptures, in second meditation until (to be understood like *Gautama Swāmī)* and in the third *prahara* sally forth for seeking meals wander in *Rājagṛha* city.

At that time seeing *Arjuna* mendicant wandering for seeking meals in the high-low and middle class families, many citizens–men-women, boys-oldmen used to say–

He has murdered my father, my mother, my brother, my sister, my wife, my són, my daughter, my daughter-in-law and other kith and kin etc.

Saying thus some abused him, some caviled at him, chided, censured, rebuked, reviled, look down upon him in contempt, some struck him by slap, brick, stone and stick etc.

सूत्र २० :

तए णं से अज्जुणए अणगारे तेहिं बहूहिं इत्थीहिं य पुरिसेहिं य डहरेहिं य मल्लेहिं य जुवाणएहिं य आओसेज्जमाणे जाव तालेज्जमाणे तेसिं मणसा वि अपउस्समाणे सम्मं सहइ, सम्मं खमइ, सम्मं तितिक्खइ, सम्मं अहियासेइ, सम्मं सहमाणे, खममाणे, तितिक्खमाणे, सम्मं अहियासमाण रायगिहे णयरे उच्च-णीय-मज्झिमकुलाइं अडमाणे जइ भत्तं लभइ तो पाणं ण लभइ, जइ पाणं लभइ तो भत्तं ण लभइ ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे अदीणे, अविमणे, अकलुसे, अणाइले, अविसाई, अपरितंतजोगी, अडइ ।

अडित्ता रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ । पडिणिक्खमित्ता जेणेव गुणसिलए चेइए जेणेव समणे भगवं महावीरे जहा गोयमसामी जाव पडिदंसेइ; पडिदंसित्ता समणेणं भगवया महावीरेणं अब्भणुण्णाए समाणे अमुच्छिए अगिद्धे बिलमिव पण्णगभूएणं अप्पाणेणं तमाहारं आहारेइ ।

सूत्र २० :

इस प्रकार बहुत से स्त्री-पुरुषों, बच्चों, बूढ़ों और जवानों से आक्रोश, गाली एवं विविध प्रकार की ताड़ना-तर्जना आदि पाकर भी वे अर्जुन अणगार उन पर मन से भी द्वेष नहीं करते हुए उनके द्वारा दिये गये सभी परीषहों को समभावपूर्वक सहन करते (**सम्मं सहमाणे**) प्रतीकार कर सकने की स्थिति में होते हुए भी क्षमा भाव धारण करते (**खममाणे**) उन कष्टों को प्रसन्नतापूर्वक झेल लेते (**तितिक्खमाणे**) एवं निर्जरा का लाभ समझकर (**अहियासेमाणे**) हर्षानुभव करते। सम्यग् ज्ञान पूर्वक उन सभी संकटों को सहन करते, क्षमा करते, तितिक्षा रखते, और उन कष्टों को भी आत्म-लाभ का हेतु मानते हुए राजगृह नगर के छोटे-बड़े-मध्यम कुलों में भिक्षा हेतु भ्रमण करते। तब उन अर्जुन अणगार को कहीं कभी भोजन मिलता तो पानी नहीं मिलता, और पानी मिलता तो भोजन नहीं मिलता था ।

वैसी स्थिति में जो भी और जैसा भी अल्प स्वल्प मात्रा में प्रासुक भोजन उन्हें मिलता, उसे वे सर्वथा अदीन, अविमन, (शान्तचित्त) अकलुष, (मलिनता रहित), अविषाद–आकुलता–व्याकुलता रहित, समाधि भाव के साथ ग्रहण करते थे, अर्थात् दैन्य भाव नहीं लाते हुए, मन को मैला नहीं करते हुए, अशुभ भावों का वर्जन करते हुए, विषाद-खेद नहीं करते हुए, तनतनाट से रहित अर्जुन अणगार ने निर्मल भावों से भिक्षाचरी तप की आराधना की ।

इस प्रकार वे भिक्षार्थ भ्रमण करते । भ्रमण करके वे (वापस) राजगृह से निकलते और गुणशीलक उद्यान में, जहां श्रमण भगवान महावीर विराजमान थे, वहां आते और वहाँ आकर गौतम स्वामी की तरह भिक्षा में जो प्राप्त हुआ उस आहार-पानी प्रभु महावीर को दिखाते और दिखाकर उनकी आज्ञा पाकर मूर्च्छा रहित, जिस प्रकार बिल में सर्प सीधा ही प्रवेश करता है, उस प्रकार राग-द्वेष एवं आसक्ति रहित होकर उस आहार-पानी का सेवन करते थे ।

Maxim 20 :

Thus getting abuse, chide, rebuke, revile, contempt, struck etc., from many men, women, children, youths, aged persons, youngs; that *Arjuna* mendicant not becoming wrathful towards them even by mind, bore all the calamities given by them with even mind, being in the position to take revenge accepted forgiveness, bore those troubles gladly and understanding the benefit of shedding off *karmas* felt happiness, bore all those hardships with right knowledge, pardon them and considering all those troubles cause of soul-benefit, wander in high-low-middle class families of *Rājagṛha* city seeking meals. In these circumstances, when he got food, he did not get water and when got water did not get food.

In this position whatever he got a little but faultless he accept that never becoming sorrowful, despirited with mind not turbid, unperturned, ungrieved, not exhausted in self-

respect, i.e., never filled with despiritedness, making mind fifthy, avoiding inauspicious thoughts, never becoming sorrowful, remaining contemplated by all the three activities (*Yoga*) of mind, speech and body, *Arjuna* mendicant practised to seek for alms penance.

Thus he wander for seeking alms. Wandering he come out of city, reach *Guṇaśīlaka* garden and to *Śramaṇa Bhagawāna Mahavīra* and like *Gautama Swāmī*, show that food and water to *Bhagawāna* and then getting his permission took meal without the feeling of myness, attachment-detachment and inclination, like a serpent enters in the hole.

सूत्र २१ :

तए णं समणे भगवं महावीरे अण्णया कयाइं रायगिहाओ णयराओ पडिणिक्खमइ; पडिणिक्खमित्ता बहिं जणवयविहारं विहरइ ।

तए णं से अज्जुणए अणगारे तेणं ओरालेणं विउलेणं पयत्तेणं पग्गहिएणं महाणुभागेणं तवोकम्मेणं अप्पाणं भावेमाणे बहुपडिपुण्णे छम्मासे सामण्ण-परियागं पाउणइ, अद्धमासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसेइ, तीसं भत्ताइं अणसणाइं छेदेइ; छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ नग्गभावे जाव सिद्धे ।

(तइयं अज्झयणं समत्तं)

सूत्र २१ :

फिर श्रमण भगवान महावीर किसी दिन राजगृह नगर के उस गुणशीलक उद्यान से निकलकर बाहर जनपदों में विहार करने लगे ।

उस महाभाग अर्जुन मुनि ने उस उदार, श्रेष्ठ, पवित्र, भाव से ग्रहण किये गये महालाभकारी (**महाणुभागेणं**–विशिष्ट प्रभावशाली) विपुल तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए पूरे छः महीने मुनिधर्म का पालन किया । इसके बाद आधे मास (पन्द्रह दिन) की संलेखना से अपनी आत्मा को भावित कर तीस भक्त के अनशन को पूर्ण कर जिस कार्य के लिये मुनिधर्म

ग्रहण किया, उसको पूर्ण कर वे अर्जुन अणगार यावत् सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गये ।

Maxim 21 :

Then *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* going out of that *Guṇaśīlaka* garden began to wander in other areas.

Then that greatly fateful *Arjuna* mendicant completed his six months' period of sagehood exercising himself by that noble abundant zealous, specially beneficial penances full well; and then wasted himself by a fast penance of half-month *i.e.*, a fortnight, cut off thirty meals, accepted *saṁlekhanā* and attained the purpose for which he had accepted consecration, *i.e*, beatified until salvated.

विवेचन

श्रेणिक चरित्र आदि ग्रंथो में लिखा है कि अर्जुनमाली के शरीर में मुद्‌गरपाणि यक्ष का पाँच मास १३ दिनों तक प्रवेश रहा । उससे उसने ११४१ व्यक्तियों का प्राणान्त किया । इसमें ९७८ पुरुष और १६३ स्त्रियाँ थीं । इससे स्पष्ट प्रमाणित होता है कि वह प्रतिदिन सात व्यक्तियों की हत्या करता रहा ।

यहाँ एक आशंका होती है कि जिस व्यक्ति ने इतना बड़ा प्राणिवध किया और पाप कर्म से आत्मा का महान् पतन किया, उस व्यक्ति को केवल छह मास की साधना से कैसे मुक्ति प्राप्त हो गई ?

उत्तर यह है कि तप में अचिन्त्य, अतर्क्य एवं अद्‌भुत शक्ति है। आगम कहता है "**भवकोडिसंचियं कम्मं तवसा निज्जरिज्जई ।**" अर्थात् करोड़ों भवों से संचित किये-बांधे कर्म भी तपश्चर्या द्वारा नष्ट किए जा सकते हैं ।

जब तीव्रतर तप की अग्नि प्रज्वलित होती है तो कर्मों के दल के दल सूखे घास-फूँस की तरह भस्मसात् हो जाते हैं ।

इसके अतिरिक्त प्रस्तुत प्रसंग में यह भी कहा जा सकता है कि अर्जुनमालाकार द्वारा जो वध किया गया, वह वस्तुतः यक्ष द्वारा किया गया वध था। अतएव मनुष्यवध योग्य कषाय परिणामों की तीव्रता उसमें संभव नहीं है । अर्जुन का हृदय सरल, मंदकषायी प्रतीत होता है, किन्तु यक्षावेश के कारण वह क्रोध में हत्यारा बन बैठा । (तृतीय अध्ययन समाप्त)

Elucidation

It is mentioned in *Śreṇika caritra* etc. religious compositions that the body of *Arjuna* garland-maker was possessed by deity *Mudgarapāṇi* upto five months and thirteen days. By this he murdered 1141 persons. Among them were 978 men and 163 women This clearly proves that every day he used to kill 7 persons.

Here one doubt arouses that the person who had done such huge violence and degraded his soul to the lowest degree by this sinful deed, how that man attained salvation by only six months' propiliation ?

This doubt can be rectified thus–that penance had unconsiderable, unlogical and strange strength As *Āgama* asserts–The ill-deeds (*karmas*) accumulated in crores of births can be exhausted by penance.

When the fire of most excessive penance burns then the masses of *karmas* are reduced to ashes like dry grass and straw

Besides this, it also can be said in this context that the murder done by *Arjuna* garland-maker, was really done by the deity Therefore the extremity of passions, responsible for killing persons, was not possible in *Arjuna* garland-maker The heart of *Arjuna* garland-maker was simple and little-passioned, but due to the possession of deity (*Yakṣa*) he turned to a murderer or assassin

[Third chapter consumed]

चतुर्थ अध्ययन

सूत्र २२ :

उक्खेवओ चउत्थस्स अज्झयणस्स ।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए ।

तत्थ णं सेणिए राया । कासवे णामं गाहावई परिवसइ । जहा मंकाई सोलसवासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।

सूत्र २२ :

जम्बू स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! छठे वर्ग के तीसरे अध्ययन में प्रभु महावीर ने जो भाव कहे, वे मैंने सुने। अब चौथे अध्ययन में प्रभु ने क्या भाव परमाये हैं? वह कृपाकर मुझे बताइये।

सुधर्मा स्वामी कहते हैं–हे जम्बू ! उस काल उस समय राजगृह नगर में गुणशीलक नामक उद्यान था। वहां श्रेणिक राजा राज्य करता था। वहां कश्यप नाम का एक गाथापति रहता था। उसने मंकाई की तरह सोलह वर्ष तक दीक्षा पर्याय का पालन किया और अन्त समय में विपुलगिरि पर जाकर संथारा आदि करके वह सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गया।

(चतुर्थ अध्ययन समाप्त)

Chapter 4

Maxim 22 :

Jambū Swāmī asked politely–O *Bhagawan* ! I have heard the subject matter of third chapter of sixth section from you as preached by *Prabhu Mahāvīra.* Now please tell me, what subject matter expressed by *Bhagawāna Mahāvīra* of the fourth chapter

Sudharmā Swāmī narrated–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Rājagrha.* There was a garden named *Guṇaśīlaka.* King *Śreṇika* ruled there. There dwelt a trader (*gāthāpati*) named *Kaśyapa.* Like *Maṅkāī*, he practised the consecration period of 16 years and in the ending period of his age, he went to *Vipulagiri*, accepting *saṁthārā* beatified–attained salvation.

[Fourth chapter consumed

पंचम अध्ययन

सूत्र २३ :

एवं खेमए वि गाहावई। णवरं, काकंदी णयरी। सोलसवासा परियाओ विपुले पव्वए सिद्धे।

सूत्र २३ :

इसी प्रकार क्षेमक गाथापति का वर्णन समझें । विशेष इतना है कि वे काकन्दी नगरी के निवासी थे और सोलह वर्ष का उनका दीक्षा काल रहा । यावत् वे भी विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(पांचवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 5

Maxim 23 :

Like this the description of *Kṣemaka* trader should be understood. Excepting; he was the inhabitant of *Kākandī* city. His consecration period was of sixteen years until, he attained salvation on *Vipulagiri*.

[Fifth chapter consumed]

छठा अध्ययन

सूत्र २४ :

एवं धितिहरे वि गाहावई । काकंदी णयरी । सोलसवासा परियाओ जाव विपुले सिद्धे ।

सूत्र २४ :

ऐसे ही धृतिधर गाथापति का वर्णन समझना चाहिए । वे काकन्दी नगरी के निवासी थे, सोलह वर्ष तक निर्मल चारित्र पालकर वे भी विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(छठवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 6

Maxim 24 :

In the same way should be known the description of *Dhṛtidhara* trader. He was inhabitant of *Kākandī* city. Practising sixteen years, consecration period, liberated on *Vipulagiri*. **[Sixth Chapter consumed]**

सातवां अध्ययन

सूत्र २५ :

एवं केलासे वि गाहावई । णवरं, सागेए णयरे, बारस वासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।

सूत्र २५ :

ऐसे ही कैलाश गाथापति भी थे । विशेष यह था कि ये साकेत नगर के रहने वाले थे, इन्होंने बारह वर्ष की दीक्षा पर्याय पाली और विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(सातवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 7

Maxim 25 :

Like this was *Kailāśa* trader Excepting ; he was inhabitant of *Sâketa* city. He practised consecration period of twelve years and liberated on *Vipulagiri*.

[Seventh chapter consumed]

आठवां अध्ययन

सूत्र २६ :

एवं हरिचंदणे वि गाहावई । सागेए णयरे । बारस वासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।

सूत्र २६ :

ऐसे ही आठवें हरिचन्दन गाथापति भी थे । वे भी साकेत नगर के निवासी थे, उन्होंने भी बारह वर्ष तक श्रमण धर्म का पालन किया और अन्त में विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(आठवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 8

Maxim 26 :

Harıcandana trader was also like aforesaid. He was inhabitant of *Sāketa* city. His consecration period was of twelve years and liberated at *Vıpulagıri.*

[Eighth chapter consumed]

नवमां अध्ययन

सूत्र २७ :

एवं वारत्तए वि गाहावई। णवरं रायगिहे णयरे। बारस वासा परियाओ, विपुले सिद्धे।

सूत्र २७ :

इसी तरह नवमें वारत्त गाथापति का वर्णन भी जानना चाहिए। विशेष यह था कि ये राजगृह नगर के रहने वाले थे। बारह वर्ष का चारित्र पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए। **(नवमां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 9

Maxim 27 :

So should be known about *Vāratta* trader. Exceptıng, he was inhabitant of *Rājagṛha* cıty. Consecratıon perıod was of twelve years. Liberated at *Vipulagiri.*

[Nineth Chapter consumed]

दसवां अध्ययन

सूत्र २८ :

एवं सुदंसणे वि गाहावई। णयरं वाणियगामे णयरे। दूइपलासए चेइए, पंच वासा परियाओ, विपुले सिद्धे।

सूत्र २८ :

दसवें सुदर्शन गाथापति का वर्णन भी इसी प्रकार समझ लेवें। विशेष यह था कि वाणिज्यग्राम नगर के बाहर द्युतिपलाश नाम का उद्यान था, वहां दीक्षित हुए। पांच वर्ष का निर्मल चारित्र पालकर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए। **(दसवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 10

Maxim 28 :

So is the description of *Sudarśana* trader. Excepting; he accepted consecration in *Dyutipalāśa* garden which was situated outside the city *Vāṇijyagrāma*. Practising pure conduct upto five years, liberated at *Vipulagiri*

[Tenth chapter consumed]

ग्यारहवां अध्ययन

सूत्र २९ :

एवं पुण्णभद्दे वि गाहावई। वाणियगामे णयरे। पंच वासा परियाओ, विपुले सिद्धे।

सूत्र २९ :

पूर्णभद्र गाथापति का वर्णन भी ऐसे ही समझना चाहिए। विशेष यह था कि वे वाणिज्यग्राम नगर के रहने वाले थे। पाँच वर्ष का चारित्र पालन कर वे भी विपुलाचल पर सिद्ध हुए। **(ग्यारहवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 11

Maxim 29 :

So is the description of trader *Pūrṇabhadra*. Excepting; he was inhabitant of city named *Vāṇjyagrāma*. Practising faultless sage-conduct upto five years liberated at *Vipulagiri*. **[Eleventh chapter consumed]**

बारहवां अध्ययन

सूत्र ३० :

एवं सुमणभद्दे वि गाहावई । सावत्थी णयरी । बहुवासाइं परियाओ, विपुले सिद्धे ।

सूत्र ३० :

सुमनभद्र गाथापति का वर्णन भी इसी प्रकार समझना चाहिए । ये श्रावस्ती नगरी के निवासी थे । बहुत वर्षों तक मुनि धर्म का पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(बारहवाँ अध्ययन समाप्त)**

Chapter 12

Maxim 30 :

So is the description of trader *Sumanabhadra* Excepting; he was inhabitant of city *Śrāvastī*. Practised sage order upto many years and liberated at *Vipulagiri*

[Twelfth chapter consumed

तेरहवां अध्ययन

सूत्र ३१ :

एवं सुपइट्ठे वि गाहावई । सावत्थी णयरी । सत्तावीसं वासा परियाओ, विपुले सिद्धे ।

सूत्र ३१ :

ऐसे ही सुप्रतिष्ठ गाथापति का वर्णन समझ लेना चाहिए । ये भी श्रावस्ती नगरी के रहने वाले थे, और सत्ताईस वर्ष तक श्रमण चारित्र-पालन कर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए । **(तेरहवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 13

Maxim 31 :

So should be known about trader *Supratiṣṭha*. He was inhabitant of *Śrāvastī* city. Practising sagehood upto twenty seven years, liberated at *Vipulagiri*.

[Thirteenth chapter consumed]

चौदहवाँ अध्ययन

सूत्र ३२ :

एवं मेहे वि गाहावई । रायगिहे णयरे । बहूहिं वासाइं परियाओ, विपुल सिद्धे ।

सूत्र ३२ :

मेघ गाथापति का वर्णन भी ऐसे ही समझना चाहिये। ये राजगृह नगर के निवासी थे और बहुत वर्षों तक चारित्र धर्म का पालनकर विपुलगिरि पर सिद्ध हुए। **(चौदहवां अध्ययन समाप्त)**

Chapter 14

Maxim 32 :

The same is the description of *Megha* trader. Excepting; he was inhabitant of *Rājagṛha* city. He practised sage conduct upto many years and attained salvation at *Vipulagiri*.

[Fourteenth chapter consumed]

पन्द्रहवां अध्ययन : अतिमुक्तकुमार

सूत्र ३३ :

उक्खेवओ पण्णरसमस्स अज्झयणस्स ।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं पोलासपुरे णयरे, सिरीवणे उज्जाणे ।

तत्थ णं पोलासपुरे णयरे विजए णामं राया होत्था । तस्स णं विजयस्स रण्णो सिरी णामं देवी होत्था, वण्णओ । तस्स णं विजयस्स रण्णो पुत्ते सिरीए देवीए अत्तए अइमुत्ते णामं कुमारे होत्था सुकुमाले ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव सिरीवणे विहरइ ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणस्स भगवओ महावीरस्स जेट्ठे अंतेवासी इंदभूई, जहा पण्णत्तीए जाव पोलासपुरे णयरे उच्च–णीय जाव अडइ ।

अतिमुक्तकुमार

सूत्र ३३ :

श्री जम्बू स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! चौदह अध्ययनों का भाव मैंने सुना । अब पन्द्रहवें अध्ययन में प्रभु ने क्या भाव कहा है, कृपा कर बतलाइये ।

आर्य सुधर्मा स्वामी कहते हैं–हे जम्बू ! उस काल, उस समय में पोलासपुर नामक नगर था । वहां श्रीवन नामक उद्यान था । इस नगर में विजय नाम का राजा था, उनकी श्रीदेवी महारानी थी जो वर्णनीय थी । महाराजा विजय का पुत्र और श्रीदेवी का आत्मज "अतिमुक्त" नाम का एक कुमार था, जो बड़ा सुकुमार, सुन्दर और दर्शनीय था ।

उस काल, उस समय, श्रमण महावीर के ज्येष्ठ शिष्य इन्द्रभूति, (उनका भगवती सूत्र में जैसे षष्ठ भक्त के पारणे के लिए भगवान से पूछकर भिक्षार्थ जाने का वर्णन किया गया है वैसे ही यहां भी समझना चाहिए यावत्) उस पोलासपुर नगर में छोटे-बड़े कुलों में सामूहिक भिक्षा हेतु भ्रमण करने लगे ।

Chapter 15

Atimuktakumāra

Maxim 33 :

Śrī Jambū Swāmī asked in polite words–O *Bhagawan* ! I have heard the subject matter of fourteen chapters. In fifteenth chapter *Bhagawāna* had described what matter, please tell me.

Ārya Sudharmā Swāmī began to narrate–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Polāsapura* There was a garden, named *Śrīvana*. King *Vijaya* ruled there. His queen was *Śrīdevī*. She was describable. *Atimukta* was their son, who was tender, beautiful and worthy to be seen.

At that time and at that period *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* wandering village to village arrived there and stayed in *Śrīvana* garden.

At that time and at that period, the eldest disciple of *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*, *Indrabhūti* (as described in *Bhagavatī Sūtra*, on breaking day of six meals' fast to go for seeking alms with the permission of *Bhagawānā*, such should be known here) began to wander in high-low-middle class houses of *Polāsapura* city for seeking alms.

सूत्र ३४ :

इमं च णं अइमुत्ते कुमारे ण्हाए जाव विभूसिए बहूहिं दारएहिं य दारियाहिं य, डिंभएहिं य डिंभियाहिं य कुमारएहिं य कुमारियाहिं य सद्धिं संपरिवुडे सयाओ गिहाओ पडिणिक्खमइ पडिणिक्खमित्ता जेणेव इंदट्ठाणे तेणेव उवागए ।

तेहिं बहूहिं दारएहिं य दारियाहिं य डिंभएहिं य डिंभियाहिं य कुमारएहिं य कुमारियाहिं य सद्धिं संपरिवुडे अभिरममाणे अभिरममाणे विहरइ ।

अतिमुक्तकुमार की जिज्ञासा

सूत्र ३४ :

इधर अतिमुक्त कुमार स्नान करके यावत्, शरीर की विभूषा करके बहुत से **दारक**=सामान्य लड़के-लड़कियों, **डिंभक**=छोटी आयु वाले बालक बालिकाओं और **कुमार**=समान वय वाले कुमार कुमारियों के साथ अपने घर से निकले और निकलकर जहाँ इन्द्र स्थान यानी क्रीडास्थल था, वहां आये, वहां उन बालक-बालिकाओं के साथ वे बाल सुलभ खेल खेलने लगे।

Curiosity of Atimuktakumāra

Maxim 34 :

Now prince *Atimuktakumāra* bathed until decked surrounded by many little boys girls, lads-lasses, youths-maidens went out of his own house, reached to *Indrasthāna*–play ground and began to play various types of games.

सूत्र ३५ :

तए णं भगवं गोयमे पोलासपुरे णयरे उच्च-णीय जाव अडमाणे इंदट्ठाणस्स अदूरसामंतेणं वीईवयइ।

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं अदूरसामंतेणं वीईवयमाणं पासइ, पासित्ता जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागए। भगवं गोयमं एवं वयासी– के णं भंते ! तुब्भे, किं वा अडह ?

तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी–"अम्हे णं देवाणुप्पिया ! समणा णिग्गंथा इरियासमिया जाव बंभयारी उच्च-णीय जाव अडामो।"

तए णं अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी–

"एह णं भंते ! तुब्भे, जण्णं अहं तुब्भं भिक्खं दवावेमि" त्ति कट्टु भगवं गोयमं अंगुलीए गिण्हइ ; गिण्हित्ता, जेणेव सए गिहे तेणेव उवागए।

चित्रक्रम ३१ :

गौतम स्वामी एवं अतिमुक्त कुमार

दृश्य १—बच्चो के साथ क्रीडा करते हुए अतिमुक्त कुमार ने राजमार्ग पर गौतम स्वामी को आते देखा तो उनसे पूछा—आप कौन हैं ? किसलिए इधर भ्रमण कर रहे हैं ?

गौतम स्वामी ने अपना परिचय देकर कहा—"मैं शुद्ध भिक्षा के लिए इधर आया हूँ।"

दृश्य २—अतिमुक्त कुमार ने कहा—आप भिक्षा के लिए मेरे भवन पर पधारिए। मेरी माता आपको भिक्षा देगी। और उसने गौतम स्वामी की अँगुली पकड ली।

राजमाता श्रीदेवी यह दृश्य देखकर मुग्ध हो उठती है। उसने सामने आकर गौतम स्वामी का स्वागत किया। (वर्ग ६/अध्य. १५)

Illustration No. 31 :

Gautama Swāmī and Atimuktakumāra

Scene 1. *Atimuktakumāra,* playing with his playmates, saw *Gautama Swāmī* going on royal road, then ask him—Who are you ? Why you are wandering

Gautama Swāmī giving his acquaintance said—I am wandering for seeking faultless alms

Scene 2. *Atimuktakumāra* said—For alms, please come to my palace My mother will give you alms.

And he hold up the finger of *Gautama Swāmī.* Queen *Śrīdevī* becomes very much glad looking this scene She celebrated *Gautama Swāmī* coming forward (Sec 6/Ch 15)

तए णं सिरीदेवी भगवं गोयमं एज्जमाणं पासइ, पासित्ता हट्ठतुट्ठ जाव आसणाओ अब्भुट्ठेइ, अब्भुट्ठित्ता, जेणेव भगवं गोयमे तेणेव उवागया। भगवं गोयमं तिक्खुत्तो आयाहिण-पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता विउलेणं असण-पाण-खाइम-साइमेणं पडिलाभेइ, जाव पडिविसज्जेइ।

सूत्र ३५ :

उस समय भगवान गौतम पोलासपुर नगर के छोटे-बड़े कुलों में यावत् भ्रमण करते हुए उस क्रीडा-स्थल के पास से जा रहे थे, तब अतिमुक्तकुमार उनको पास से जाते हुए देखकर शीघ्र ही भगवान गौतम के पास आये और उनसे इस प्रकार बोले–

हे पूज्य ! आप कौन हैं, और इस तरह किसलिए घूम रहे हैं ?

तब भगवान गौतम ने अतिमुक्त कुमार को इस प्रकार उत्तर दिया– "देवानुप्रिय ! हम श्रमण निर्ग्रन्थ, ईर्यासमिति के धारक, गुप्त ब्रह्मचारी हैं, और छोटे बड़े कुलों में भिक्षार्थ भ्रमण करते हैं।"

यह सुनकर अतिमुक्त कुमार भगवान् गौतम से इस प्रकार बोले–"हे भगवन् ! आप आओ। मैं आपको भिक्षा दिलाता हूँ।" ऐसा कहकर अतिमुक्त कुमार ने भगवान गौतम की अंगुली पकड़ी और उनको जहां अपना घर था, वहां ले आये।

महारानी श्रीदेवी भगवान् गौतम को आते देखकर बहुत ही प्रसन्न हुई यावत् आसन से उठकर जिधर से भगवान गौतम आ रहे थे, उनके सम्मुख आई, और भगवान गौतम को तीन बार प्रदक्षिणा करके वंदना की, नमस्कार किया। फिर विपुल (श्रेष्ठ-उत्तम) अशन-पान-खादिम और स्वादिम से प्रतिलाभ दिया, यावत् विधिपूर्वक विसर्जित किया।

Maxim 35 :

Now at that time Reverend *Gautama* seeking alms from high-low-middle class families of *Polāsapura* city was going nearby to that play-ground. Then watching him,

passing nearby that play ground, *Atimuktakumāra* quickly came to *Gautama Swāmī* and said thus–O reverend sir ! who are you and why you are wandering like this ?

Then Reverend *Gautama* replied to *Atimuktakumāra* in these sweet words–O beloved as gods ! We are sages, knotless monk, heedful in walking and guarded celebate. I am wandering in high-low-middle class families for alms.

Hearing this *Atimuktakumāra* spoke to Reverend *Gautama* thus–O reverend ! you please come with me so that I may get you alms.

So saying he held Reverend *Gautama* by finger and carried him to his own house.

As soon as queen *Śrīdevī* saw Reverend *Gautama* coming to her house, she became very glad, got up from her seat, came to the Reverend *Gautama* circumambulated him thrice, bowed down and worshipped him and then gave him best meals–food, water, eatables and dainties until let him go.

सूत्र २६ :

तए णं से अइमुत्ते कुमारे गोयमं एवं वयासी-"कहि णं भंते ! तुब्भ परिवसह ?"

तए णं भगवं गोयमे अइमुत्तं कुमारं एवं वयासी–

"एवं खलु देवाणुप्पिया ! मम धम्मायरिए धम्मोवएसए भगवं महावीरे आइगरे जाव संपाविउकामे, इहेव पोलासपुरस्स णयरस्स बहिया सिरिवणे उज्जाणे अहापडिरूवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ, तत्थ णं अम्हे परिवसामो ।"

तए णं से अइमुत्ते कुमारे भगवं गोयमं एवं वयासी–गच्छामि णं भंते ! अहं तुब्भेहिं सद्धिं समणं भगवं महावीरं पायवंदए ?

अहासुहं देवाणुप्पिया !

सूत्र ३६ :

इसके बाद भगवान गौतम से अतिमुक्तकुमार यों बोले–हे देवानुप्रिय ! आप कहां रहते हैं ?"

भगवान गौतम ने अतिमुक्त कुमार को उत्तर दिया–"हे देवानुप्रिय ! मेरे धर्माचार्य और धर्मोपदेशक भगवान महावीर धर्म की आदि करने वाले यावत् मोक्ष के कामी इसी पोलासपुर नगर के बाहर श्रीवन उद्यान में मर्यादानुसार अवग्रह (आज्ञा आदि) लेकर संयम एवं तप से आत्मा को भावित कर विचरते हैं, हम वहीं रहते हैं ।"

तब अतिमुक्त कुमार भगवान गौतम से इस प्रकार बोले–हे पूज्य ! क्या मैं आपके साथ भगवान महावीर को वंदन करने चलूँ ?

श्री गौतम स्वामी ने कहा–हे देवानुप्रिय! जैसा तुम्हें सुख हो ।

Maxim 36 :

Thereafter prince *Atimuktakumāra* asked to Reverend *Gautama*–O beloved as gods ! Where do you live ?

Reverend *Gautama* answered–O beloved as gods ! My religious precepter and religious preacher *Bhagawāna Mahāvīra*, promoter (beginner) of religion until desirous of attaining salvation, wanders abiding himself with restrain and austerity. He is staying here in *Śrīvana* garden. outside of the city *Polāsapura*, with proper permission, there I live.

Then *Atimuktakumāra* said to Reverend *Gautama*–Reverend Sir ! May I go with you to bow down *Bhagawāna Mahāvīra* ?

Gautama Swāmī said–O beloved as gods ! Do as it pleases you.

सूत्र ३७ :

तए णं से अइमुत्ते कुमारे गोयमेणं सद्धिं जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ ; उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो, आयाहिणं पयाहिणं करेइ, करित्ता वंदइ जाव पज्जुवासइ ।

तए णं भगवं गोयमे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागए। जाव पडिदंसेइ, पडिदंसित्ता, संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ।

तए णं समणे भगवं महावीरे अइमुत्तस्स कुमारस्स धम्मकहा।

तए णं से अइमुत्तेकुमारे समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए धम्मं सोच्चा णिसम्म हट्ठतुट्ठ जं णवरं–

देवाणुप्पिया ! अम्मापियरो आपुच्छामि।

तए णं अहं देवाणुप्पियाणं अंतिए जाव पव्वयामि।

अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह।

सूत्र ३७ :

तब अतिमुक्त कुमार गौतम स्वामी के साथ श्रमण भगवान महावीर स्वामी के पास आये, आकर श्रमण भगवान महावीर को तीन बार प्रदक्षिणा की और वंदना करके पर्युपासना करने लगे।

इधर गौतम भगवान महावीर के समीप आये और उन्हें लाया हुआ आहार पानी दिखा कर पारणा किया यावत् संयम तथा तप से अपनी आत्मा को भावित करते हुए विचरने लगे।

तब श्रमण भगवान महावीर ने अतिमुक्त कुमार को धर्म कथा सुनाई। धर्म कथा सुनकर और उसे धारण कर अतिमुक्त कुमार बड़े प्रसन्न हुए और बोले–

हे देवानुप्रिय ! मुझे आपकी धर्मदेशना बहुत ही प्रिय और रुचिकर लगी, मैं अपने माता-पिता से पूछकर फिर आपकी सेवा में श्रमण दीक्षा ग्रहण चाहता हूँ।

भगवान बोले–हे देवानुप्रिय! जैसे तुम्हें सुख हो वैसे करो। पर धर्म कार्य में प्रमाद मत करो।

Maxim 37 :

Then *Atimuktakumāra* came to *Bhagawāna Mahāvīra* with *Gautama Swāmī*, and thrice circumabulating

अतिमुक्तक कुमार ने
दीक्षाभिलाषा प्रकट की
तीन
आदेश

चित्रक्रम ३२ :

अतिमुक्त : प्रभुदर्शन और वैराग्य

दृश्य १—गौतम स्वामी के साथ आये हुए राजकुमार अतिमुक्त ने भगवान महावीर की वन्दना की । धर्म उपदेश सुना तो उसका हृदय आत्म-कल्याण के लिए जागृत हो गया ।

दृश्य २—अतिमुक्तकुमार का एक दिवसीय राज्याभिषेक, पीछे माता-पिता खडे है । आदेश पूछने पर अतिमुक्तकुमार ने कहा—मेरे दीक्षा अभिषेक के लिए, राज कोष से तीन लाख स्वर्ण मुद्राएं निकालो । एक लाख के रजोहरण, एक लाख के पात्र, तथा एक लाख स्वर्ण मुद्रा देकर नाई को बुलाओ, मैं दीक्षा के लिए केश-मुण्डन करवाऊँगा ।

(वर्ग ६/अध्य १५)

Illustration No. 32 :

Atimukta : Seeing Bhagawāna and apthy

Scene 1 Coming with *Gautama Swāmi*, prince *Atimukta* bowed down to *Bhagawāna Mahāvīra*, heard religious discourse. His heart awakend for self-welfare

Scene 2 One day coronation of *Atimuktakumāra*, behind standing parents On asking order *Atimuktakumāra* said–Take out three lakh gold coins from royal treasure. Buy duster (*rajoharana*) for one lakh, utensils costing one lakh and pay one lakh gold coins to barber Being tonsured I will accept consecration (Sec. 6/Ch 15)

Bhagawāna bowed down and worshipped and staying there waited upon.

Now *Gautama* came near to *Bhagawāna Mahāvīra*, showed him the meals he had brought and then ate up until abode his soul with penance and constraint.

Then *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* told religious discourse to *Atimuktakumāra*. Hearing and taking to heart that discourse he became very glad and uttered–

O beloved as gods ! Your discourse is very interesting and dear to me It touched my heart. Taking permission of my parents I intend to enter the sage order accepting consecration in your presence.

Bhagawāna said–Do, as you feel happy, O beloved as gods ! but do not delay in auspicious deed.

सूत्र ३८ :

तए णं से अइमुत्ते कुमारे जेणेव अम्मापियरो तेणेव उवागए ; जाव पव्वइत्तए ।

अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी–

"बाले सि ताव तुमं पुत्ता ! असंबुद्धे सि तुमं पुत्ता ! किण्णं तुमं जाणासि धम्मं ?"

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी–एवं खलु अहं अम्मयाओ, जं चेव जाणामि, तं चेव ण जाणामि; जं चेव ण जाणामि, तं चेव जाणामि ।

तए णं तं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो एवं वयासी–

"कहं णं तुमं पुत्ता ! जं चेव जाणासि तं चेव ण जाणासि, जं चेव ण जाणासि तं चेव जाणासि ?"

अतिमुक्तकुमार के प्रश्नोत्तर

सूत्र ३८ :

इसके पश्चात् अतिमुक्त कुमार अपने माता-पिता के पास आकर, उन्हें नमस्कार करके बोले–हे माता-पिता ! मैंने भगवान के श्रीमुख से धर्म सुना है, वह मुझे अत्यन्त प्रिय लगा है अतः आपकी आज्ञा पाकर मैं दीक्षा लेना चाहता हूँ।

इस पर माता-पिता बहुत ही उदास होकर अतिमुक्त कुमार से इस प्रकार बोले–हे पुत्र ! अभी तुम बालक हो, असंबुद्ध (तुम्हारी ज्ञान शक्ति विकसित नहीं हुई है) हो। अभी धर्म को तुम क्या जानो ?

अतिमुक्त कुमार ने कहा–"हे माता-पिता ! मैं जिसको जानता हूँ, उसको नहीं जानता और जिसको नहीं जानता हूँ, उसको जानता हूँ।"

माता-पिता आश्चर्यपूर्वक बोले–पुत्र ! तुम जिसको जानते हो, उसको नहीं जानते और जिसको नहीं जानते, उसको जानते हो, यह कैसे ? इसका क्या अर्थ है ?

Question-answers between Atimuktakumāra and his parents

Maxim 38 :

Thereafter *Atimuktakumāra* came to his parents, bowed down and said–I have heard the religious discourse from *Bhagawāna*. It is very interesting to me. By your permission I intend to accept consecration.

Then parents became very much sad and said to *Atimuktakumāra*–O son ! Still you are a child. Your intelligence is undeveloped. What you know about religion ?

Atimuktakumāra replied–Parents ! What I know, I do not know and what I do not know, I know.

Parents said with astonishment–Son ! What you know, you do not know and what you do not know, you know. How is it ? What is its meaning ?

सूत्र ३९ :

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मापियरो एवं वयासी–"जाणामि अहं अम्मयाओ ! जहा जाएणं अवस्सं मरियव्वं, ण जाणामि अहं अम्मयाओ ! काहे वा कहिं वा कहं वा केवच्चिरेण वा ?

ण जाणामि अहं अम्मयाओ ! केहिं कम्मायवणेहिं जीवा णेरइय-तिरिक्ख जोणिय-मणुस्स-देवेसु उववज्जंति, जाणामि णं अम्मयाओ ! जहा सएहिं कम्मायवणेहिं जीवा णेरइय जाव उववज्जंति ।

एवं खलु अहं अम्मयाओ ! जं चेव जाणामि तं चेव ण जाणामि, जं चेव ण जाणामि तं चेव जाणामि । तं इच्छामि णं अम्मयाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाए जाव पव्वइत्तए ।

तए णं अइमुत्तं कुमारं अम्मापियरो जाहे णो संचाएंति बहूहिं आघावणाहिं जाव तं इच्छामो ते जाया ! एगदिवसमवि रज्जसिरिं पासेत्तए ।

तए णं से अइमुत्ते कुमारे अम्मा-पिउ-वयणमणुवत्तमाणे तुसिणीए संचिट्ठइ । अभिसेओ जहा महाब्बलस्स णिक्खमणं ।

जाव सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ; बहुयासाइं सामण्णपरियाओ गुणरयणं जाव विपुले सिद्धे ।

(पण्णरसं अज्झयणं समत्तं)

सूत्र ३९ :

तब अतिमुक्त कुमार इस प्रकार बोले–हे माता-पिता ! मैं जानता हूँ कि जो जन्मा है, उसको अवश्य मरना होगा, पर यह नहीं जानता कि कब, कहाँ किस प्रकार और कितने दिनों के बाद मरना होगा ।

फिर मैं यह भी नहीं जानता कि जीव किन कर्मों के कारण नरक, तिर्यंच, मनुष्य और देवयोनि में उत्पन्न होते हैं, पर इतना जानता हूं कि जीव अपने ही कृत-कर्मों के कारण नरक यावत् देवयोनि में उत्पन्न होते हैं ।

इस प्रकार निश्चय ही माता-पिता ! मैं जिसको जानता हूँ, उसी को नहीं जानता और जिसको नहीं जानता उसी को जानता हूँ । अतः हे माता-पिता ! मैं आपकी आज्ञा होने पर प्रव्रज्या लेना चाहता हूँ ।

अतिमुक्तकुमार को माता-पिता जब बहुत-सी युक्ति प्रयुक्तियों से समझाने में समर्थ नहीं हुए, तो बोले—हे पुत्र ! हम एक दिन के लिये तुम्हारी राज्य लक्ष्मी की शोभा देखना चाहते हैं । अर्थात् तुम्हारा राज्याभिषेक करना चाहते हैं ।

अब अतिमुक्त कुमार माता-पिता के वचन का अनुवर्तन (अनुसरण) करके मौन रहे । फिर महाबल के समान उनका राज्याभिषेक हुआ । फिर भगवान के पास दीक्षा लेकर सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बहुत वर्षों तक श्रमण चारित्र का पालन किया । गुणरत्न तप का आराधन किया । यावत् विपुलाचल पर सिद्ध हुए ।

Maxim 39 :

Atimuktakumāra replied–Parents ! I know that one who is born, must have to die surely; but I do not know when, where, in what manner and at what length of time he will die.

Again I do not know even that due to what types of deeds (*karmas*) souls take birth in hellish, animal, human and god existences; but I definitely know that souls take birth in hellish, animal, human and god existences due to their own done deeds (*karmas*).

Hence it is definite; parents ! that what I know, the same I do not know and what I do not know, the same I know. Therefore, parents ! I intend to accept consecration with your permission.

दीक्षा की शोभायात्रा
भगवान के पास दीक्षाग्रहण

चित्रक्रम ३३ :
अतिमुक्तकुमार की दीक्षा-शोभायात्रा

दृश्य १—मस्तक पर चोटी रखकर बाकी केश मुडन कर अतिमुक्तकुमार ने राजमुकुट धारण किया। एक सहस्र पुरुष वाहिनी विशाल शिविका मे एक ऊँचे आसन पर दीक्षार्थी राजकुमार बैठा है। उनकी दाहिनी ओर राजमाता श्रीदेवी हस चिन्हाकित पट शाटक लेकर भद्रासन पर बैठी है। बाई तरफ पात्र-रजोहरण आदि लेकर धायमाता बैठी है।

दृश्य २—भगवान महावीर के समवसरण मे पहुँचकर कुमार ने आभरण अलकारो का त्याग कर मुनिवेष पहना और प्रभुचरणो मे उपस्थित होकर सयम दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की। माता-पिता ने प्रभु से प्रार्थना करते हुए कहा—हमारा यह अत्यन्त प्रिय पुत्र ससार भय से उद्विग्न हो गया है। इसे शिष्य रूप मे स्वीकार करने की कृपा कीजिए।

(वर्ग ६/अध्य १५)

Illustration No. 33 :
Consecration procession of Atimuktakumāra

Scene 1 Keeping only top-knot on head, tonsured *Atimuktakumāra* wore crown Prepared for consecration *Atimuktakumāra* is sitting on a high seat in the palanquin, which is to be carried by one thousand men In his right side queen *Śrīdevī* is sitting on a leisure seat, with a goose marked cloth in her hands On left side nurture-mother is sitting taking duster, utensils etc , the sage-symptoms

Scene 2 Reaching the religious assembly of *Bhagawāna Mahāvīra, Atimuktakumāra* put off all the ornaments, royal dress etc , and put on sage-robe, approached to *Bhagawāna* and prayed to give consecration Parents said praying to *Bhagawāna*–Our this dear son became distressed from the fear of world Please accept this as your disciple and oblige us

(Sec 6/Ch 15)

चित्रक्रम ३४ :

अतिमुक्त मुनि—जल में पात्र रूपी नाव

एक बार महावर्षा होने पर बाल मुनि अतिमुक्त स्थविरों के साथ स्थण्डिल भूमि को गये । वहाँ बरसाती पानी के एक छोटे नाले को देखकर, नाले पर मिट्टी की पाल बाँधी और अपना पात्र जल मे छोडकर हर्षित होकर कहने लगे—'यह मेरी नाव तैर रही है !'' बाल मुनि की यह क्रीडा देखकर स्थविर श्रमण अप्रसन्न हुए और उन्हे विना कहे ही भगवान महावीर के पास चले आये । (भगवती सूत्र ५/४ के अनुसार)

Illustration No. 34 :

Atimukta sage Pātra (utensil) as boat in water

Once it rained cats and dogs Boy sage *Atimukta* went for discharging urine and stool to open ground with elder sages In the way, seeing a rainy drain stoppd there, checked the flow of water by clay and leaving own utensil in water, gladfully began to say—"This my boat is swimming" Seing such play of boy-sage, the elder sages became displeased and saying nothing to boy-sage came to *Bhagawāna Mahāvīra* (according to *Bhagawatī Sūtra* 5/4)
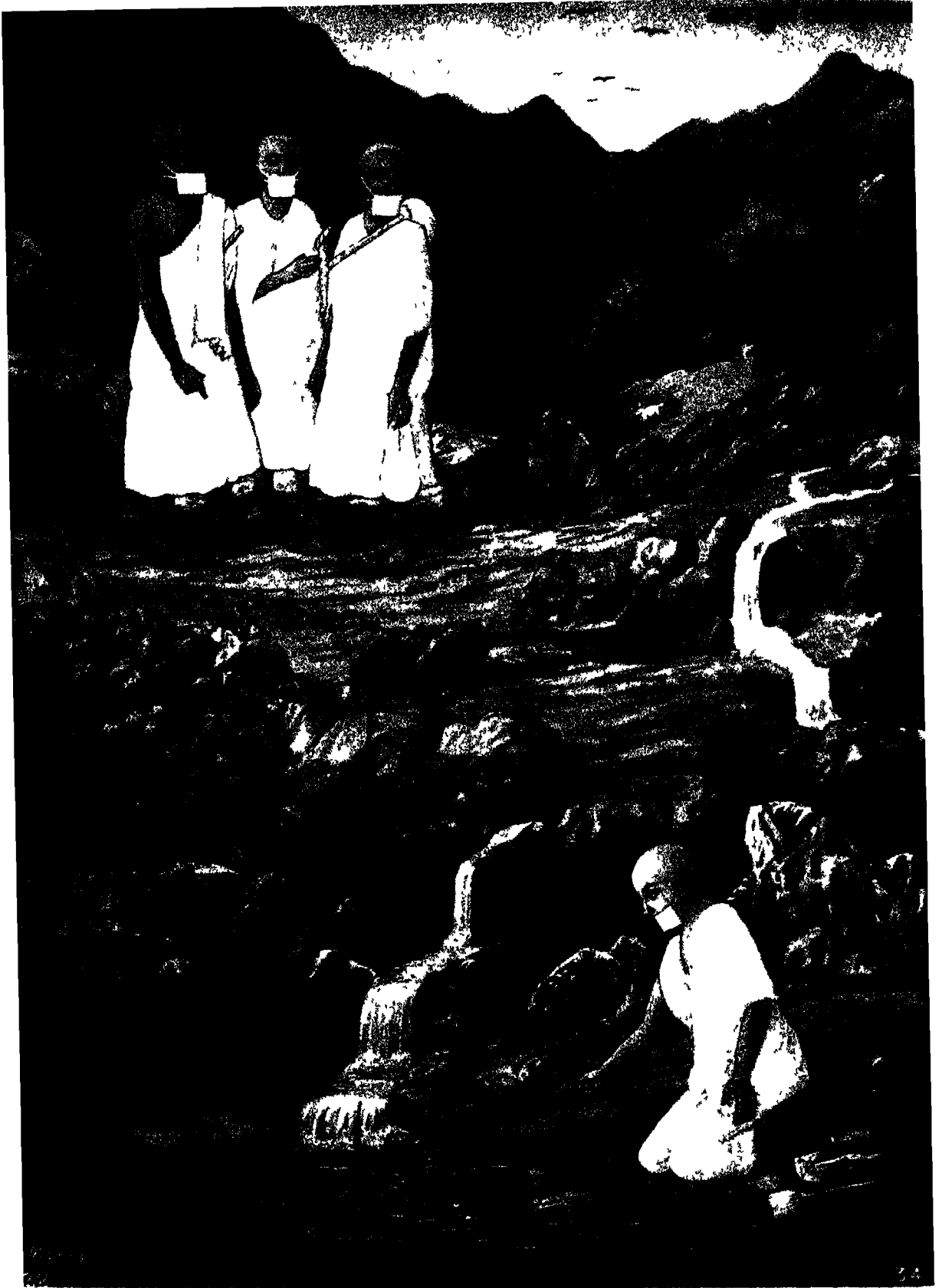
When parents could not prevail upon *Atimuktakumāra* by many reasons and arguments then spoke–Son ! we desire to see your royal splendour for even one day *i.e.*, we want to coronate you.

Then *Atimuktakumāra* remained silent following the words of his parents. Then his anointment ceremony was celebrated like *Mahābala*. Then he accepted consecration in presence of *Bhagawāna Mahāvīra*, studied *Sāmāyika* etc., eleven holy scriptures (*aṅgas*), practised sage conduct upto many years and observed *Guṇaratna Saṁvatsara* austerity until beatified on *Vipulagiri*.

विवेचन

अतिमुक्त कुमार के जीवन संबंधी अंतगडसूत्र के इस वर्णन के अतिरिक्त भगवती सूत्र के पांचवें शतक, चतुर्थ उद्देशक में मुनि अतिमुक्त के जीवन की एक घटना का बड़ा सुन्दर विवेचन मिलता है । यहां आवश्यक होने से मूल पाठ का भावानुवाद दिया जा रहा है–

श्रमण भगवान महावीर स्वामी के शिष्य अतिमुक्त कुमार नाम के श्रमण थे । वे प्रकृति से भद्र और विनीत थे । वे अतिमुक्त कुमार श्रमण किसी दिन महावर्षा बरसने पर अपना रजोहरण तथा पात्र लेकर बाहर स्थडिल हेतु (शौच निवृत्ति के लिए) गये । जाते हुए अतिमुक्त कुमार श्रमण ने मार्ग में बहते हुए पानी के एक छोटे नाले को देखा । देखकर उन्होंने उस नाले की मिट्टी की पाल बांधी । इसके बाद जिस प्रकार नाविक अपनी नाव को पानी में छोड़ता है, उसी तरह उन्होंने भी अपने पात्र को उस पानी में छोड़ा और "यह मेरी नाव है, यह मेरी नाव है"–ऐसा कहकर पात्र को पानी में तिराते हुए क्रीडा करने लगे । अतिमुक्त कुमार श्रमण को ऐसा करते हुए देखकर स्थविर मुनि उन्हें कहे बिना ही चले आए और श्रमण भगवान महावीर स्वामी से उन्होंने पूछा–

भगवन् ! आपका शिष्य अतिमुक्त कुमार श्रमण कितने भव करने के बाद सिद्ध होगा ? यावत् सब दुःखों का अन्त करेगा ?

श्रमण भगवान महावीर स्वामी उन स्थविर मुनियों को सम्बोधित करके कहने लगे–हे आर्यो ! प्रकृति से भद्र यावत् प्रकृति से विनीत मेरा अंतेवासी अतिमुक्त कुमार, इसी भव में सिद्ध होगा यावत् सभी दुःखों का अन्त करेगा । अतः हे आर्यो ! तुम अतिमुक्त श्रमण की हीलना, निन्दा, खिंसना, गर्हा और अपमान मत करो । किन्तु तुम अग्लान भाव से अतिमुक्त कुमार श्रमण को ग्रहण करो, उसकी सहायता करो और आहार पानी के द्वारा विनयपूर्वक वैयावृत्य करो । अतिमुक्त कुमार श्रमण चरमशरीरी है और इसी भव में सब कर्मों का क्षय करने वाला है ।

श्रमण भगवान महावीर स्वामी द्वारा यह वृत्तान्त सुनकर उन स्थविर मुनियों ने श्रमण भगवान महावीर स्वामी को वन्दना नमस्कार किया। फिर वे स्थविर मुनि अतिमुक्त कुमार श्रमण को अग्लान भाव से स्वीकार कर यावत् उनकी वैयावृत्य करने लगे।

(भगवती सूत्र ५/४)

पन्द्रहवां अध्ययन समाप्त

Elucidation

Beside this life sketch of *Atimuktakumāra* as related in *Antakṛddaśā Sūtra*, we also get one event in *Bhagavatī Sūtra* (5/4). Being interesting, necessary and important we are giving here the transliteration of original text of that episode.

Disciple of *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*, was sage *Atimuktakumāra*. He was gentle and humble by nature. Once it rained cats and dogs. As rains stopped. *Atimuktakumāra* went for discharging stool and urine in an open land taking his duster and utensil with him.

In the way he saw a small drain flowing full of water First of all he made the flence of clay to stop the flow of water. After that as the sailor drops his boat in water of a river, in the same way he dropped his utensil on that water of small drain and began to swim that utensil, uttering–"this is my boat, this is my boat" Thus sage *Atimuktakumāra* began to play.

Seeing sage *Atimuktakumāra* thus playing, the aged sages, speaking nothing to him, directly approached to *Śramana Bhagawāna Mahāvīra* and bowing down and worshipping him, asked–

Bhagawan ! Your disciple sage *Atimuktakumāra* will attain salvation after how many births ?

Bhagawāna told–My disciple sage *Atimuktakumāra* will attain liberation in this birth and end all miseries. It is his last body. Therefore you must not regret, abuse and disgrace him, but serve him with decorum, help him and give assistance by food etc., because he will exhaust his all *karmas* and attain salvation.

Hearing all this, those aged sages bowed down and worshipped *Bhagawāna* and then began to serve sage *Atimuktakumāra*.

(–*Bhagavatī Sūtra* 5/4)

[Fifteenth Chapter consumed

सोलहवां अध्ययन

सूत्र ४० :

उक्खेवओ सोलसमस्स अज्झयणस्स ।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणारसीए णयरीए काममहावणे चेइए । तत्थ णं वाणारसीए अलक्खे णामं राया होत्था ।

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे जाव विहरइ । परिसा णिग्गया ।

तए णं अलक्खे राया इमीसे कहाए लद्धट्ठे समाणे हट्ठतुट्ठ जहा कूणिए जाव पज्जुवासइ, धम्मकहा ।

तए णं से अलक्खे राया समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए जहा उदायणे तहा णिक्खंते, णवरं जेट्ठं पुत्तं रज्जे अहिसिंचइ, एक्कारस अंगाइं ; बहुवासा परियाओ ; जाव विपुले सिद्धे ।

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव छट्ठमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते ।

(इति छट्ठो वग्गो)

सूत्र ४० :

आर्य जम्बू ने कहा–हे भगवन ! पन्द्रहवें अध्ययन का भाव मैंने सुना । अब सोलहवें अध्ययन में प्रभु ने क्या अर्थ कहा है ? कृपा कर बताइये ।

श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं–हे जम्बू ! उस काल, उस समय में वाराणसी नगरी में काम महावन नामक उद्यान था । उस वाराणसी नगरी में अलक्ष नाम का राजा था ।

उस काल उस समय में श्रमण भगवान महावीर प्रभु उस उद्यान में पधारे । जन परिषद प्रभु-वन्दन को निकली ।

राजा अलक्ष भी प्रभु महावीर के पधारने की बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुआ, और कोणिक राजा के समान वह भी प्रभु महावीर की सेवा में उपासना करने लगा। प्रभु ने धर्म कथा कही ।

तब अलक्ष राजा ने श्रमण भगवान महावीर के पास उदायन की तरह श्रमण दीक्षा ग्रहण की। विशेष बात यह रही कि उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र को राज्य सिंहासन पर बिठाया। ग्यारह अंगों का अध्ययन किया, बहुत वर्षों तक श्रमण चारित्र का पालन किया, अन्त में विपुलगिरि पर जाकर सिद्ध हुए। (छट्ठा वर्ग समाप्त)

Chapter 16

Maxim 40 :

Ārya Jambū said–*Bhagawan* ! I have heard the subject matter of fifteenth chapter. What subject matter *Bhagawāna* has described in sixteenth chapter ? Kindly tell me.

Sudharmā Swāmī began to narrate–At that time and at that period, there was a *Kāma Mahāvana* garden in *Vārāṇasī* city. *Alakṣa* was the king of that city *Vārāṇasī*.

At that time and at that period, *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* arrived that garden. Public congregation went out for bowing down *Bhagawāna*.

King *Alakṣa* also became glad as he heard that *Bhagawāna Mahāvīra* has come and like king *Koṇika* he also began to serve and worship *Bhagawāna Mahāvīra*. *Bhagawāna* delivered religious discourse.

Then like *Udāyana*, king *Alakṣa* accepted sage consecration, in presence of *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra*. Excepting; he coronated his eldest son. *Alakṣa* studied eleven holy scriptures (*aṅgas*). practised sage conduct upto many years and in the end he salvated on *Vipulagiri*.

Thus O *Jambū* ! *Sramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has described the subject matter of sixth section.

विवेचन

जहा कूणिए—कूणिक राजा के समान भगवान का दर्शन करने आया—यह विस्तृत वर्णन औपपातिक सूत्र में है। अन्तकृद्दशा महिमा में देखें ।

जहा उदायणे—जैसे वीतभय नगरी का राजा उदायन भगवान के पास दीक्षित हुआ। इसी प्रकार .... । राजा उदायन का वर्णन भगवती सूत्र शतक १३, उद्देशक ७ में आया है ।

(देखें—अन्तकृद्दशा महिमा ।)

Elucidation

1 *Jahā Kūnie*–Came to see *Bhagawāna* like king *Koṇika*. The detailed description of this can be gotten in *Aupapātika Sūtra* Readers are requested to read *Antakṛddaśā Mahimā* for detailed study of this subject.

2. *Jahā Udāyane*–as *Udāyana*, king of *Vītabhaya Pātana* was consecrated in presence of *Bhagawāna Mahāvīra* in the same way........... Description of king *Udāyana* can be gotten in *Bhagavatī Sūtra Śataka* 13 *uddeśaka* 4. For detailed study see *Antakṛddaśā Mahimā*

[Chapter sixteenth consumed]

(Section 6 Completed)

卐

सातवां वर्ग

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! सत्तमस्स वग्गस्स उक्खेवओ जाव तेरस अज्झयणा पण्णत्ता । तं जहा–

नंदा[१] तहा नंदवई,[२] नंदोत्तर[३] नंदसेणिया[४] चेव ।
मरुया[५] सुमरुया[६] महमरुया,[७] मरुद्देवा[८] य अट्ठमा ॥१॥
भद्दा[९] य सुभद्दा[१०] य, सुजाया[११] सुमणाइया[१२] ।
भूयदिण्णा[१३] य बोद्धव्वा, सेणिय-भज्जाण णामाइं ॥२॥

सूत्र १ :

श्री जम्बू स्वामी बोले–हे भगवन् ! छठे वर्ग का भाव मैंने सुना। अब सातवें वर्ग का प्रभु ने क्या अर्थ कहा है? आप मुझे बताने की कृपा करें ।

श्री सुधर्मा स्वामी–सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन कहे गये हैं, जो इस प्रकार हैं–

१. नन्दा, २. नन्दवती, ३. नन्दोत्तरा, ४. नन्दश्रेणिका, ५. मरुता, ६. सुमरुता, ७. महामरुता, ८. मरुद्देवा, ९. भद्रा, १०. सुभद्रा, ११, सुजाता, १२, सुमनायिका, १३. भूतदत्ता ।

ये सब राजा श्रेणिक की रानियां थीं ।

SEVENTH SECTION

Maxim 1 :

Jambū Swāmī said–*Bhagawan* ! I have heard attentively the subject matter of sixth section. What subject matter *Bhagawāna* has said of Seventh Section; Kindly tell me.

Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! *Bhagawāna* has said thirteen chapters in seventh section. Names of these are–

1. Nandā 2. Nandavatī 3. Nandottarā, 4. Nandaśreṇikā, 5. Marutā 6. Sumarutā 7. Mahāmarutā 8. Maruddevā, 9. Bhadrā, 10. Subhadrā, 11. Sujātā, 12. Sumanāyikā and 13. Bhūtadattā.

All these were the queens of king *Śreṇika.*

सूत्र २ :

जइ णं भंते ! तेरस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं रायगिहे णयरे, गुणसिलए चेइए, सेणिए राया, वण्णओ ।

तस्स णं सेणियस्स रण्णो णंदा णामं देवी होत्था, वण्णओ ।

सामी समोसढे । परिसा णिग्गया । तए णं सा णंदा देवी इमीसे कहाए लद्धट्ठा समाणी जाव हट्ठतुट्ठा कोडुंबियपुरिसे सद्दावेइ । सद्दावित्ता जाणं दुरूहइ ; जहा पउमावई । जाव एक्कारस अंगाइं अहिज्जित्ता बीसं वासाइं परियाओ जाव सिद्धा ।

एवं तेरस वि णंदागमेण णेयव्वाओ ।

णिक्खेवओ । **(इति सत्तमो वग्गो)**

सूत्र २ :

हे भगवन् ! प्रभु ने सातवें वर्ग के तेरह अध्ययन कहे हैं, तो प्रथम अध्ययन का श्रमण भगवान महावीर ने यावत् मुक्ति प्राप्त प्रभु ने क्या अर्थ फरमाया है ?

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल उस समय में राजगृह नाम का नगर था । उसके बाहर गुणशीलक नाम का उद्यान था । वहां श्रेणिक

नाम के राजा राज्य करते थे । उस श्रेणिक राजा की नंदा नाम की रानी थी, जो वर्णन करने योग्य थी ।

प्रभु महावीर राजगृह नगर के उद्यान में पधारे । जन परिषद वंदन करने को गयी । उस समय नन्दा देवी भगवान के आगमन की खबर सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और उसने आज्ञाकारी सेवकों को बुलाकर धार्मिक रथ लाने की आज्ञा दी। पद्मावती की तरह इसने भी दीक्षा ली यावत् ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । बीस वर्ष तक श्रमण पर्याय का पालन किया, यावत् अन्त में सिद्ध हुई ।

इसी प्रकार नन्दवती आदि के सभी अध्ययन नंदा के समान हैं । यह निक्षेपक है–समान वर्णन समझना चाहिए ।

इस प्रकार हे जम्बू ! भगवान् ने सातवें वर्ग का यह भाव फरमाया है । (कथा अनुसार यह नन्दा रानी अभयकुमार की माता थी।)

(सातवां वर्ग समाप्त)

Maxim 2 :

Bhagawan ! If *Bhagawāna* said thirteen chapters of seventh section then *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has expressed what subject matter of first chapter ?–*asked Jambū Swāmī.*

Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Rājagṛha*. Outside of the city was *Guṇaśīlaka* garden. King *Śreṇika* ruled there. *Nandā* was the queen of king *Śreṇika*. She was describable.

Prabhu Mahāvīra came and stayed at the garden. Public congregation went to bow down him.

At that time *Nandā* became very much glad, hearing the news that *Bhagawāna* staying in the garden. She called the chamberlains and ordered them to bring religious chariot.

She also accepted consecration, like *Padmavatī* until, studied eleven holy scriptures (*aṅgas*) practised sagehood upto twenty years, until in the end became emancipated.

Like this are the remaining twelve chapters of *Nandavatī* and others. It should be known.

Thus, O *Jambū* ! *Bhagawāna* has expressed such subject matter of Seventh Section.

(According to recitals queen *Nandā* was the mother of *Abhayakumāra.*)

[Seventh Section Completed]

卐

अष्टम वर्ग

सूत्र १ :

जइ णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं सत्तमस्स वग्गस्स अयमट्ठे पण्णत्ते । अट्ठमस्स णं भंते ! वग्गस्स अंतगडदसाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

एवं खलु जंबू ! समणेणं जाव संपत्तेणं अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता तं जहा–

काली,[१] सुकाली,[२] महाकाली,[३] कण्हा,[४] सुकण्हा,[५] महाकण्हा[६] ।

वीरकण्हा[७] य बोद्धव्वा, रामकण्हा[८] तहेव य ॥

पिउसेणकण्हा[९] णवमी, दसमी महासेणकण्हा[१०] य ।

जइ णं भंते ! अट्ठमस्स वग्गस्स दस अज्झयणा पण्णत्ता, पढमस्स णं भंते ! अज्झयणस्स समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्ठे पण्णत्ते ?

सूत्र १ :

श्री जम्बू स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने सातवें वर्ग के जो भाव फरमाये, वे आपके श्रीमुख से मैंने सुने । कृपापूर्वक कहिये कि आठवें वर्ग में प्रभु ने किन भावों का प्रतिपादन किया है ?

सुधर्मा स्वामी–हे जम्बू ! आठवें वर्ग में श्रमण भगवान महावीर स्वामी ने दस अध्ययन फरमाये हैं–

१. काली २. सुकाली, ३. महाकाली, ४. कृष्णा, ५, सुकृष्णा, ६. महाकृष्णा, ७. वीरकृष्णा, ८. रामकृष्णा, ९, पितृसेनकृष्णा, और १०. महासेनकृष्णा ।

जम्बू स्वामी ने पूछा–हे भगवन् ! भगवान ने आठवें वर्ग के दस अध्ययन फरमाये हैं, तो प्रथम अध्ययन के क्या भाव परमाये हैं ? कृपाकर बताइए ।

EIGHTH SECTION

Maxim 1 :

Śrī Jambū Swāmī asked–O *Bhagawan* ! The subject matter of seventh section as described by *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* so I heard from you. Now please tell that what subject matter expressed by *Bhagawāna* in eighth section.

Śrī Sudharmā Swāmī told–O *Jambū !* In eighth section *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra* has described ten chapters. Names of these are–

1. Kālī, 2. Sukālī, 3. Mahākālī, 4. Kṛṣṇā, 5. Sukṛṣṇā 6 Mahākṛṣṇā, 7. Vīrakṛṣṇā 8. Rāmakṛṣṇā, 9. Pitṛsenakṛṣṇā and 10. Mahāsenakṛṣṇā.

Jambū Swāmī asked–If *Bhagawāna* has described ten chapters of eighth section then what subject matter he told of first chapter ? Kindly tell me.

प्रथम अध्ययन

सूत्र २ :

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी होत्था, पुण्णभद्दे चेइए ।

तत्थ णं चम्पाए णयरीए सेणियस्स रण्णो भज्जा; कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया काली णामं देवी होत्था, वण्णओ ।

जहा णंदा सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जइ, बहूहिं चउत्थ छट्ठमेहिं जाव अप्पाणं भावेमाणे विहरइ ।

सूत्र २ :

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–उस काल, उस समय में चम्पा नामक नगरी थी, पूर्णभद्र नामक यक्षायतन था । कोणिक राजा का शासन चल रहा

था । श्रेणिक महाराज की भार्या एवं कोणिक महाराज की छोटी माता काली नामक रानी थी ।

नन्दा के समान उसने दीक्षा ग्रहण की । सामायिक आदि (छह आवश्यकों के साथ) ग्यारह अंगों का अध्ययन किया एवं उपवास, बेला, तेला आदि विविध तपस्याओं से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी ।

Chapter 1

Maxim 2 :

Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! At that time and at that period, there was a city named *Campā*, a sanctuary of *Pūrṇabhadra* deity, King *Koṇika* was ruling. There was a queen named *Kālī*, consont of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Konika*

She accepted consecration, like queen *Nandā*. She studied *Sāmāyika* (containing six necessary limbs) etc., eleven holy scriptures (*aṅgas*) and began to wander engrossing her soul with one day fast, two days' fast, three days' fast, etc. various types of penances.

विवेचन

नन्दा रानी आदि के वर्णन में राजगृह नगरी तथा राजा श्रेणिक का उल्लेख है और यहा पर चम्पा नगरी तथा कोणिक राजा का । इससे पता चलता है कि काली आदि का यह वर्णन राजा श्रेणिक के देहावसान के पश्चात् पितृ-शोकग्रस्त राजा कोणिक ने राजगृह को छोड़कर चम्पानगरी को अपनी राजधानी बनाई, उसके बाद का है ।

काली आदि दसों रानियों को वैराग्य उत्पन्न होने के पीछे जो घटना घटी, वह निरयावलिका सूत्रानुसार इस प्रकार है–

मगधेश्वर श्रेणिक ने अपने जीवन काल में, चेलना के लघु पुत्र हल्ल और विहल्ल कुमार को देवनामी हार और सिंचानक हाथी उपहार के रूप में दिये थे । वे कुमार अपने अन्तःपुर के साथ इन

दोनों वस्तुओं का उपभोग करते हुए आनन्द से रह रहे थे । चम्पा के निवासी उनके सुखी जीवन, तथा हार और हाथी के उपभोग की प्रशंसा करते रहते थे कि 'हल्ल, विहल्लकुमार वास्तव में राज्य लक्ष्मी का सुख भोग रहे हैं । राजा कोणिक तो सिर्फ राज्य का भार ढोता है, कोणिक की पटरानी पद्मावती ने जनता की बात को सुनकर महाराज कोणिक से निवेदन किया–'ये दोनों वस्तुएँ हार व हाथी तो राजचिन्ह हैं अतः आपको शोभा देती हैं ।' कोणिक ने उत्तर दिया–'पिताजी ने ये मेरे छोटे भाइयों को उपहार रूप में दी हैं, ये उनसे मांगना उचित नहीं है ।' परन्तु पटरानी के अति आग्रह से राजा कोणिक ने विवश होकर हल्ल विहल्ल कुमार को इन दोनों वस्तुओं को लौटाने के लिये आज्ञा दे दी ।

हल्ल-विहल्लकुमार ने नम्रता से उत्तर दिया कि–बंधु ! अगर आप इनके बदले हमको राज्य का एक भाग देवें तो हम इनको आपको दे सकते हैं ।

राजा कोणिक ने राज्य का बंटवारा करने से इंकार कर दिया, और बलपूर्वक हार-हाथी लेना चाहा ।

हल्ल-विहल्लकुमार को कोणिक के विचारों का पता चल गया । तब वे अपने परिवार, सेना, कोष, हार और हाथी सहित चुपचाप अपने नाना चेटक राजा के पास चले गये । कोणिक को हल्ल-विहल्लकुमार के चुपचाप चम्पा से चले जाने की वार्ता ज्ञात होने पर बहुत क्रोध आया । उसने अपने नाना राजा चेटक को हार, हाथी सहित हल्ल विहल्लकुमार को लौटाने के लिये सन्देश भेजा । चेटक राजा न्याय का पक्षधर था, उसने जवाब दिया कि वे उसकी बात तब मानने को सहमत हैं, जब वह हल्ल-विहल्लकुमार को अपना आधा राज्य दे देवें ।

इस शर्त को अमान्य करके राजा कोणिक ने चेटक राजा की नगरी वैशाली पर आक्रमण कर दिया । कोणिक नृप के साथ उसके दस विमाता-पुत्र भाई कालिकुमार आदि सेनापति के रूप में युद्ध के मैदान में आये । भयंकर नर-संहार हुआ । वे दसों सेनापति चेटक राजा के बाणों से काल के ग्रास हो गये ।

इस बीच भगवान महावीर का चम्पानगरी में समवशरण हुआ । काली आदि दसों ही महारानियों ने भगवान से पूछा–वे अपने पुत्रो का युद्ध से लौटने पर मुँह देख सकेंगी या नहीं ? प्रभु ने उनके युद्ध में काम आने की बात बताई । इस पर वे सभी दसों रानियां संसार की असारता को समझकर विरक्त हुईं और दीक्षित हो गईं ।

Elucidation

In the description of queen *Nandā* etc., the names of king *Śreṇika* and *Rājagṛha* city are given and here *Campā* city and *Koṇika* king are referred. It

clearly shows that this description of queen *Kālī* etc., is of after the death of king *Śreṇika*. Because becoming full of sorrow by the death of his father *Śreṇika*, leaving city *Rājagṛha*, King *Koṇika* made his capital *Campā* city. So these episodes of queens Kali etc., happened after the death of king *Śreṇika*.

The event which excited the apathy of *Kālī* etc., according to *Nirayāvalikā Sūtra*, is as follows–

Monarch of *Magadha* country. King *Śreṇika*,, in his life time, has given two valuable things as gift–1. Neckless given by god (*Devanāmī hāra*) and 2. elephant *Siṅcānaka* or *Secanaka*, to the two younger sons, named *Halla* and *Vihalla* of queen *Celanā*. Both princes, utilising these things, with their harems, were living pleasurely. The inhabitants of *Campā* city used to praise their happy life, necklace and elephant, saying that–verily *Halla* and *Vihalla Kumāras* are enjoying the royalty (*rājya-lakṣmī*), king *Konika* is only the burden bearer of kingdom.

Padmāvatī, the chief queen of *Konika* heard these views of public then she requested to her husband king *Konika*–Necklace and elephant–both are the signs of kingdom, therefore, these are for you only.

Koṇika replied–My father has given these two valuable things–Necklace and elephant–to my younger brothers, so it is not proper to ask these things from them

But chief queen *Padmāvatī* insisted upon, then under compulsion, *Konika* ordered his younger brothers to return that necklace and elephant.

Princes *Halla* and *Vihalla* gave a polite answer–Elder brother ! If you want to take these both things, then please give us a part of kingdom.

Koṇika denied the division of kingdom, and tried to take Necklace and elephant by force.

Halla-Vihalla knew the scheme of *Konika*. Then they stealthily run away to their maternal grandfather king *Ceṭaka* taking with them all their army, treasure, seraglio, necklace and elephant. When *Koṇika* came to know that *Halla-Vihalla* have stealthily run away from *Campā* city then he filled with wrath. He sent message to his maternal grand father to send back princes *Halla-Vihalla* with divine necklace and *Siṅcānaka* elephant. *Ceṭaka* was a just man He replied that if *Koṇika* gives half of his kingdom to princes *Halla* and *Vihalla* then he could accord with his message.

Denying this term *Koṇika* attacked *Vaśālī*, capital city of *Ceṭaka*. With king *Koṇika* his ten step brothers *Kālīkumāra* etc., came as army-chief in battle field. Crores of men murdered and these ten brothers also killed by the arrows of *Ceṭaka*.

During this period *Bhagawāna* arrived to *Campā* city. *Kāli* etc, all the queens asked to *Bhagawāna*—that can they see the faces of their sons, when they return from battle field or not ? *Prabhu* told that your sons are murdered in war.

Hearing this all the ten queens thought that life is momentary, so disinclined to world, became consecrated.

सूत्र ३ :

तए णं सा काली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया; उवागच्छित्ता एवं वयासी—इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।

"अहासुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ।"

तए णं सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अब्भणुण्णाया समाणी रयणावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

काली आर्या का रत्नावली तप

सूत्र ३ :

एक बार काली आर्या ने आर्या चन्दनबाला के पास आकर वंदना नमस्कार करके इस प्रकार निवेदन किया—

हे आर्ये ! आपकी आज्ञा प्राप्त होने पर मैं रत्नावली नामक तप को अंगीकार करके विचरना चाहती हूँ ।

साध्वी प्रमुखा चन्दनबालाजी ने अनुज्ञा प्रदान करते हुए कहा—देवानुप्रिये ! जैसा सुख हो वैसा करो, विलम्ब मत करो ।

तब आज्ञा प्राप्त कर आर्या काली ने रत्नावली नामक तप विशेष की इस प्रकार आराधना की—

Ratnāvali Penance of Āryā Kāli

Maxim 3 :

Once *Ārya Kālī* approached to *Āryā Candanabālā*, bowing down and worshipping her, requested—O *Ārye* ! I intend to accept *Ratnāvalī* penance, if you permit me.

Chief nun *Candanabālā* permitting *Āryā Kālī* said–O beloved as gods ! Do as pleases you; but do not make delay in auspicious deeds.

Getting permission *Āryā Kālī* propiliated *Ratnāvalī* penance in this way–

सूत्र ४ :

तं जहा-

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठछट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता, चउत्थं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता, अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामुणियं पारेइ,

पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता तीसइमं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चोत्तीसं छट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चोद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठमं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता अट्ठछट्ठाइं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ

पारित्ता अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ,

पारित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ ।

एवं खलु सा रयणावलीए तवोकम्मस्स पढमा परिवाडी, एगेणं संवच्छरेणं तिहिं मासेहिं बावीसाए य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव आराहिया भवइ ।

सूत्र ४ :

उपवास (चतुर्थ भक्त) किया, करके सर्वकाम गुणयुक्त (विगय सहित) पारणा किया। पारणा करके, बेला (षष्ठ भक्त) किया, फिर पारणा किया। पारणा करके तेला (अष्टम भक्त) किया, फिर पारणा किया । पारणा करके, आठ बेले किये, फिर पारणा किया। पारणा करके, उपवास किया, फिर पारणा किया। पारणा करके, बेला किया, फिर पारणा किया। पारणा करके तेला किया, फिर पारणा किया। पारणा करके, (दशम) चोला किया, फिर पारणा किया । पारणा करके (द्वादशम) पंचोला किया, फिर पारणा किया । पारणा करके, छह दिन का उपवास (चतुर्दश भक्त) किये, फिर पारणा किया । पारणा करके सात दिन का उपवास किया फिर पारणा किया । पारणा करके, आठ उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, नव उपवास किये, फिर पारणा किया। पारणा करके, दश उपवास किये, पुनः पारणा किया। पारणा करके, ग्यारह उपवास किये, पुनः पारणा किया। पारणा करके, बारह उपवास किये, पुनः पारणा किया। पारणा करके, तेरह उपवास किये, पुनः पारणा किया । पारणा करके, चौदह उपवास किये, पुनः पारणा किया । पारणा करके, पन्द्रह उपवास किये, पुनः पारणा किया। पारणा करके, सोलह दिन का उपवास किया, (चौंतीस भक्त) पुनः पारणा किया । पारणा करके चौंतीस बेले किये, फिर पारणा किया । पारणा करके पुनः सोलह दिन का उपवास (चौंतीस भक्त) किये, पुनः पारणा किया । पारणा करके, पन्द्रह उपवास किये, फिर पारणा किया। पारणा करके चौदह उपवास किये, पारणा किया । पारणा करके

तेरह उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, बारह उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, ग्यारह उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, दस उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, नव उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, आठ उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, सात उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके छह उपवास किये, फिर पारणा किया । पारणा करके, पंचोला किया, फिर पारणा किया । पारणा करके, चोला किया, पारणा किया, करके, तेला किया, फिर पारणा किया । पारणा करके बेला किया फिर पारणा किया । पारणा करके, उपवास किया, फिर पारणा किया । करके आठ बेले किये, फिर पारणा किया । पारणा करके तेला किया, फिर पारणा किया, करके बेला किया, फिर पारणा किया । पारणा करके, उपवास किया, और पश्चात् सर्वकाम गुणयुक्त पारणा किया ।

इस प्रकार काली आर्या ने रत्नावली तप की एक परिपाटी (लड़ी) की आराधना की । रत्नावली तप की यह एक परिपाटी एक वर्ष, तीन महीने और बाईस दिन में पूर्ण होती है । (इस परिपाटी में तीन सौ चौरासी दिन तपस्या के और अट्ठासी दिन पारणा के होते हैं । इस प्रकार कुल चार सौ बहत्तर दिन होते हैं ।)

Maxim 4 :

She fasted upto four meals i.e. one day fast; broke it with all kinds of meals (with butter sweets etc.,); then two days' fast, broke it and took meal; then three day's fast, took meal; eight two days's fast, took meals; then one day fast, took meals; then two days' fast took meals; three days' fast, took meals; four days' fast, took meals; five days' fast, took meals; six days' fast, took meals; seven days' fast, took meals; eight days' fast, took meals; nine days' fast, took meals; ten days' fast, took meals; eleven days' fast, took meals, twelve days' fast, took meals; thirteen days' fast, took meals; fourteen days' fast, took meals; fifteen days' fast, took meals; sixteen days' fast, took meals; and then she practised thirtyfour two days' fast, took meals and

then sixteen days' fast, took meals; fifteen days' fast, took meals; fourteen days' fast, took meals; thirteen days' fast, took meals; twelve days' fast, took meals, eleven days' fast, took meals; ten days' fast, took meals; nine days' fast, took meals; eight days' fast, took meals; seven days' fast, took meals; six days' fast, took meals; five days' fast, took meals; four days' fast, took meals; three days' fast, took meals; two days' fast, took meals, one day fast, took meals; eight two days' fast, took meals; three days' fast, took meals; two days' fast, took meals; one day fast and then took meals of all the four types according to her desire and need.

[*N.B.* Though the English tanslation has been given of Hindi rendering about practising *Ratnāvalī* penance; but it seems superfluous to understand the readers of English Version.]

Thus *Āryā Kāḷī* completed one series of *Ratnāvalī* penance. This one series of *Ratnāvalī* penance takes one year, three months and twentytwo days to complete. In this series there are three hundred eightyfour days of penance and eightyeight days of taking meal.

सूत्र ५ :

तयाणंतरं च णं दोच्चाए परिवाडिए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ,

पारित्ता छट्ठं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ,

एवं जहा पढमाए परियाडीए तहा बीयाए वि, णवरं सव्वत्थ पारणगए विगइवज्जं पारेइ, जाव आराहिया भवइ ।

तयाणंतरं च णं तच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता अलेवाडं पारेइ सेसं तहेव । एवं चउत्था परिवाडी, णवरं सव्वत्थ पारणाए आयंबिलं पारेइ । सेसं तं चेव ।

पढमम्मि सव्वकामपारणयं, बीइयए विगइवज्जं ।
तइयम्मि अलेवाडं, आयंबिलओ चउत्थम्मि ॥

तए णं सा काली अज्जा रयणावलिं तवोकम्मं पंचहिं संवच्छरेहिं दोहिं य मासेहिं अट्ठावीसाए य दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं वंदइ, णमंसइ; वंदित्ता, णमंसित्ता बहूहिं चउत्थ छट्ठट्ठम दसम-दुवालसेहिं तवोकम्मेहिं अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।

सूत्र ५ :

इसके बाद काली आर्या ने रत्नावली तप की दूसरी परिपाटी प्रारम्भ की। उन्होंने पहले उपवास किया, उपवास का पारणा विगय रहित अर्थात् दूध, दही, घी, तेल और मीठा इन पांचों विगयों को छोड़ते हुए किया । इस प्रकार उपवास का पारणा करके बेला किया, पारणा किया । इस दूसरी परिपाटी के सभी पारणों में पांचों विगयों का त्याग रखा ।

इस प्रकार पहली परिपाटी के समान ही इस दूसरी परिपाटी का आराधन किया जाता है । विशेषता यही है कि पारणों में विगयों का सेवन वर्जित रहता है । बाकी तपस्या का क्रम एक समान ही है ।

इसके पश्चात् तीसरी परिपाटी में वह काली आर्या उपवास करती है, और लेप रहित पारणा करती है । शेष पहले के समान है । ऐसे ही काली आर्या ने चौथी परिपाटी की आराधना की । इसमें विशेषता यह है कि पारणे के दिन आयम्बिल करती है। शेष उसी प्रकार है ।

गाथार्थ—प्रथम परिपाटी में सर्वकामगुणयुक्त एवं दूसरी में विगय रहित पारणा किया । तीसरी में लेप रहित और चौथी परिपाटी में आयंबिल से पारणा किया ।

इस भांति काली आर्या ने संपूर्ण रत्नावली तप की आराधना की । इसमें पाँच वर्ष दो महीने और अट्ठाईस दिनों का समय लगा । तप आराधन करने के पश्चात् जहाँ आर्या चंदना थी, वहाँ आई और आर्या चन्दना को वन्दन नमस्कार किया ।

तदनन्तर बहुत से उपवास, बेले, तेले, चोला, पंचोला आदि तप से अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

Maxim 5 :

After that *Āryā Kālī* began the second series of *Ratnāvalī* penance. She observed one day fast, breaking one day fast penance she took meals devoid of milk, curd, ghee, oil and sweet–*vigayas*. After that she observed two days' fast and then took meals without all the five *vigayas*. In this second series she avoided all the five *vigayas*.

Thus second series she observed like first series. Excepting; *vigayas* are not taken. The order of penance is the same as that of first series.

After this *Kālī Āryā* observed third series. She takes meals without smearing of *vigayas*. Remaining all like first series. She also practised fourth series. In this on the day she takes meals, she practises *āyambila* penance. Rest is like same.

Couplet meaning–In the first series all types of meals according to desire and need. In the second taking meals devoid of *vigayas*. In the third taking meals even without smearing of *vigayas*; and in the fourth taking of *Āyambila* gruel.

Thus *Kālī Āryā* propiliated complete *Ratnāvalī* penance. It took five years, two months and twentyeight days to perform. After practising this penance in due order, she came to *Āryā Candanā* and bowed down and woshipped her.

Thereafter *Kāḷī Āryā* began to wander engrossed her soul by various kinds of fast penances like–one day, two days', three days', four days', five days' etc.

सूत्र ६ :

तए णं सा काली अज्जा तेणं ओरालेणं तवोकम्मेणं सुक्का जाव धमणिसंतया जाया यावि होत्था। से जहा णामाए इंगाल सगडी या जाव

सुहुय हुयासणे इव भासरासिपलिच्छण्णा तवेणं तेएणं तव तेयसिरीए अईव अईव उवसोभेमाणी चिट्ठइ ।

काली आर्या की अन्तिम साधना

सूत्र ६ :

इतनी तपस्या करने के बाद काली आर्या उस कठोर घोर तपस्या से सूख गई, मांस सूखकर उसकी नसें प्रत्यक्ष साफ दिखने लगीं । अर्थात् उसके शरीर का रक्त-मांस प्रायः सूख गया, सिर्फ हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया । जैसे कोयले से भरी गाड़ी में चलते समय आवाज निकलती है, वैसे उठते-बैठते, चलते-फिरते काली आर्या की हड्डियाँ भी कड़-कड़ बोलने लगीं । फिर भी होम की हुई अग्नि के समान एवं भस्म से ढकी हुई आग जैसे भीतर से प्रज्वलित रहती है वैसे तपस्या के तेज की शोभा से आर्या काली का शरीर अत्यन्त शोभायमान हो रहा था ।

Last Propiliation of Kālī Āryā

Maxim 6 :

Due to these hard and rigorous penances *Kālī Āryā* became lean and thin. Her veins became visible clearly–meaning blood and flesh of her body dried up and her body reduced to skeleton of bones only. As the cart full of coals makes sound while moving, so was the position of her body. Moving, sitting, standing, her bones make the sound of creaking, *i.e., khada-khada* still then, as the sacrificial fire, and fire covered by ashes, remain burning inside; so by the flames of penance the body of *Āryā Kālī* was full of lustre.

सूत्र ७ :

तए णं तीसे कालीए अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकाले अयमज्झत्थिए । जहा खंदयस्स चिंता जाव-अत्थि उट्ठाणे कम्मे, बल वीरिए, पुरिसक्कार-परक्कमे, सद्धा धिई संवेगे वा ताव मे सेयं कल्लं

जाव जलंते अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छित्ता अज्ज चंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णायाए समाणीए संलेहणा झूसणा झूसियाए भत्त-पाण-पडियाइक्खियाए कालं अणवकंखमाणीए विहरित्तए त्ति कट्टु एवं संपेहेइ, संपेहित्ता कल्लं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—

इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा जाव विहरित्तए ।

अहा सुहं देवाणुप्पिया ! मा पडिबंधं करेह ।

तओ काली अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाया समाणी संलेहणा झूसणा झूसिया जाव विहरइ ।

सा काली अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं अट्ठ संवच्छराइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ णग्गभावे जाव चरिमुस्सासणीसासेहिं सिद्धा ।

(पढमं अज्झयणं)

सूत्र ७ :

फिर किसी दिन रात्रि के पिछले प्रहर में काली आर्या के हृदय में स्कन्दक मुनि के समान इस प्रकार विचार उत्पन्न हुआ—"इस कठोर तप साधना के कारण मेरा शरीर अत्यन्त कृश हो गया है, तथापि जब तक मेरे इस शरीर में उत्थान (उठने बैठने की शक्ति) कर्म, (संयम क्रियाएं करने की क्षमता) बल, वीर्य (जीवनी शक्ति) और पुरुषाकार (पुरुषार्थ-अदीन भावना) पराक्रम है, मन में श्रद्धा, धैर्य एवं वैराग्य है, तब तक मेरे लिये उचित है कि कल सूर्योदय होने के पश्चात् मैं चन्दना आर्या को पूछकर उनकी आज्ञा प्राप्त होने पर संलेखना झूसणा का सेवन करती हुई भक्तपान का

त्याग करके मृत्यु को नहीं चाहती हुई अर्थात् जीवन और मरण की इच्छा से रहित निष्काम विचरण करूँ ।

ऐसा सोचकर वह अगले दिन सूर्योदय होते ही जहाँ आर्या चन्दना थी, वहां आई और आर्या चन्दना को वन्दना नमस्कार कर इस प्रकार बोली–

हे आर्ये ! आपकी आज्ञा हो तो मैं संलेखणा-झूसणा करते हुए विचरना चाहती हूँ ।

आर्या चन्दना ने कहा–हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हे सुख हो, वैसा करो । सत्कार्य साधन में विलम्ब मत करो ।

तब आर्या चन्दना की आज्ञा पाकर काली आर्या संलेखना-झूसणा करती हुई विचरने लगी ।

काली आर्या ने आर्या चन्दना के पास सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया था और पूरे आठ वर्ष तक चारित्र धर्म का पालन करके एक मास की संलेखना से आत्मा को झूषित (कर्म रहित, निर्मल बनाकर) कर, साठ भक्त का अनशन पूर्ण कर, जिस हेतु से संयम ग्रहण किया था उसी निर्ममत्व भाव (नग्न भाव) से उसको अन्तिम श्वासोच्छ्वास तक पूर्ण करके वह काली आर्या सिद्ध-बुद्ध और मुक्त हो गई ।

(प्रथम अध्ययन समाप्त)

Maxim 7 :

Again, any day, like monk *Skandaka*, these thoughts aroused in the mind of *Āryā Kālī*–Though my body has become lean, thin and reduced, yet, until, in my this body are *utthāna*, *karma*, *bala*, *vīrya*, *puruṣākāra* and *parākrama*; faith, steadiness and apathy in mind-head and heart; it would be proper for me that tomorrow after rising the sun I should go to *Āryā Candanā* and taking her permission I accept *saṁthārā* and renounce food and water-every kind of meals, not wishing death meaning becoming devoid of the wish of life and death, fix myself in soul virtues.

Thinking thus, next day as the sun rose in the sky *Āryā Kālī* approached to *Āryā Candanā* bowing down and worshipping her said–

"O *Ārye* ! If you allow me, I want to accept *saṁlekhanā-jhūsaṇā*.

Āryā Candanā said allowing her.

O beloved as gods ! Do as you feel happy ; but do not delay in auspicious deeds.

Getting permission of *Āryā Candanā*, *Āryā Kālī* accepted last penance of fast–starvation and emaciation (*saṁlekhanā-jhūsaṇā*).

Āryā Kālī had learnt *Sāmāyika* etc., eleven holy scriptures (*aṅgas*) from *Āryā Candanā* (before) and completed eight years of sage-conduct period. She emaciated (exhausting all *karma*, making her soul pure), cutting off sixty meals accepted restrain for which purpose fulfilled that with her last breath, she became beatified, emancipated and ended all miseries.

[*N. B.* Please see the chart of *Ratnāvalī* penance.]

[First chapter consumed]

द्वितीय अध्ययन

सुकाली आर्या : कनकावली तप

सूत्र ८–

उक्खेवओ बीयस्स अज्झयणस्स।

एवं खलु जंबू ! तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपा णामं णयरी, पुण्णभद्दे चेइए, कोणिए राया।

तत्थ णं सेणियस्स रण्णो भज्जा कोणियस्स रण्णो चुल्लमाउया सुकाली णामं देवी होत्था।

जहा काली तहा सुकाली वि णिक्खंता जाव बहूहिं चउत्थ जाव अप्पाणं भावेमाणी विहरइ।

तए णं सा सुकाली अज्जा अण्णया कयाइं जेणेव अज्जचंदणा अज्जा जाव "इच्छामि णं अज्जाओ तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी कणगावली तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए।"

एवं जहा रयणावली तहा कणगावली वि, णवरं तिसु ठाणेसु अट्ठमाइं करेइ, जहा रयणावलीए छट्ठाइं। एक्काए परिवाडीए संवच्छरो, पंचमासा बारस य अहोरत्ता। चउण्हं पंच वरिसा णव मासा अट्ठारस दिवसा। सेसं तहेव, णववासा परियाओ जाव सिद्धा।

सूत्र ८ :

दूसरे अध्ययन का उत्क्षेपक इस प्रकार है–

आर्य जम्बू स्वामी ने कहा–हे भगवन् ! आठवें वर्ग के दूसरे अध्ययन में प्रभु महावीर ने क्या भाव फरमाये हैं ? कृपया बताइये।

श्री सुधर्मा स्वामी ने कहा–हे जम्बू ! उस काल उस समय में चम्पा नाम की नगरी थी, वहां पूर्णभद्र उद्यान (चैत्य) था, कोणिक नाम का राजा वहां राज्य करता था। उस नगरी में श्रेणिक राजा की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता सुकाली नाम की देवी थी।

काली की तरह सुकाली भी वैराग्य प्राप्त कर प्रव्रजित हुई और बहुत से उपवास आदि तप से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी।

फिर वह सुकाली आर्या अन्यदा किसी दिन आर्या चन्दना के पास आकर इस प्रकार बोली–"हे आर्ये ! आपकी आज्ञा होने पर मैं कनकावली तप को अंगीकार करके विचरना चाहती हूँ।"

महासती आर्या चन्दना की आज्ञा पाकर सुकाली आर्या ने रत्नावली तप के समान कनकावली तप की आराधना की। विशेषता इसमें यह थी कि तीनों स्थानों पर अष्टम–तेले किये, जबकि रत्नावली तप में बेले किये

जाते हैं । एक परिपाटी में एक वर्ष, पांच महीने और बारह अहोरात्रियां लगती हैं ।

इस एक परिपाटी में ८८ दिन का पारणा और १ वर्ष २ मास और १४ दिन का तप होता है । चारों परिपाटी का काल पाँच वर्ष नौ महीने और अठारह दिन होते हैं । शेष वर्णन काली आर्या के समान है । नव वर्ष तक चारित्र का पालन कर यावत् वह भी सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गई ।

(द्वितीय अध्ययन समाप्त)

Chapter 2

Maxim 8 :

Introduction to the second chapter is like this–

Ārya Jambū Swāmī said–O *Bhagawan* ! What subject matter expressed by *Prabhu* in the second chapter of eighth section ? Please tell me.

Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! At that time and at that period there was a city named *Campā*. There was situated *Pūrṇabhadra* garden (sanctuary). King *Koṇika* was ruling there. There lived queen *Sukālī* consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*.

Sukālī also accepted consecration like queen *Kālī* and began to wander engrossing her soul by many types of fast penances.

Then on any day *Āryā Sukālī* reached to *Āryā Candanā* and spoke–O *Ārye* ! If you permit me I intend to wander practising *Kanakāvalī* penance.

Getting permission of chief nun *Āryā Candanā*, *Ārya Sukālī* practised *Kanakāvalī* penance, like penance of *Ratnāvalī*. Excepting; on the three occasions she practised three days' fast, while in *Ratnāvalī* two days' fast practised. It takes the period of one year, five months and twelve days to complete one series.

In this one series eightyeight days are of taking meals and one year, two months, fourteen days are of fast.

The time period of all the four series is of five years, nine months, eighteen days.

Rest description is like *Āryā Kālī*. Practising nun-conduct upto nine years, she became beatified.

[Second chapter consumed]

तृतीय अध्ययन

महाकाली आर्या : लघुसिंहनिष्क्रीड़ित तप

सूत्र १ :

एवं महाकाली वि ! णवरं खुड्डागं सीहणिक्कीलियं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । तं जहा—

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

तहेव चत्तारि परिवाडीओ। एक्काए परिवाडीए छम्मासा सत्त य दिवसा । चउण्हं दो वरिसा अट्ठावीस य दिवसा जाव सिद्धा ।

सूत्र १ :

जम्बू स्वामी ने सुधर्मा स्वामी से पूछा—हे भगवन् ! आठवें वर्ग के तीसरे अध्ययन का भगवान ने क्या भाव फरमाया है ?

सुधर्मा स्वामी ने कहा—हे जम्बू ! तीसरे अध्ययन में महाकाली रानी का वर्णन है । वह श्रेणिक राजा की भार्या और कोणिक राजा की छोटी माता थी । उन्होंने भी सुकाली रानी के समान दीक्षा धारण की और **लघुसिंह-निष्क्रीड़ित** नामक तप किया ।

वह इस प्रकार है—सर्वप्रथम उपवास किया, पारणा किया, (इसकी भी पहली परिपाटी के सभी पारणों में विगयों का सेवन वर्जित नहीं था) फिर बेला किया, फिर पारणा करके उपवास किया । फिर पारणा करके तेला किया । इस प्रकार आगे बेला, चोला, तेला, पचोला, चोला, छह, पाँच, सात, छह, आठ, सात, नौ और आठ किये ।

फिर नौ, सात, आठ, छह, सात, पाँच, छह, चार, पाँच, तीन, चार, दो, तीन, उपवास, दो और उपवास किया । इस प्रकार लघुसिंह निष्क्रीड़ित तप की एक परिपाटी की ।

एक परिपाटी में छह महीने और सात दिन लगे । जिसमें पारणे के तेतीस दिन और तपस्या के पाँच मास और तीन दिन हुए । इस प्रकार महाकाली आर्या ने चार परिपाटी की, जिसमें दो वर्ष और अट्ठाईस दिन लगे ।

इस प्रकार महाकाली आर्या ने लघुसिंह निष्क्रीड़ित तप की सूत्रोक्त विधि से आराधना की । तत्पश्चात् महाकाली आर्या ने अनेक प्रकार की फुटकर तपस्याएँ कीं। अन्त में संथारा करके सम्पूर्ण कर्मों का क्षय करके मोक्ष को प्राप्त हुई ।

Chapter 3

Maxim 9 :

Jambū Swāmī asked to *Sudharmā Swāmī*–O *Bhagawan* ! What subject matter has been told by *Bhagawāna* of the third chapter of eighth section.

Sudharmā Swāmī told–O *Jambū* ! In the third chapter, there is the description of queen *Mahākālī*. She was consort of king *Śreṇika* and younger step mother of *king Koṇika*. She accepted consecration like queen *Sukālī* and practised *Laghu singhaniṣkrīḍita* penance.

Details of that penance are like this. First of all she practised one day fast then took meals (In the first series of this penance, the practiser takes meals with all five kinds of *vigayas.*) After breaking fast next day she practised two days' fast and took meals, then one day fast penance then next day took meals. Then three days' fast and took meals. Thus afterwards she practised two, four, three, five, four, six, five, seven, six, eight, seven, nine and eight days' fast penance.

Again practised nine, seven, eight, six, seven, five, six, four, five, three, four, two, three, one, two and one days' fast penance. In this way accomplished one series of *Laghu singha niṣkrīḍita* fast penance.

One series took the time period of six months and seven days. Among them thirty three days of taking meals and five months, three days were of fast penance.

Thus, *Mahākālī Āryā* practised four series of this penance and it took two years and twentyeight days.

In this way, *Mahākālī Āryā* practised smaller lion's play (*Laghu singha niṣkrīḍita*) penance in aforesaid manner. Afterwards she practised various types of miscellaneous penances. In the ending period of her life she accepted *saṁthārā* and exhausting all the *karmas*, became beatified.

विवेचन

आर्या महाकाली ने लघुसिंहनिष्क्रीड़ित तप की आराधना की थी। प्रस्तुत सूत्र में इसे खुड्डाग सीहनिक्कीलियं कहा है, जिसका अर्थ है–जिस प्रकार गमन करता हुआ सिंह अपने अतिक्रान्त मार्ग को पीछे मुड़कर फिर देखता है और फिर आगे चलता है। इसे सिंहावलोकन भी कहते हैं। उसी प्रकार जिस तप में अतिक्रमण किए हुए उपवास के दिनों को फिर से सेवन करके आगे बढ़ा जाए।

सिंहनिष्क्रीड़ित तप दो प्रकार का होता है, एक लघुसिंहनिष्क्रीड़ित और दूसरा महासिंहनिष्क्रीड़ित तप। प्रस्तुत अध्ययन में वर्णित आर्या महाकाली ने लघुसिंहनिष्क्रीड़ित तप की आराधना की। अगले अध्ययन में वर्णित कृष्णा आर्या ने महासिंहनिष्क्रीड़ित तप किया है।

(तृतीय अध्ययन समाप्त)

Elucidation

Āryā Mahākālī practised *Laghu-singha-niskrīḍita* penance, which is said in present *sūtra* as *khuddāga Sīha nikkiliyaṁ*. It denotes that as the lion, while walking, visualises the path he has passed turning back and then moves forward–that is called as retrospection. In the same way, during this penance the practiser moving forward jumps in due order, then returns and practises that, e.g. a penancer observing five days' fast jumps on seven days' fast then he returns and practises six days' fast.

Singha-niskrīḍita penance is of two kinds–1. *Laghu singha-niṣkrīḍita* penance and 2. *Mahā-singha niskrīḍita* penance. Described in present chapter *Āryā Mahākālī* propiliated *Laghu Singha niskrīdita* penance. As described in next chapter *Āryā Kṛsnā* has practised *Mahā Singha-niṣkrīḍita* penance.

[Third chapter consumed]

चतुर्थ अध्ययन

कृष्णा आर्या : महासिंह निष्क्रीड़ित तप

सूत्र १० :

एवं कण्हा वि। णवरं महासीहणिक्कीलियं तवोकम्मं जहेव खुड्डागं।
णवरं चोत्तीसइमं जाव णेयव्वं, तहेव ऊसारेयव्वं एक्काए परिवाडीए एगं

वरिसं, छम्मासा अट्ठारस य दिवसा। चउण्हं छ वरिसा, दो मासा, बारस य अहोरत्ता, सेसा जहा कालीए, जाव सिद्धा।

सूत्र १० :

इसी प्रकार कृष्णा रानी का भी चौथा अध्ययन समझना चाहिए। महाकाली से इसमें विशेषता यह है कि इन्होंने महासिंह-निष्क्रीड़ित तप किया। लघुसिंह निष्क्रीड़ित तप से इसमें इतनी विशेषता है कि एक से लेकर १६ तक तप किया जाता है और उसी प्रकार उतरा जाता है। एक परिपाटी में एक वर्ष छह महीने और अठारह दिन लगते हैं। चारों परिपाटियों में छह वर्ष, दो महीने और बारह दिन (अहोरात्रि) लगते हैं।

शेष वर्णन काली आर्या के समान ही है। अन्त में संथारा संलेखना करके यह काली आर्या की तरह सिद्ध बुद्ध और मुक्त हो गई।

(चतुर्थ अध्ययन समाप्त)

Chapter 4

Maxim 10 :

In the same way should be understood fourth chapter, relating to queen *Kṛṣṇā*. Excepting; *Kṛṣṇā Āryā* practised *Mahā siṅgha niṣkriḍita* (greater lion's play) penance. Distinguishment of this penance from *Laghu siṅgha-niṣkīḍita* penance is that in this penance it is carried upto 16 days' fast in ascending order and so it is carried down upto one day fast in descending order. One series takes time period of one year, six months, eighteen days. So all the four series are completed in six years, two months, twelve days.

Rest description is like *Kālī Āryā*. In the ending period accepted *saṁthārā* and attained salvation like *Kāḷī Āryā*.

[N.B. See the chart of *Mahāsiṅgha-niṣkrīdita* (greater lions's play) penance]. **[Fourth chapter consumed]**

पंचम अध्ययन

सुकृष्णा आर्या : सप्त सप्तमी भिक्षु प्रतिमा

सूत्र ११ :

एवं सुकण्हा वि, णवरं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। पढमे सत्तए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स ।

दोच्चे सत्तए दो दो भोयणस्स दो दो पाणगस्स ।

तच्चे सत्तए तिण्णि तिण्णि भोयणस्स तिण्णि तिण्णिपा णगस्स ।

चउत्थे चउ, पंचमे पंच, छट्ठे छ, सत्तमे सत्तए सत्त दत्तीओ भोयणस्स पडिगाहेइ, सत्त पाणगस्स ।

एवं खलु एयं सत्तसत्तमियं भिक्खुपडिमं एगूणपण्णाए राइंदिएहिं एगेण य छण्णउएणं भिक्खासएणं अहासुत्तं जाव आराहित्ता जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागया ।

अज्जचंदणं अज्जं वंदइ, णमंसइ, वंदित्ता, णमंसित्ता एवं वयासी— "इच्छामि णं अज्जाओ ! तुब्भेहिं अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरित्तए ।"

अहासुहं देवाणुप्पिए ! मा पडिबंधं करेह ।

तए णं सा सुकण्हा अज्जा अज्जचंदणाए अज्जाए अब्भणुण्णाया समाणी अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

पढमे अट्ठए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स दत्तिं, जाव अट्ठमे अट्ठए अट्ठट्ठ भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ अट्ठट्ठ पाणगस्स ।

एवं खलु अट्ठट्ठमियं भिक्खुपडिमं चउसट्ठीए राइंदिएहिं दोहिं य अट्ठासीएहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता, नव-नवमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

पढमे नवए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स, जाव नवमे नवए नव-नव-दत्तिं भोयणस्स पडिगाहेइ नव-नव पाणगस्स ।

एवं खलु नव-नवमियं भिक्खुपडिमं एकासीइ राइंदिएहिं चउहिं पंचोत्तरेहिं, भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता ।

दस-दसमियं भिक्खुपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ ।

पढमे दसए एक्केक्कं भोयणस्स दत्तिं पडिगाहेइ एक्केक्कं पाणगस्स- जाव दसमे दसए दस-दस भोयणस्स दस-दस पाणगस्स ।

एवं खलु एयं दस-दसमियं भिक्खुपडिमं एक्केणं राइंदियसएणं अद्धछट्ठेहिं भिक्खासएहिं अहासुत्तं जाव आराहेइ ।

आराहित्ता बहूहिं चउत्थ जाव मास-द्धमास-विविह-तवोकम्मेहि अप्पाणं भावेमाणी विहरइ ।

तए णं सा सुकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं जाव सिद्धा ।

पंचम अध्ययन

सूत्र ११ :

इसी प्रकार पांचवें अध्ययन में सुकृष्णा देवी का भी वर्णन समझना चाहिये । यह भी श्रेणिक राजा की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी । इसने भगवान का उपदेश सुनकर श्रमण दीक्षा अंगीकार की । इसमें विशेषता यह है कि आर्या चन्दनबाला की आज्ञा प्राप्त कर आर्या सुकृष्णा "सप्त-सप्तमिका" भिक्षु प्रतिमा रूप तप अंगीकार करके विचरने लगी, जिसकी विधि इस प्रकार है–

प्रथम सप्ताह में एक दत्ति (दाती–अखंडधारा) भोजन की और एक ही दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है । "दत्ति–का अर्थ है दाता एक बार में या एक ही अंखड धारा में जितना देता है वह एक दत्ति कहलाती है । दूसरे सप्ताह में दो-दो दत्ति भोजन की और दो-दो दत्ति पानी की, तीसरे

सप्ताह में तीन दत्ति भोजन की और तीन पानी की, चौथे सप्ताह में चार-चार, पांचवें सप्ताह में पाँच-पाँच, छठे में छह-छह, और सातवें सप्ताह में सात दत्ति भोजन की ली जाती हैं, तथा सात ही दत्ति पानी की ग्रहण की जाती हैं ।

इस प्रकार उनचास (४९) रात-दिन में एक सौ छियानवे (१९६) भिक्षा की दत्तियाँ होती हैं ।

सुकृष्णा आर्या ने सूत्रोक्त विधि के अनुसार इसी "सप्त-सप्तमिका" भिक्षु प्रतिमा तप की सम्यग् आराधना की । इसमें आहार-पानी की सम्मिलित रूप से प्रथम सप्ताह में सात दत्तियाँ हुई, दूसरे सप्ताह में चौदह, तीसरे सप्ताह में इक्कीस, चौथे सप्ताह में अट्ठाईस, पाँचवें सप्ताह में पैंतीस, छठे सप्ताह में बियालीस और सातवें सप्ताह में उनचास दत्तियाँ हुईं । इस प्रकार सभी मिलाकर कुल एक सौ छियानवें (१९६) दत्तियाँ हुईं ।

इस तरह सूत्रानुसार इस प्रतिमा का आराधन करके सुकृष्णा आर्या, आर्या चन्दनबाला के पास आई और उन्हें वंदन नमस्कार करके इस प्रकार बोली–

हे आर्ये ! आपकी आज्ञा होने पर मैं "अष्ट-अष्टमिका" भिक्षु प्रतिमा तप अंगीकार करके विचरना चाहती हूँ ।

आर्या चन्दना ने कहा–"हे देवानुप्रिये ! जैसा तुम्हें सुख हो, वैसा करो । धर्म कार्य में प्रमाद मत करो ।"

फिर वह सुकृष्णा आर्या, चन्दना आर्या की आज्ञा प्राप्त होने पर अष्ट-अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा अंगीकार करके विचरने लगी ।

इस तप में प्रथम अष्टक में एक-एक दत्ति भोजन की और एक-एक दत्ति पानी की ग्रहण की जाती है । यावत् इसी क्रम से दूसरे अष्टक में प्रतिदिन दो दत्तियाँ आहार की और दो ही दत्तियाँ पानी की ली जाती हैं । इसी प्रकार क्रम से आठवें अष्टक में आठ दत्ति आहार और आठ दत्ति पानी की ग्रहण की जाती हैं । इस प्रकार अष्ट अष्टमिका भिक्षु प्रतिमा तपस्या चौंसठ (६४) दिन-रात में पूर्ण होती है । जिसमें आहार-पानी की दो सौ अट्ठासी (२८८) दत्ति होती हैं । सुकृष्णा आर्या ने सूत्रोक्त विधि से इस अष्ट अष्टमिका प्रतिमा का आराधन किया ।

इसके बाद आर्या चन्दना की आज्ञा प्राप्त कर उसने नवनवमिका भिक्षु प्रतिमा अंगीकार की । प्रथम नवक में एक दत्ति आहार और एक दत्ति पानी की ग्रहण की । इस क्रम से नौवें नवक में नौ दत्तियाँ आहार की और नौ दत्तियाँ पानी की ग्रहण कीं । यह "नवनवमिका" भिक्षु प्रतिमा इक्यासी (८१) दिन-रात में पूरी हुई । इसमें आहार-पानी की चार सौ पांच (४०५) दत्तियाँ हुईं । इस नवनवमिका भिक्षु प्रतिमा का सुकृष्णा आर्या ने सूत्रोक्त विधि के अनुसार आराधन किया ।

इसके पश्चात् सुकृष्णा आर्या ने दशदशमिका भिक्षु प्रतिमा अंगीकार की । इसके प्रथम दशक में एक दत्ति भोजन की और एक दत्ति पानी की ग्रहण की । इस प्रकार क्रमशः दसवें दशक में दस दत्ति भोजन की और दस दत्ति पानी की ग्रहण की । यह दशदशमिका भिक्षु प्रतिमा एक सौ (१००) दिन-रात में पूर्ण होती है । इसमें आहार पानी की सम्मिलित रूप से पाँच सौ पचास (५५०) दत्तियाँ होती हैं । इस प्रकार इन भिक्षु प्रतिमाओं का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया ।

फिर सुकृष्णा आर्या उपवासादि से लेकर अर्द्धमासखमण और मासखमण आदि विविध प्रकार की तपस्या से आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी । इस उदार एवं घोर तपस्या के कारण सुकृष्णा आर्या अत्यधिक दुर्बल हो गयी । अन्त में संथारा करके सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर सिद्धगति को प्राप्त हुई । **(पांचवाँ अध्ययन समाप्त)**

Chapter 5

Āryā Sukṛṣṇā; Propiliation of Sage (Nun)-Resolution

Maxim 11 :

Similarly should be known the description of *Sukṛṣṇādevī*, in fifth chapter. She also was the consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*. Having heard the sermon of *Bhagawāna Mahāvīra*, she accepted sage (nun) consecration. Excepting; she began to wander, accepting seven-sevens sage (nun) resolution penance by the permission of *Āryā Candanabālā*.

Its method is as follows–

During first week (seven days) one dole (*datti meaning unbroken flow of food and water given by a giver)* of food and one dole (*datti*) of water is accepted every day. During second week two doles of meals and two doles of water. During third week three-three, in fourth four-four, in fifth five-five in sixth six-six and in seventh seven-seven doles of meals and water are accepted.

Thus in these fortynine days, one hundred ninetysix doles are taken by practiser.

Sukṛṣṇā Āryā practised seven-sevens nun firm-resolution according to the schedule of *sūtras* in proper way. During first week, there become seven doles of meals and water combindly, during second week fourteen, in third twentyone, in fourth twentyeight, in fifth thirty five, in sixth fortytwo, in seventh fortynine. Totalling all these there became one hundred ninetysix *dattis*-doles.

Thus practising this firm resolution (*pratimā)* penance according to the schedule of *sūtra Āryā Sukṛṣṇā* went to *Āryā Candanabālā*, bowed down and worshipped her and then she said–

O *Ārye* ! I intend to wander, accepting eight-eight nun (sage) firm resolution, if you permit me.

Āryā Candanā spoke–O beloved as gods ! Do, as pleases you; but do not be negligent to religious deeds.

Then *Āryā Sukṛṣṇā* getting the permission of *Āryā Candanā* accepted the eight-eights nun firm resolution penance and began to wander.

During this penance in the first eight days one dole of meals and one dole of water is taken everyday, in second eight days two doles of meals and water is taken. In this order in last eight days eight doles of meals and eight doles of water

is taken. In all, this penance takes sixty four days to perform and total doles combined meals and water are two hundred eightyeight. *Āryā Sukṛṣṇā* performed this penance according to the schedule of *sūtra* in due order.

After this, by the permission of *Āryā Candanā* she accepted nun firm resolution penance of nine-nines. During first nine days she took one dole of meals and one dole of water everyday. In this order she took nine doles of meals and nine doles of water in nineth-nine penance, every day.

In all, this penance took eightyone day to perform and total doles, counting both the meals and water, were four hundred five. *Āryā Sukṛṣṇā* performed this nun firm resolution nine-nines penance according to the schedule prescribed in *sūtras*

Then *Āryā Sukṛṣṇā* accepted the nun firm resolution penance of ten-tens. During the first ten days she took one dole of meals and one dole of water everyday. Then increasing she took ten doles of meals and ten doles of water everyday in the last ten days of this penance. This penance completes in one hundred days and the total number of doles, counting doles of meals and water both, becomes five hundred fifty.

Thus she practised these nun firm-resolution. penances according to the schedule prescribed in *sūtras*.

Then *Āryā Sukṛṣṇā* began to wander engrossing her soul with various types of penances like–one day fast and increasing upto fortnight and full month's fast penances. Due to these rigorous penances she became too weak. In the end of life she accepted *saṁthārā* and exhausting all *karmas* became beatified.

[Fifth chapter consumed]

षष्ठ अध्ययन

सूत्र १२ :

एवं महाकण्हा वि । णवरं खुड्डागं सव्वओभद्दं पडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । तं जहा—

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

एवं खलु एयं खुड्डाग-सव्वओभद्दस्स तवोकम्मस्स पढमं परिवाडिं तिहिं मासेहिं दसहिं दिवसेहिं अहासुत्तं जाव आराहित्ता ।

दोच्चाए परिवाडीए चउत्थं करेइ, करित्ता विगइवज्जं पारेइ, पारित्ता जहा रयणावलीए तहा एत्थ वि चत्तारि परिवाडीओ । पारणा तहेव । चउण्हं कालो संवच्छरो मासो दस य दिवसा । सेसं तहेव जाव सिद्धा ।

छठा अध्ययन

महाकृष्णा : लघुसर्वतोभद्रतप

सूत्र १२ :

इसी प्रकार राजा श्रेणिक की भार्या और राजा कोणिक की छोटी माता महाकृष्णा रानी ने भी भगवान के पास दीक्षा अंगीकार की । महाकृष्णा आर्या चन्दनबाला आर्या की आज्ञा लेकर "लघु सर्वतोभद्र" तप करने लगी । उसकी विधि इस प्रकार है–

सर्वप्रथम, उन्होंने उपवास किया और पारणा किया । (विगय बिना त्यागे) पारणा करके बेला किया । पारणा करके तेला किया । इसी प्रकार चोला, पचोला किया, फिर तेला, चोला, पचोला, उपवास एवं बेला किया । फिर पचोला, उपवास, बेला, तेला, चोला किया । फिर बेला, तेला, चोला,

पचोला उपवास किया। फिर चोला, पचोला, उपवास, बेला एवं तेला किया। इस प्रकार महाकृष्णा आर्या ने लघु सर्वतोभद्र तप की पहली परिपाटी पूरी की।

इस प्रकार यह लघु सर्वतोभद्र तप, कर्म की प्रथम परिपाटी तीन महीने और दस दिनों में पूर्ण होती है। इसकी सूत्रानुसार सम्यग् रीति से आराधना करके आर्या महाकृष्णा ने इसकी दूसरी परिपाटी में उपवास और विगयरहित पारणा किया।

जैसे रत्नावली तप में चार परिपाटियाँ बताई गईं वैसे ही इसमे भी चार परिपाटियाँ होती हैं। पारणा भी ऐसे ही समझना चाहिये।

इसकी पहली परिपाटी में पूरे सौ दिन लगे, जिनमें पच्चीस दिन पारणे के और पिचहत्तर दिन तपस्या के हुए। क्रम से इतने ही दिन दूसरी, तीसरी एवं चौथी परिपाटी के हुए। इस तरह इन चारों परिपाटियों का सम्मिलित काल एक वर्ष, एक मास और दस दिन हुआ।

पहली परिपाटी में पारणा बिना विगय त्यागे किया।

दूसरी परिपाटी के पारणे में विगय का त्याग किया।

तीसरी परिपाटी के पारणे में विगय के लेपमात्र का भी त्याग कर दिया।

चौथी परिपाटी में आयंबिल किया।

इस प्रकार इस तप की सूत्रोक्तविधि से आर्या महाकृष्णा ने आराधना की और अन्त में संलेखना-संथारा करके सभी कर्मों का क्षय कर सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गईं।

Chapter 6

Mahākṛṣṇā : Laghu Sarvatobhadra penance (Small fourfold penance)

Maxim 12 :

In the same way, consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*, the queen *Mahākṛṣṇa* also

accepted consecration in presence of *Bhagawāna Mahāvīra*.

Āryā Mahākṛṣṇā with the permission of *Āryā Candanā* began to practise *Laghu Sarvatobhadra* (small fourfold) penance. The method of this penance is as follows–

First of all she observed one day fast and next day broke it up, took food without renouncing *vigayas*. Then observed two days' fast, in the same way observed three days', four days; five days' fast; again observed three days', four days', five days', one day and two days' fast penance. Then observed five days', one day, two days', three days' and four days' fast. Then observed two days', three days' four day', five days' and one day fast, again four days', five days' one day', two days' and three days' fast. Thus *Āryā Mahākṛṣṇā* completed the first series of small fourfold penance.

This first series takes the time period of three months and ten days.

Practising this series according to schedule prescribed by *sūtras* and in due order *Āryā Mahākṛṣṇā* observed one day' fast in second series of this penance and took food avoiding *vigayas*.

As four series are told in *Ratnāvalī* penance, so are the four series in this penance also. Taking food also should be known like that.

The first series performed in one hundred days, among these twentyfive days were of taking meals and seventyfive days were of fast penance. Respectively so much days are in second, third and fourth series. Thus the time period of all the four series is one year one month and ten days.

In first series she took meals without renouncing *vigayas*, in second avoiding *vigayas*, in third even without smearing of *vigayas* and in fourth taking of *āyambila* gruel.

In this way *Āryā Mahākṛṣṇā* propiliated this penance according to the schedule prescribed in *sūtras*. In the ending period of life she accepted *saṁlekhanā-saṁthārā*, exhausted all the *karmas* and salvated, beatified, ended all miseries.

विवेचन

"खुड्डिय सव्वओभद्दं पडिमं" में क्षुल्लक शब्द महद् की अपेक्षा से है। सर्वतोभद्र तप दो प्रकार का है–एक महद् दूसरा लघु। यह लघु है, इस बात को प्रकट करने के लिए क्षुल्लक शब्द का प्रयोग किया गया है। गणना करने पर जिसके अंक सम अर्थात् बराबर हों, विषम न हों, जिधर से गणना की जाए उधर से ही समान हों उसे सर्वतोभद्र कहते हैं। इसमें एक से लेकर पाँच तक के अंक दिये जाते हैं। चारों ओर से जिधर से चाहें गिन लें, सभी ओर से योग की १५ ही संख्या होती है। एक से पांच तक सभी ओर से गिनने पर एक जैसी संख्या रहने से इसे सर्वतोभद्र कहा जाता है। यह प्रस्तुत यंत्र से स्पष्ट होता है।

(छठा अध्ययन समाप्त)

Elucidation

Khuḍḍiya Savvaobhaddaṁ Paḍimaṁ–In this phrase word ***khuḍḍiya*** (Sanskṛta form ***kṣullaka***) is given. It is in comparison to great (***mahad.***). Really word *Kṣullaka* means small or smaller than that, i.e., *mahad*. Thus Four-fold (*Sarvatobhadra*) penance is of two kinds–one great and another small. Here described penance is small, to make clear this the word *Kṣullaka* (small) is given.

The figures counted from any side or all sides horizontal or vertical, the sum total of figures should he the same, that is called fourfold. In this small fourfold (square) one to five figures are given. Counting all these numbers from any side the total we get is fifteen.

As clarified by figures the penancer practise penance in the same way e.g., one day fast, two days' fast upto five days' fast. So this penance has been termed as fourfold or *sarvatobhadra* penance.

This can be clearly understood by the square given here.

[Sixth chapter consumed]

सातवाँ अध्ययन

सूत्र १३ :

एवं वीरकण्हा वि । णवरं महालयं सव्वओभद्दं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । तं जहा—

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता । पढमा लया ।

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता । बीया लया ।

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता । तइया लया ।
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता । चउत्थी लया ।
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
पंचमी लया ।
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
छट्ठी लया।

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
सत्तमी लया।

एक्काए कालो अट्ठमासा पंच य दिवसा। चउण्हं दो वासा अट्ठमासा वीसं दिवसा। सेसं तहेव जाव सिद्धा।

आर्या वीर कृष्णाः महा सर्वतोभद्रतप

सूत्र १३ :

इसी प्रकार वीरकृष्णा रानी का चरित्र भी जानना चाहिये। यह भी श्रेणिक राजा की भार्या तथा कोणिक राजा की छोटी माता थी। इन्होंने भी दीक्षा अंगीकार की और आर्या चन्दनबाला से आज्ञा लेकर "महासर्वतोभद्र" तप का आराधन किया।

इसकी विधि इस प्रकार है–

सबसे पहले उपवास किया। फिर बेला किया। इसी क्रम से तेला, चोला, पचोला, छह और सात किये। या प्रथम लता हुई।

फिर चोला किया, पारणा किया, इसी प्रकार पचोला, छः, सात, उपवास, बेला और तेला किया। यह दूसरी लता हुई।

फिर सात किये, पारणा किया, उपवास, बेला, तेला, चोला, पचोला और छह किये यह तीसरी लता हुई।

फिर तेला किया, पारणा किया, पूर्वोक्त क्रम से फिर चोला किया पारणा किया, क्रमशः पचोला, छः, सात, उपवास और बेला किया। यह चौथी लता हुई।

आगे पूर्वोक्त क्रम से तप और बीच में पारणा करते हुए छः, सात, उपवास, बेला, तेला, चोला और पचोला किया। यह पांचवीं लता हुई।

फिर बेला, तेला, चोला, पचोला, छः, सात और उपवास किया। यह छठी लता हुई।

फिर पचोला, छः, सात, उपवास किया, बेला, तेला और चोला किया। यह सातवीं लता हुई।

इस प्रकार सात लता की एक परिपाटी हुई।

इसमें आठ मास और पांच दिन लगे। जिनमें उनपचास (४९) दिन पारणे के और छः मास सोलह दिन (१९६ दिन) तपस्या के हुए। इसकी प्रथम परिपाटी में पारणों में विगय का सेवन वर्जित नहीं था। दूसरी परिपाटी में पारणे में विगय का त्याग किया। तीसरी परिपाटी में लेप मात्र का भी त्याग कर दिया और चौथी परिपाटी में, पारणे में आयम्बिल किया।

चारों परिपाटियों को पूर्ण करने में दो वर्ष, आठ मास और बीस (९८०) दिन लगे। उसने इस तप का (सूत्रोक्त) विधि से आराधन किया। यावत् सिद्ध गति प्राप्त की। (सातवां अध्ययन समाप्त)

Chapter 7

Maxim 13 :

Likewise the life-sketch of queen *Vīrakṛṣṇā* should be known. She was also consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika.* She also accepted consecration and with the permission of *Āryā Candanabālā* practised great fourfold (*Mahāsar vatobhadra*) penance.

The method of this penance is like this–

First of all she observed one day fast then two days' fast and in this order three days', four days', five days', six days' and seven days' fast penance observed.

It became first branch.

Then observed four days' fast, took meals and further in this order observed–five days', six days', seven days', one day', two days' and three days' fast penance.

It became second branch.

Then she observed seven days' fast took meals and in this order observed–one day, two days', three days', four days', five days', and six days' fast.

It made third branch.

Then observed three days' fast, took meals and in the aforesaid order she observed four days', five days', six days' seven days', one day and two days' fast,

It is fourth branch.

Then in aforesaid order practising fast penance and in between taking meals observed–six days', seven days', one day, two days', three days', four days' and five days' penance.

It is fifth branch

Then practised two days', three days', four days', five days', six days', seven days', and one day' fast.

It is sixth branch

Then observed five days', six days', seven days', one day', two days', three days' and four days' fast

This is seventh branch.

Thus seven branches make one series.

This first series completed in eight months and five days. Among them she took meals on fortynine days and penanced one hundred ninetysix days. During this first series *vigayas* were not avoided. while taking meals. Taking meals in second series *vigayas* were avoided, in third series even without the smearing of *vigayas* and in fourth taking of *āyambila* gruel.

In completion of all the four series she took the time period of two years eight months and twenty days (980 days). She practised this penance according to the schedule prescribed by *sūtras* in proper way and in the end of life beatified.

[Seventh chapter consumed]

आठवाँ अध्ययन

सूत्र १४ :

एवं रामकण्हा वि । णवरं भद्दोत्तरपडिमं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ, तं जहा—

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-

पढमा लया ।

राम कृष्णाः भद्रोत्तर प्रतिमा

सूत्र १४ :

रामकृष्णा आर्या का चरित्र भी इसी प्रकार है। यह भी श्रेणिक राजा की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी। दीक्षा ली और आर्या चन्दनबाला की आज्ञा प्राप्त कर "भद्रोत्तर प्रतिमा" तप किया। (भद्रोत्तर प्रतिमा का अर्थ है–भद्र-कल्याण की प्रदाता, उत्तर-प्रधान। यह प्रतिमा परम कल्याणप्रद होने से भद्रोत्तर प्रतिमा कही जाती है।) उसकी विधि इस प्रकार है–

सर्वप्रथम पचोला किया। पारणा किया। फिर क्रमशः छः किये, पारणा किया, पिर क्रमशः सात, आठ और नौ किये। प्रथम परिपाटी के सभी पारणों में विगयों का सेवन वर्जित नहीं था। यह प्रथम लता हुई।

Chapter 8

Rāmakṛṣṇā : Bhadrottara firm resolution

Maxim 14 :

The life sketch of *Rāmakṛṣṇā Devī* is also similar as aforesaid in previous chapters. She also was the consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*. She accepted consecration and by the permission of *Āryaā Candanabālā*, practised *Bhadrottara Pratimā* penance. In *Bhadrottara Pratimā* the word *Bhadrottara* composed by two words–*Bhadra* and *uttara*, *Bhadra* means welfare and *uttara* denotes chief. Thus the whole word *Bhadrottara* means–giver of chief and utmost welfare or salvation to the soul. That is as follows–

First of all she observed five days' fast, took meal. Then observed six days' fast, took meal; then seven, eight and nine days' fast, took meals.

It is first branch.

सूत्र १५ :

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
बीया लया ।

बीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
तइया लया ।

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-
चउत्थी लया ।

अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता-

पंचमी लया ।

एक्काए कालो छम्मासा वीसा य दिवसा । चउण्हं दो वरिसा दो मासा वीसं य दिवसा । सेसं तहेव जहा काली जाव सिद्धा ।

सूत्र १५ :

फिर सात, आठ, नौ, पाँच और छह किये । यह दूसरी लता हुई ।

फिर नौ, पाँच, छह, सात और आठ उपवास किये । यह तीसरी लता हुई ।

फिर छह, सात, आठ, नौ और पाँच उपवास किये । यह चौथी लता हुई ।

फिर आठ, नौ, पांच, छह और सात किये । यह पांचवीं लता हुई ।

इस तरह पांचों लताओं की एक परिपाटी हुई । ऐसी चार परिपाटियाँ इस तप में होती हैं । एक परिपाटी में छह मास और बीस दिन लगे एवं चारों परिपाटियों में दो वर्ष, दो मास और बीस दिन लगे ।

रामकृष्णा आर्या भी काली आर्या के समान सभी कर्मों का क्षय करके सिद्ध-पद को प्राप्त हुई । **(आठवाँ अध्ययन समाप्त)**

Maxim 15 :

Then she observed seven, eight, nine, five and six days' fast.

It was second branch.

Then she observed nine, five, six, seven, and eight fasts.

It was third branch.

Then she observed six, seven, eight, nine and five fasts.

It was fourth branch.

Then she observed eight, nine, five, six and seven fasts.

It was fifth branch.

All these five branches made a series. Such four series are in this penance. One series took six months and twenty days. So all the four series completed in two years, two months and twenty days.

During first series *vigayas* were not renounced in meels, in second *vigayas* were avoided, in third even without smearing of *vigayas* and in fourth taking *āyambila* gruel.

Āryā Rāmakṛṣṇā practised this penance in due order. Like *Āryā Kāḷī* exhausting all *karmas*, she beatified.

[Eighth chapter consumed]

नवम अध्ययन

सूत्र १६ :

एवं पिउसेणकण्हा वि । णवरं, मुत्तावलिं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ । तं जहा—

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

छट्ठं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

अट्ठमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

दुवालसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउद्दसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
सोलसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठारसमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउवीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
छव्वीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
अट्ठावीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता
चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चोत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

बत्तीसइमं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ, पारित्ता

एवं ओसारेइ जाव चउत्थं करेइ, करित्ता सव्वकामगुणियं पारेइ। एक्काए कालो एक्कारस मासा पण्णरस य दिवसा। चउण्हं तिण्णि वरिसा दस य मासा। सेसं तहेव जाव सिद्धा।

अध्ययन ९

मुक्तावली तप-आराधना

सूत्र १६ :

इसी प्रकार आर्या पितृसेनकृष्णा का वर्णन जानना चाहिये। वह राजा श्रेणिक की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी। इन्होंने दीक्षा अंगीकार की और आर्या चन्दनबाला की आज्ञा लेकर मुक्तावली तप किया। इसकी विधि इस प्रकार है–

सर्वप्रथम उपवास किया। पारणा किया। (इसकी भी पहली परिपाटी में पारणों में विगयों का सेवन वर्जित नहीं है।) फिर बेला किया। पारणा किया। फिर उपवास किया। पारणा किया। फिर तेला किया। इस प्रकार बीच में एक-एक उपवास करती हुई पितृसेन कृष्णा आर्या पन्द्रह उपवास तक बढ़ी। फिर उपवास। बाद में सोलह। सोलह के बाद उपवास और फिर उपवास किया।

फिर इसी प्रकार पश्चानुपूर्वी से अर्थात् आगे बढ़े, फिर पीछे आये, फिर आगे बढ़े इस प्रकार मध्य में एक-एक उपवास करती हुई जिस प्रकार बढ़ी थी, उसी प्रकार पन्द्रह उपवास से एक उपवास तक क्रम से उतरी। इस प्रकार मुक्तावली तप की एक परिपाटी समाप्त हुई।

काली आर्या के समान इसकी चारों परिपाटियाँ पूर्ण कीं । एक परिपाटी में ग्यारह महीने और पन्द्रह दिन लगे और चारों परिपाटियों में तीन वर्ष और दस महीने लगे । इसमें ११४० दिन तप के और २४० दिन पारणा के हुए । अन्त में संलेखना संथारा किया और समस्त कर्मों का क्षय करके सिद्ध पद को प्राप्त हुई ।

Chpater 9

Pitrasenakṛṣṇā : Propiliation of Muktāvalī Penance

Maxim 16 :

So also the description of *Pitrasenakṛṣṇā*. She also was the consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*. She accepted consecration and propiliated *Muktāvalī* penance with the permission of *Āryā Candanabālā*. That is as follows–

First of all she observed one day' fast then took meals; (in this first series *vigayas* are not excluded in meals) then she observed three days' fast, took meals; then one day fast, took meals; then three days' fast. In this way, observing one day' fast in between *Āryā Pitrasenakṛṣṇā* ascended upto fifteen days' fast then one day fast, again sixteen days' fast and after it, again sixteen days' fast, one day' fast and then again she observed one day' fast.

Then, likewise, according to *Paścānupūrvī* (i.e. to go forward and then come backward and then again to go forward) and in between observing one day' fast, as she ascended, in the same way descended from fifteen days' fast to one day' fast in due order.

Thus completed one series of *Muktāvalī* penance.

Like *Kālī Āryā*, she completed four series of this fast penance.

One series of this penance took eleven months and fifteen days to complete. So four series were completed in three

years and ten months. Among them eleven hundred forty (1140) days of penance and two hundred forty days of taking meals.

In the end she accepted *saṁlekhanā–saṁthūrū* and emancipated.

विवेचन

मुक्तावली शब्द का अर्थ है–मोतियों का हार। जिस प्रकार मोतियों का हार बनाते समय उन मोतियों की स्थापना की जाती है, उसी प्रकार जिस तप में उपवासों की स्थापना की जाए उस तप को मुक्तावली तप कहते हैं। स्पष्टता हेतु चित्र देखिये। **(नौवाँ अध्ययन समाप्त)**

Elucidation

The word *Muktāvalī* means necklace of pearls. As pearls are established while preparing a necklace, in the same way fasts are established in which penance, that is called *Muktāvalī* penance

For clear understanding see the illustration. **[Nineth chpter consumed]**

दसम अध्ययन

सूत्र १७ :

एवं महासेणकण्हा वि। णवरं आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं उवसंपज्जित्ताणं विहरइ। तंजहा–

आयंबिलं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ करित्ता

बे आयंबिलाइं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता

तिण्णि आयंबिलाइं करेइ करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता

चत्तारि आयंबिलाइं करेइ करित्ता चउत्थं करेइ करित्ता

पंच आयंबिलाइं करेइ करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता

छ आयंबिलाइं करेइ करित्ता चउत्थं करेइ, करित्ता

एकोत्तरियाए वुड्ढीए आयंबिलाइं वड्ढंती, चउत्थंतरियाइं जाव आयंबिलसयं करेइ, करित्ता चउत्थं करेइ ।

तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा आयंबिलवड्ढमाणं तवोकम्मं चोद्दसेहिं वासेहिं तिहि य मासेहिं वीसहि य अहोरत्तेहिं अहासुत्तं जाव सम्मं काएणं फासेइ जाव ।

आराहित्ता, जेणेव अज्जचंदणा अज्जा तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता अज्जचंदणं अज्जं वंदइ णमंसइ, वंदित्ता णमंसित्ता बहूहिं चउत्थेहिं जाव भावेमाणी विहरइ ।

तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा तेणं ओरालेणं जाव उवसोभेमाणी उवसोभेमाणी चिट्ठइ ।

तए णं तीसे महासेणकण्हाए अज्जाए अण्णया कयाइं पुव्वरत्तावरत्तकाले चिंता जहा खंदयस्स जाव अज्जचंदणं अज्जं आपुच्छइ जाव संलेहणा । कालं अणवकंखमाणी विहरइ ।

तए णं सा महासेणकण्हा अज्जा अज्जचंदणा अज्जाए अंतिए सामाइयमाइयाइं एक्कारसअंगाइं अहिज्जित्ता बहुपडिपुण्णाइं सत्तरस वासाइं परियायं पालइत्ता मासियाए संलेहणाए अप्पाणं झूसित्ता सट्ठिं भत्ताइं अणसणाए छेदित्ता जस्सट्ठाए कीरइ जाव तमट्ठं आराहेइ । चरिम उस्सास-णीसासेहिं सिद्धा बुद्धा ।

अट्ठ य वासा आदी, एकोत्तरियाए जाव सत्तरस ।
एसो खलु परियाओ सेणियभज्जाण णायव्वो ॥

महासेनकृष्णाः आयम्बिल वर्धमान तप

सूत्र १७ :

इसी प्रकार महासेनकृष्णा का वर्णन भी जानना चाहिये । वह राजा श्रेणिक की रानी और कोणिक राजा की छोटी माता थी। दीक्षा ली और आर्या

चन्दनबाला की आज्ञा पाकर उसने "आयम्बिल-वर्द्धमान" नामक तप किया। इसकी विधि इस प्रकार है--

सर्वप्रथम आयम्बिल किया । दूसरे दिन उपवास किया । फिर दो आयम्बिल किये । फिर उपवास किया । फिर तीन आयम्बिल किये । फिर उपवास किया । फिर चार आयम्बिल किये, फिर उपवास किया तथा पांच आयम्बिल किये । फिर उपवास किया । फिर छः आयम्बिल किये । फिर उपवास किया । इस प्रकार एक-एक आयम्बिल बढ़ाते हुए मध्य में एक-एक उपवास करते हुए एक सौ आयम्बिल तक किये । फिर उपवास किया । इस प्रकार आयम्बिल वर्द्धमान नामक तप पूरा किया ।

इस प्रकार महासेनकृष्णा आर्या ने चौदह वर्ष, तीन मास और बीस दिन में "आयम्बिल वर्द्धमान" नामक तप का सूत्रोक्त विधि से आराधन किया। इसमें आयम्बिल के पांच हजार पचास दिन तथा उपवास के एक सौ दिन होते हैं। इस तप में चढ़ना ही है, उतरना नहीं । इसमें १४ वर्ष दस दिन आयम्बिल के व १०० दिन उपवास के हैं ।

इसके बाद महासेनकृष्णा आर्या, आर्या चन्दनबाला के पास आई और वंदन नमस्कार किया । इसके बाद उपवास आदि बहुत-सी तपश्चर्या करती हुई अपनी आत्मा को भावित करती हुई विचरने लगी । उन कठिन तपस्याओं के कारण वह अत्यन्त दुर्बल हो गई, तथापि आन्तरिक तप-तेज के कारण वह अत्यन्त शोभित होने लगी ।

एक दिन पिछली रात्रि के समय महासेनकृष्णा आर्या ने स्कन्दक के समान चिन्तन किया--मेरा शरीर तपस्या से कृश हो रहा है, तथापि अभी तक मुझमें उत्थान, बल, वीर्य आदि हैं । इसलिये कल सूर्योदय होते ही आर्या चन्दनबाला के पास जाकर उनसे आज्ञा लेकर संथारा करूँ । तदनुसार दूसरे दिन सूर्योदय होते ही आर्या चन्दनबाला के पास जाकर वन्दन नमस्कार करके संथारे के लिये आज्ञा मांगी । आज्ञा लेकर संथारा ग्रहण किया और मरण की आकांक्षा नहीं करती हुई, धर्मध्यान में तल्लीन रहने लगी ।

महासेनकृष्णा आर्या ने चन्दनबाला आर्या से सामायिक आदि (छः आवश्यकों के साथ) ग्यारह अंगों का अध्ययन किया। सत्तरह वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया तथा एक मास की संलेखना से आत्मा को भावित करती हुई, साठ भक्तों के अनशन से छेदित कर, अन्तिम श्वासोच्छ्वास में अपने सम्पूर्ण कर्मों का क्षय कर सिद्ध बुद्ध हुई अर्थात् मोक्ष प्राप्त किया।

इन दस आर्याओं में प्रथम काली आर्या ने आठ वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया। दूसरी सुकाली आर्या ने नौ वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया। इस प्रकार क्रमशः उत्तरोत्तर एक-एक रानी के चारित्र पर्याय में एक-एक वर्ष की वृद्धि होती गई। अन्तिम दसवीं रानी महासेनकृष्णा आर्या ने सतरह वर्ष तक चारित्र पर्याय का पालन किया। ये सभी राजा श्रेणिक की रानियां तथा कोणिक राजा की छोटी माताएँ थीं।

(दसवां अध्ययन समाप्त)

Chapter 10

Mahāsenakṛṣṇā Āyambila Vardhamāna Tapa

Maxim 17 :

Same is the description of queen *Mahāsenakṛṣṇā*. She also was the consort of king *Śreṇika* and younger step mother of king *Koṇika*. She accepted consecration and with the permission of *Āryā Candanabālā*, she practised *Āyambila Vardhamāna* penance. That is as follows–

First of all she observed one *āyambila*, next day one fast; then two *āyambilas* and next day one fast, then three *āyambilas* and next day fast, then four *āyambilas*, next day fast, then five *āyambilas*, next day fast, then six *āyambilas* and next day fast; in this way increasing one *āyambila* and in between fast, she practised one hundred *āyambilas* and then fast. Thus she fulfilled *Āambila Vardhamāna* penance.

Thus *Āryā Mahāsenakṛṣṇā* completed *Āyambila Vardhamāna* penance in fourteen years, three months and twenty days according to the schedule prescribed by *sūtras* and in proper manner. Among this, the days of *āyambilas* are 5050 and that of fasts are 100 days. Thus total days are 5150. In this penance, there is only ascending; and no descending. In this penance fourteen years and ten days are of *āyambila* and hundred days are of fast.

After this *Āryā Mahāsenakṛṣṇā* went to *Āryā Candanabālā* and bowed down her. Then she (*Āryā Mahāsenakṛṣṇā*) began to wander engrossing her soul by many types of penances e.g., fast etc. She became too weak due to those rigorous penances but she seemed lustrous by the internal flame of austerities.

Once, in the last hours of night, like *Skandaka, Āryā Mahāsenakṛṣṇā* pondered deeply–though my body has become lean, thin and reduced, yet, until, in my this body are *utthāna, bala, vīrya* etc., it would be proper for me that to-morrow, as the sun shine with lustre, I go to *Āryā Candanabālā* and taking her permission accept *saṁthārā*. Accordingly, next day, as the sun rose up she went to *Āryā Candanabālā*, bowed down and respected her, and asked her permission for *saṁthārā*. Getting permission she accepted *saṁthārā* and without desire of death, she engrossed herself in auspicious-religious meditation.

Āryā Mahāsenakṛṣṇā learnt with *Sāmāyika* (six essentials) etc. eleven holy scriptures (*aṅgas*) from *Āryā Candanabālā*, practised nun-conduct upto seventeen years and engrossing her soul by one month's *saṅthārā*, cutting off sixty meals, exhausting all *karmas*, with her last breath became emancipated i.e., attained salvation.

Among these ten *āryās*, the first *Āryā Kālī* practised nun-conduct upto eight years; the second *Āryā Sukālī* upto nine years. In this way, one after another, consecration

period increased by one year of every queen (*āryā*). Last tenth *Āryā Mahāsenakṛṣṇā* observed consecration period for seventeen years. All these were the consorts of king *Śreṇika* and younger step mothers of king *Koṇika*.

[Tenth chapter consumed]

उपसंहार

एवं खलु जंबू ! समणेणं भगवया महावीरेणं आइगरेणं जाव संपत्तेण अट्ठमस्स अंगस्स अंतगडदसाणं अयमट्ठे पण्णत्ते त्ति बेमि ।

अंतगडदसाणं अंगस्स एगो सुयक्खंधो । अट्ठवग्गा । अट्ठसु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति ।

तत्थ पढमबितियवग्गे दस-दस उद्देसगा । तइयवग्गे तेरस उद्देसगा । चउत्थ-पंचम वग्गे दस-दस उद्देसगा । छट्ठ वग्गे सोलस उद्देसगा । सत्तमवग्गे तेरस उद्देसगा, अट्ठमवग्गे दस उद्देसगा । सेसं जहा णायाधम्मकहाणं ।

सिरि अंतगडदसांग सुत्तं समत्तं ।

हे जम्बू ! अपने शासन की अपेक्षा से धर्म की आदि करने वाले श्रमण भगवान महावीर स्वामी–जो मोक्ष को प्राप्त हैं, उन्होंने आठवें अंग अन्तगडदशा सूत्र का यह भाव प्ररूपित किया है । भगवान् से जैसा मैंने सुना, उसी प्रकार तुम्हें कहा है ।

इस अन्तकृद्दशा सूत्र में एक श्रुतस्कन्ध है, और आठ वर्ग हैं । आठ दिनों में इसका वाचन होता है ।

इसमें प्रथम और दूसरे वर्ग के दस-दस अध्ययन हैं । तीसरे वर्ग में तेरह अध्ययन (उद्देशक) हैं । चौथे और पांचवें वर्ग में दस-दस अध्ययन हैं । छठे वर्ग में सोलह अध्ययन हैं । सातवें वर्ग में तेरह और आठवें वर्ग में दस अध्ययन हैं ।

शेष वर्णन ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र में है ।

नोट–उपलब्ध अन्तकृद्दशा सूत्र के दूसरे वर्ग में आठ उद्देशक ही हैं। संभवतः वाचना भेद से अथवा लिपि प्रमाद से (लेखक की स्खलना से) दस उद्देशक लिख दिये गये हैं। यह निर्णय केवलीगम्य है।

Conclusion

O *Jambū* ! With the point of view of his own religious order, the beginner of religion, *Śramaṇa Bhagawāna Mahāvīra Swāmī*. who is now salvated, has expressed this subject matter of eighth *aṅga–Antakṛd-daśā Sūtra*. As I listened from *Bhagawāna*, so I told you.

Antakṛddaśā Sūtra has one Book (*Śrutaskandha)* and eight sections. These are read in eight days.

Among these in first and second sections there are ten chapters in each. In third section thirteen chapters (*uddeśakas*). Fourth and fifth sections contain ten chapters each. In sixth section sixteen chapters, in seventh section thirteen and in eighth section ten chapters.

Rest description is in *Jñātādharmakathāṅga sūtra*.

[Eighth section completed.

[Antakṛd-daśa Sūtra ended]

Note–There are only eight chapters/*uddeśakas* in second section of *Antakṛid-daśā sūtra*, which we get in present time. It is possible that either due to difference of reading or carelessness of scripter, may be written ten chapters. Only omniscient can decide the fact.

आगमों का अनध्यायकाल

(स्व. आचार्यप्रवर श्री आत्मारामजी म. द्वारा सम्पादित नन्दीसूत्र से उद्‌धृत)

स्वाध्याय के लिए आगमों मे जो समय बताया गया है, उसी समय शास्त्रो का स्वाध्याय करना चाहिए अनध्यायकाल में स्वाध्याय वर्जित है।

मनुस्मृति आदि स्मृतियों में भी अनध्यायकाल का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वैदिक लोग भी वेद के अनध्यायों का उल्लेख करते हैं। इसी प्रकार अन्य आर्ष ग्रन्थो का भी अनध्याय माना जाता है जैनागम भी सर्वज्ञोक्त, देवाधिष्ठित तथा स्वरविद्या संयुक्त होने के कारण, इनका भी आगमो मे अनध्यायकाल वर्णित किया गया है, जैसे कि–

दसविहे अंतलिक्खिए असज्झाए पण्णत्ते, तं जहा–उक्कावाते, दिसिदाघे, गज्जिते, विज्जुते, निग्घाते जुवते, जक्खालित्ते धूमिता, महिता, रयउग्घाते।

दसविहे ओरालिए असज्झाए, तं जहा–अट्ठी, मंसं, सोणिते, असुतिसामंते, सुसाणसामंते, चंदोवराते सूरोवराते, पडणे, रायवुग्गहे, उवस्सयस्स अंतो ओरालिए सरीरगे। –स्थानाङ्गसूत्र, स्थान १०

नो कप्पति निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा चउहिं महापाडिवएहि सज्झायं करित्तए, तं जहा–आसाढपाडिवए इंदमहपाडिवए, कत्तिअपाडिवए सुगिम्हपाडिवए।

नो कप्पइ निग्गंथाण वा निग्गंथीण वा, चउहिं संझाहिं सज्झायं करेत्तए, तं जहा–पढिमाते, पच्छिमाते मज्झण्हे, अड्ढरत्ते।

कप्पइ निग्गंथाणं वा, निग्गंथीण वा, चाउक्काल सज्झायं करेत्तए, तं जहा–पुव्वण्हे अवरण्हे, पओसे पच्चूसे। –स्थानाङ्गसूत्र, स्थान ४, उद्देश २

उपरोक्त सूत्रपाठ अनुसार, दस आकाश से सम्बन्धित, दस औदारिक शरीर से सम्बन्धित, चार महाप्रतिपदा, चार महाप्रतिपदा की पूर्णिमा और चार सन्ध्या, इस प्रकार बत्तीस अनध्याय माने गए हैं जिनका संक्षेप में निम्न प्रकार से वर्णन है, जैसे–

आकाश सम्बन्धी दस अनध्याय

१. **उल्कापात-तारापतन**–यदि महत् तारापतन हुआ है तो एक प्रहर पर्यन्त शास्त्र स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

२. **दिग्दाह**–जब तक दिशा रक्तवर्ण की हो अर्थात् ऐसा मालूम पड़े कि दिशा में आग सी लगी है, तब भी स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

३. **गर्जित**–बादलों के गर्जन पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

४. **विद्युत**–बिजली चमकने पर एक प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय न करे।

किन्तु गर्जन और विद्युत का अस्वाध्याय चातुर्मास में नही मानना चाहिए। क्योंकि वह गर्जन और विद्युत प्रायः ऋतु स्वभाव से ही होता है। अतः आर्द्रा में स्वाति नक्षत्र पर्यन्त अनध्याय नहीं माना जाता।

५. **निर्घात**–बिना बादल के आकाश में व्यन्तरादिकृत घोर गर्जन होने पर, या बादलों सहित आकाश में कड़कने पर दो प्रहर तक स्वाध्याय काल है।

६. **यूपक**–शुक्ल पक्ष मे प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया, को सन्ध्या चन्द्रप्रभा के मिलने को यूपक कहा जाता है। इन दिनों प्रहर रात्रि पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

७. **यक्षादीप्त**–कभी किसी दिशा मे बिजली चमकने जैसा, थोड़े-थोड़े समय पीछे जो प्रकाश होता है वह यक्षादीप्त कहलाता है। अतः आकाश में जब तक यक्षाकार दीखता रहे तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

८. **धूमिका कृष्ण**–कार्तिक से लेकर माघ तक का समय मेघों का गर्भमास होता है। इसमें धूम्र वर्ण की सूक्ष्म जलरूप धुध पड़ती है। वह धूमिका-कृष्ण कहलाती है। जब तक यह धुंध पड़ती रहे, तब तक स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

९. **मिहिकाश्वेत**–शीतकाल मे श्वेत वर्ण का सूक्ष्म जलरूप धुंध मिहिका कहलाती है। जब तक यह गिरती रहे, तब तक अस्वाध्यायकाल है।

१०. **रज उद्घात**–वायु के कारण आकाश में चारों ओर धूलि छा जाती है। जब तक यह धूलि फैली रहती है। स्वाध्याय नही करना चाहिए।

उपरोक्त दस कारण आकाश सम्बन्धी अस्वाध्याय है।

औदारिक सम्बन्धी दस अनध्याय

११-१२-१३. **हड्डी**, मास और रुधिर–पचेन्द्रिय तिर्यंच की हड्डी माँस और रुधिर यदि सामने दिखाई दे, तो जब तक वहाँ से यह वस्तुएँ उठाई न जाएँ तब तक अस्वाध्याय है। वृत्तिकार आस पास के ६०० हाथ तक इन वस्तुओं के होने पर अस्वाध्याय मानते हैं।

इसी प्रकार मनुष्य सम्बन्धी अस्थि, मांस और रुधिर का भी अनध्याय माना जाता है। विशेषता इतनी है कि इनका अस्वाध्याय सौ हाथ तक तथा एक दिन रात का होता है। स्त्री के मासिक धर्म का अस्वाध्याय तीन दिन तक। बालक एवं बालिका के जन्म का अस्वाध्याय क्रमश· सात एव आठ दिन पर्यन्त का माना जाता है।

१४. **अशुचि**–मल-मूत्र सामने दिखाई देने तक अस्वाध्याय है।

१५. **श्मशान**–श्मशानभूमि के चारों ओर सौ-सौ हाथ पर्यन्त अस्वाध्याय माना जाता है।

१६. **चन्द्रग्रहण**–चन्द्रग्रहण होने पर जघन्य आठ, मध्यम बारह और उत्कृष्ट सोलह प्रहर पर्यन्त स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

१७. **सूर्यग्रहण**–सूर्यग्रहण होने पर भी क्रशः आठ, बारह और सोलह प्रहर पर्यन्त अस्वाध्यायकाल माना गया है।

१८. **पतन**–किसी बड़े मान्य राजा अथवा राष्ट्र पुरुष का निधन होने पर जब तक उसका दाहसंस्कार न हो तब तक स्वाध्याय न करना चाहिए। अथवा जब तक दूसरा अधिकारी सत्तारूढ़ न हो तब तक शनैः-शनैः स्वाध्याय करना चाहिए।

१९. राजव्युद्ग्रह–समीपस्थ राजाओं में परस्पर युद्ध होने पर जब तक शान्ति न हो जाए, तब तक उसके पश्चात् भी एक दिन-रात्रि स्वाध्याय नहीं करें।

२०. औदारिक शरीर–उपाश्रय के भीतर पंचेन्द्रिय जीव का वध हो जाने पर जब तक कलेवर पड़ा रहे, तब तक तथा १०० साथ तक यदि निर्जीव कलेवर पडा हो तो स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

अस्वाध्याय के उपरोक्त १० कारण औदारिक शरीर सम्बन्धी कहे गये हैं।

२१-२८ चार महोत्सव और चार महाप्रतिपदा–आषाढ़पूर्णिमा, आश्विन-पूर्णिमा, कार्तिक-पूर्णिमा और चैत्र-पूर्णिमा ये चार महोत्सव हैं। इन पूर्णिमाओं के पश्चात् आने वाली प्रतिपदा को महाप्रतिपदा कहते हैं। इसमें स्वाध्याय करने का निषेध है।

२९-३२. प्रातः सायं मध्याह्न और अर्धरात्रि–प्रात. सूर्य से एक घड़ी पहिले तथा एक घड़ी पीछे। सूर्यास्त होने से एक घड़ी पहिले तथा एक घड़ी पीछे। मध्याह्न अर्थात् दोपहर में (१२ बजे) एक घड़ी आगे और एक घड़ी पीछे एवं अर्धरात्रि में भी एक घड़ी आगे तथा एक घड़ी पीछे स्वाध्याय नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार अस्वाध्याय काल टालकर दिन रात्रि में चार काल की स्वाध्याय करना चाहिए।

तपस्या काल	एक परिपाटी का काल ६ मास, ७ दिन
	चार परिपाटी का काल २ वर्ष, २८ दिन
तप के दिन	एक परिपाटी के तपोदिन ५ मास, ४ दिन
	चार परिपाटी के तपोदिन १ वर्ष, ८ मास, १६ दिन
पारणे	एक परिपाटी के पारणे ३३
	चार परिपाटी के पारणे १३२

प्रसंग · अष्टम वर्ग तृतीय अध्ययन पृष्ठ २५५ महाकाली आर्या ने इस तप की आराधना की।

१	२	३	४	५	६	७
४	५	६	७	१	२	३
७	१	२	३	४	५	६
३	४	५	६	७	१	२
६	७	१	२	३	४	५
२	३	४	५	६	७	१
५	६	७	१	२	३	४
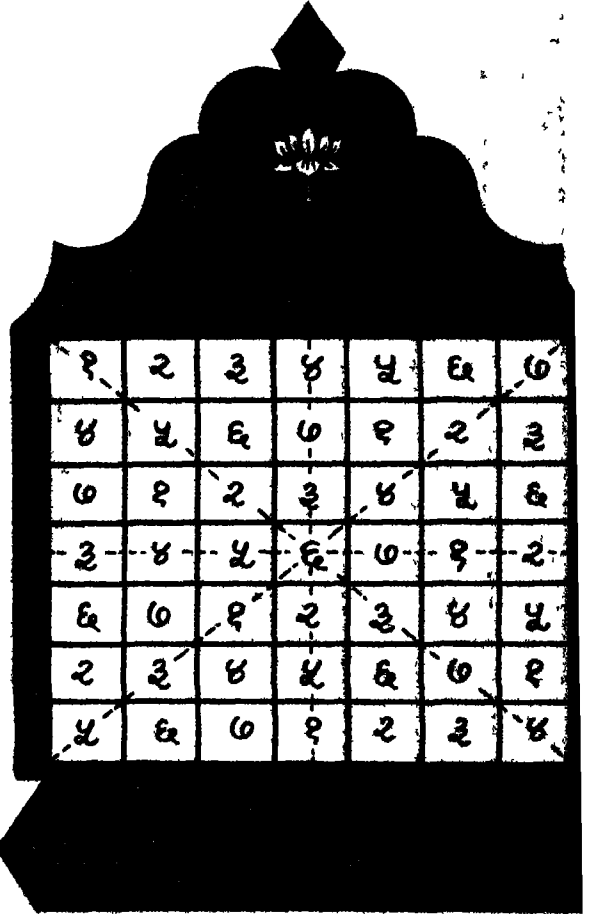
प्रसंग : वर्ग ८ अध्ययन ७ वीर कृष्णा आर्या का वर्णन

गुणरत्न संवत्सर तप

तप दिन	पारणा दिन
३२	२
३०	२
२८	२
२६	२
२४	२
३३	३
३०	३
२७	३
२४	३
२१	३
२४	४
२५	५
२४	६
२४	८
२०	१०
१५	१५

सर्व-दिन

तप दिन	४०७
पारणा दिन	७३
सर्वदिन	४८०

१ वर्ष, ४ मास, = १६ महीने

प्रसंग : प्रथम वर्ग, प्रथम अध्ययन पृष्ठ २८-३३ गौतम अणगार का वर्णन।

रत्नावली
तपस्या काल
एक परिपाटी का काल १ वर्ष, ३ मास, २२ दिन
चार परिपाटी का काल ५ वर्ष, २ मास, २८ दिन
तप के दिन
एक परिपाटी के तपोदिन १ वर्ष, –२४ दिन
चार परिपाटी के तपोदिन ४ वर्ष, ३ मास, ६ दिन
पारणे
एक परिपाटी के पारणे ८८
चार परिपाटी के पारणे ३५२
प्रसंग :
अष्टम वर्ग · प्रथम अध्ययन पृष्ठ २४४-२४६
काली आर्या ने इस तप की आराधना की।

प्रसंग : वर्ग ८ अध्ययन ९ पितृसेनकृष्णा आर्या का वर्णन
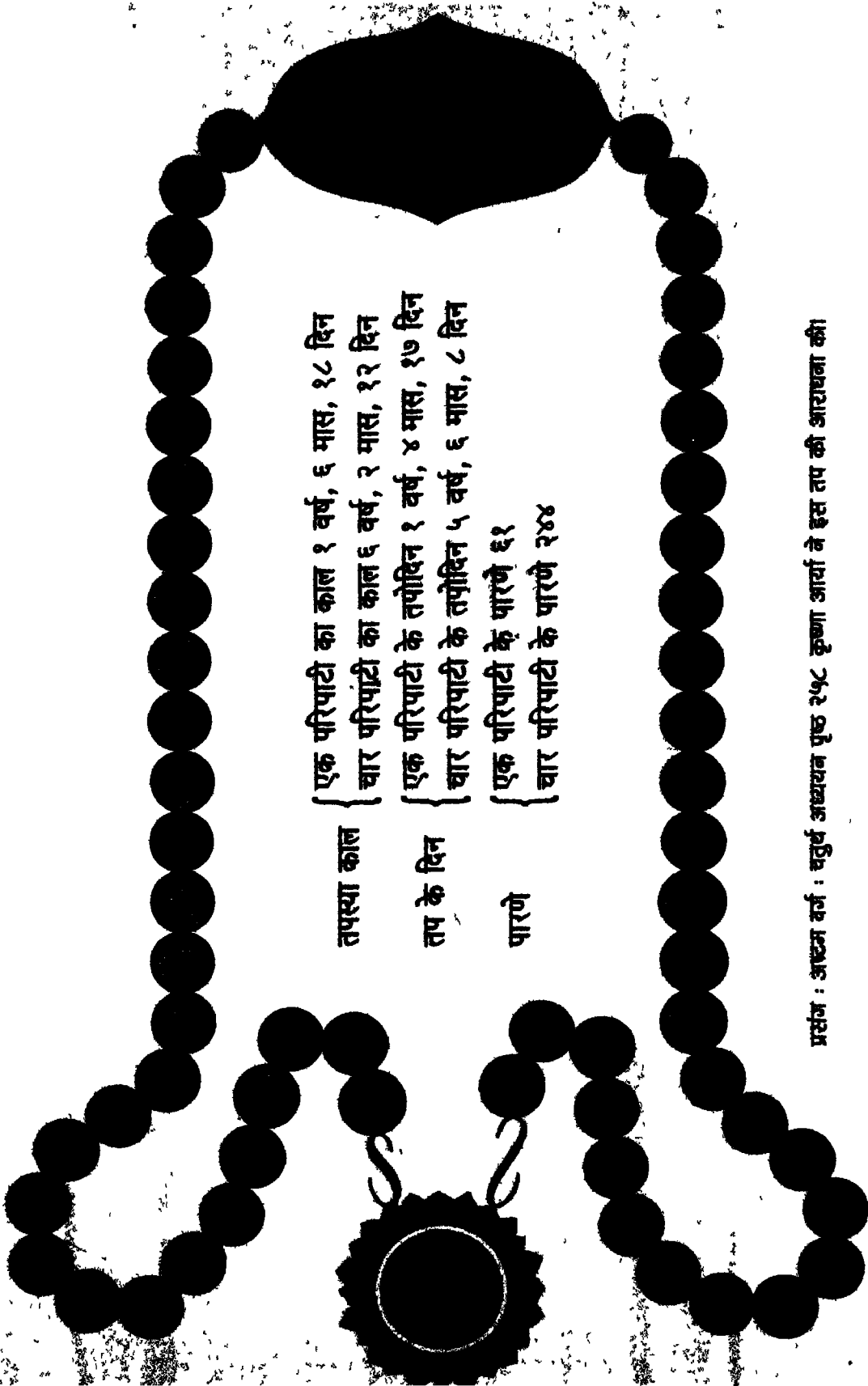
प्रसंग : अष्टम वर्ग : चतुर्थ अध्ययन पृष्ठ २५८ कृष्णा आर्या ने इस तप की आराधना की।

१	१	१	१	१	१
२	२	२	२	२	२
३	३	३	३	३	३
४	४	४	४	४	४
५	५	५	५	५	५
६	६	६	६	६	६
७	७	७	७	७	७

प्रसंग : अष्टम वर्ग पंचम अध्ययन पृष्ठ २६१
सुकृष्णा आर्या ने इस तप की आराधना की।

प्रसंग सुकृष्णा आर्या का वर्णन

अष्ट अष्टमिका भिक्षुप्रतिमा

१	१	१	१	१	१	१	१
२	२	२	२	२	२	२	२
३	३	३	३	३	३	३	३
४	४	४	४	४	४	४	४
५	५	५	५	५	५	५	५
६	६	६	६	६	६	६	६
७	७	७	७	७	७	७	७
८	८	८	८	८	८	८	८

६४ दिवस ★ २८८ दत्तियाँ

प्रसंग : सुकृष्णा आर्या का वर्णन

१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२	२	२	२	२	२	२	२	२	२
३	३	३	३	३	३	३	३	३	३
४	४	४	४	४	४	४	४	४	४
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
६	६	६	६	६	६	६	६	६	६
७	७	७	७	७	७	७	७	७	७
८	८	८	८	८	८	८	८	८	८
९	९	९	९	९	९	९	९	९	९
१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०	१०

प्रसंग : वर्ग ८ अध्ययन ५ सुकृष्णा आर्या का वर्णन

१	२	३	४	५
३	४	५	१	२
५	१	२	३	४
२	३	४	५	१
४	५	१	२	३
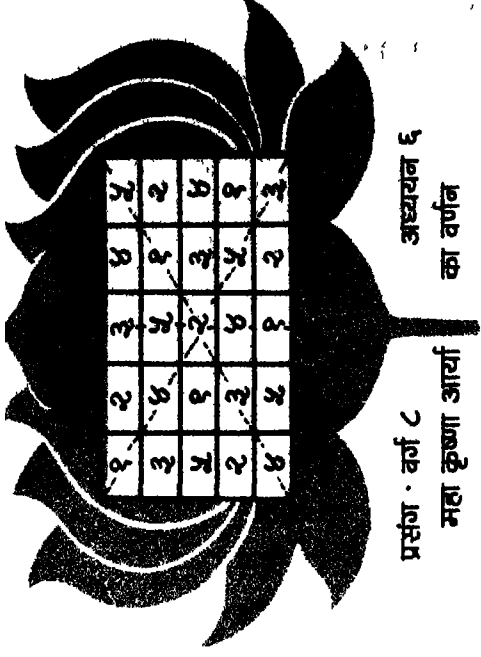
प्रसंग · वर्ग ८ महा कृष्णा आर्या अध्ययन ६ का वर्णन

भद्रोत्तर प्रतिमा

५	६	७	८	९
७	८	९	५	६
९	५	६	७	८
६	७	८	९	५
८	९	५	६	७
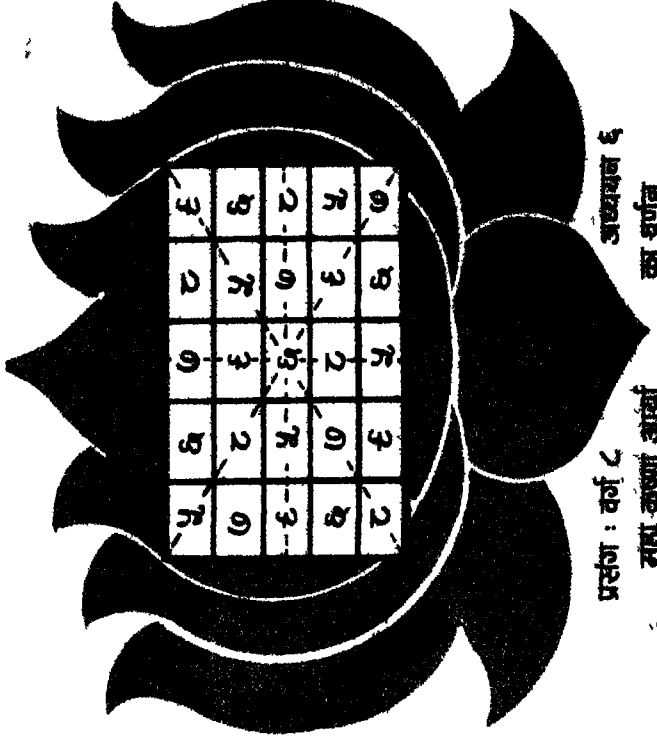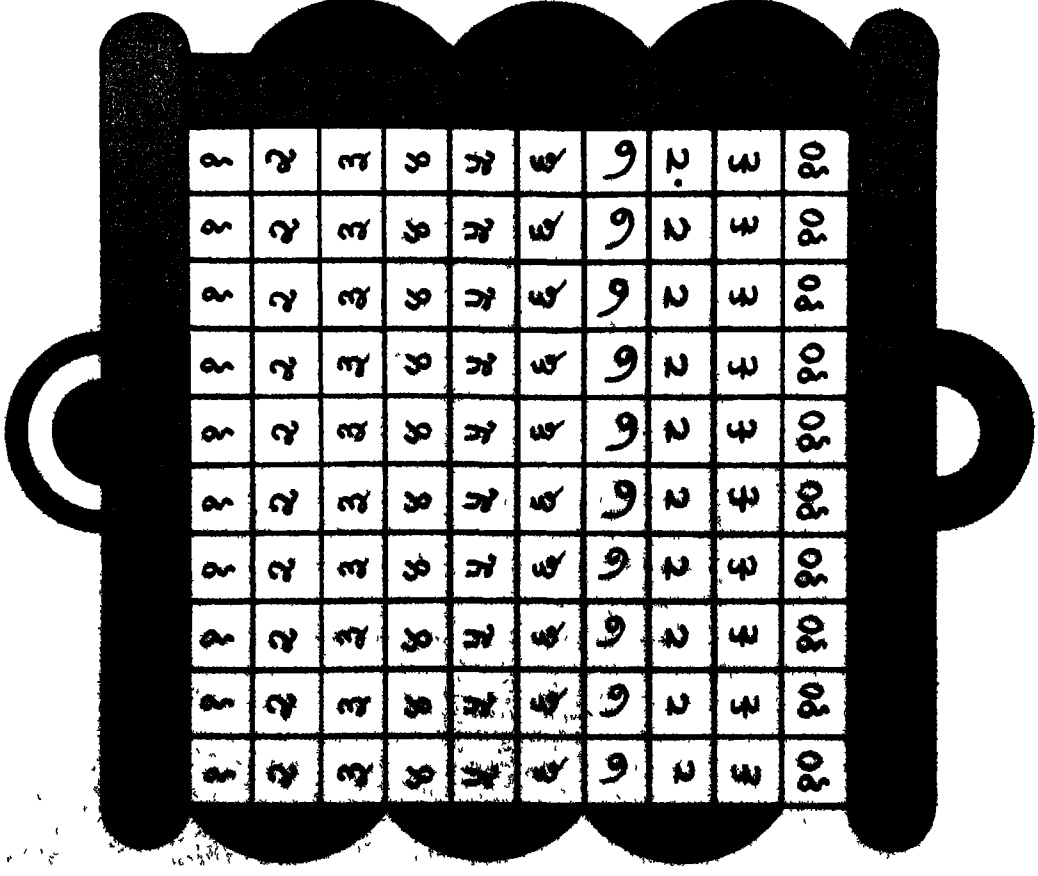
प्रसंग : वर्ग ८ महा कृष्णा आर्या अध्ययन ६ का वर्णन

कनकावली
तपस्या काल
एक परिपाटी का काल १ वर्ष, ५ मास, १२ दिन
चार परिपाटी का काल ५ वर्ष, ९ मास, १८ दिन
तप के दिन
एक परिपाटी के तपोदिन १ वर्ष, २ मास, १४ दिन
चार परिपाटी के तपोदिन ४ वर्ष, ९ मास, २६ दिन
पारणे
एक परिपाटी के पारणे ८८
चार परिपाटी के पारणे ३५२
प्रसंग : अष्टम वर्ग : द्वितीय अध्ययन पृष्ठ २५०
सुकाली आर्या ने इस तप की आराधना की।

Diacritical Letters

(Pronunciation)

Vowels (स्वर)

अ	आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	लृ	ए	ऐ	ओ	औ	अं	अः
a	ā	i	ī	u	ū	ṛ	ḷ	e	ai	o	au	ṅ, ṁ	ḥ

Consonants (व्यंजन)

क्	ख्	ग्	घ्	ङ्	च्	छ्	ज्	झ्	ञ्
k	kh	g	gh	ṅ	c	ch	j	jh	ñ
ट्	ठ्	ड्	ढ्	ण्	त्	थ्	द्	ध्	न्
ṭ	ṭh	ḍ	ḍh	ṇ	t	th	d	dh	n
प्	फ्	ब्	भ्	म्	य्	र्	ल्	व्	
p	ph	b	bh	m	y	r	l	v, w	
श्	ष्	स्	ह्	क्ष्	त्र्	ज्ञ्			
ś	ṣ	s	h	kṣ	tr	jñ			
ऽ	अइ	अउ							
ã	aï	aü							

हमारे संग्रहणीय पठनीय प्रकाशन

सचित्र श्री उत्तराध्ययन सूत्र	मूल्य ४२५/-
उत्तराध्ययन महिमा	५०/-
सचित्र श्री अन्तकृद्दशा सूत्र	४२५/-
अन्तकृद्दशा महिमा	५०/-
सचित्र श्री कल्पसूत्र (प्रेस में)	४२५/-
कल्पसूत्र महिमा (प्रेस में)	५०/-

प्राप्तिस्थान

श्री पदम प्रकाशन

नरेला मंडी, दिल्ली-४०

श्री रमेशचन्द जैन

पदम निवास

जेड. पी. I पीतमपुरा, दिल्ली-३४

दिवाकर प्रकाशन

ए-७, अवागढ़ हाऊस, अंजना सिनेमा के सामने,

एम. जी रोड, आगरा-२८२ ००२

दूरभाष : 54328, 52208, 51789